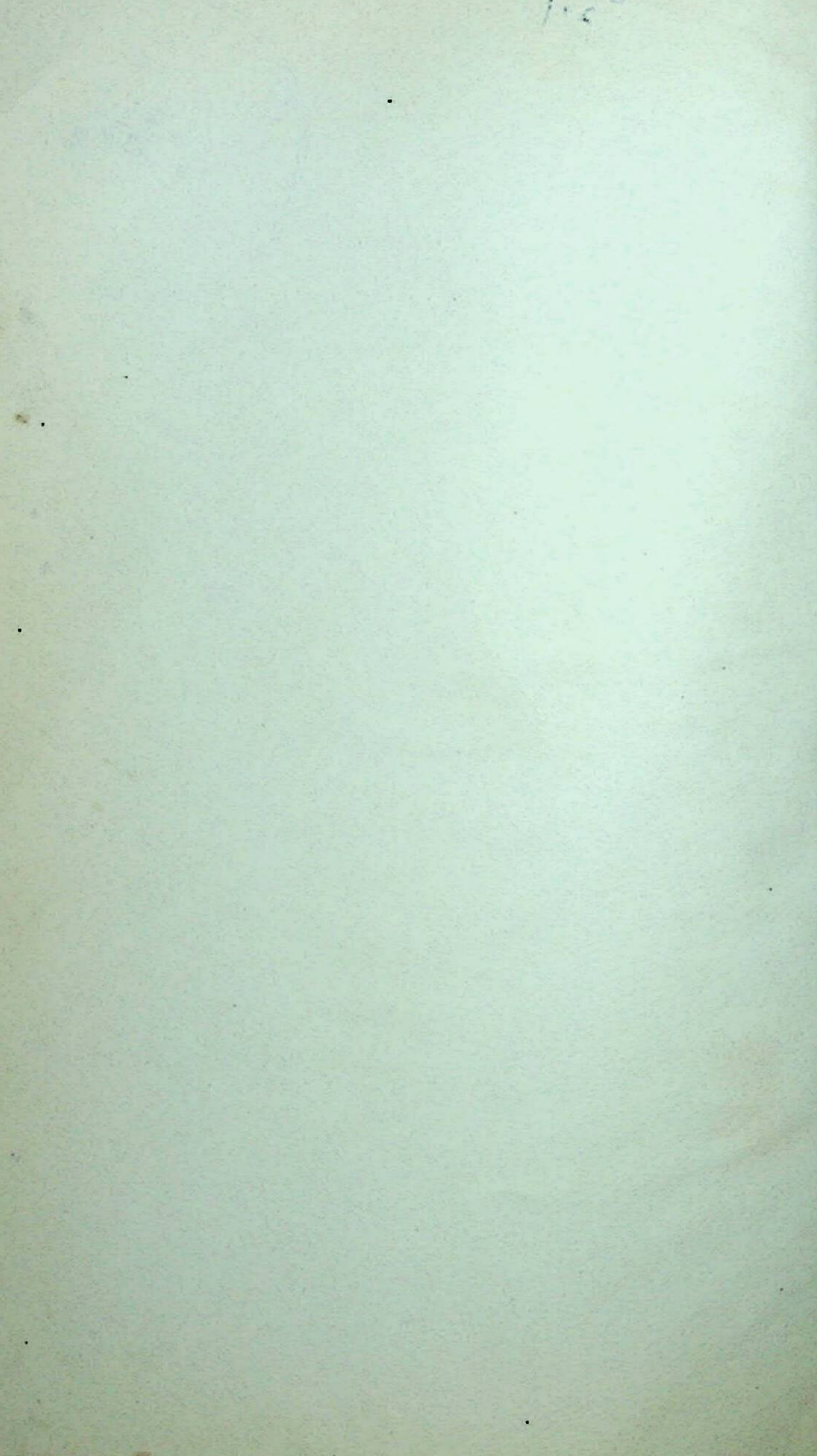
निरोगी काया

- गणपति सिंह



निरोगी काया



लेखक :- गणपति सिंह
पूर्व प्रिंसिपल
पंचायती राज ट्रेनिंग सेन्टर
फरीदाबाद (हरियाणा)



प्रथम संस्करण - १९९१
१००१ प्रतियां

पुस्तक मिलने का पता:-

लेखक:- श्री गणपति सिंह
गाँव : नवादा कोह
पो. : पाली - १२१००४
जिला : फरीदाबाद
(हरियाणा)

प्रकाशक: अमृत गुरूदेव ऐजूकेशन सोसायटी
फरीदाबाद (हरियाणा)

मुद्रक: बाली ग्राफिक्स एंड पैकेजिंग इण्डस्ट्रीज
१ई/२१-गोपी कुंज,
एन. आई. टी. फरीदाबाद-१२१००१

मूल्य - २५/- (बिना हानि लाभ)
डाक व्यय पृथक १०/-

समर्पण

पन्ना धाय गुर्जर जाति की चौहान शाखा की खींची गोत्र की महिला थी। वह कुम्भल गढ़ (राजस्थान) की रहने वाली थी। पन्ना धाय जैसी मां विश्व में आज तक पैदा नहीं हुई। पन्ना ने अपने पुत्र चन्दन सिंह को उदयसिंह के शाही वस्त्र और आभूषण पहनाकर उसी पालने में लिटा दिया था, जिसमें राजकुमार उदयसिंह लेटा हुआ था। राजकुमार उदयसिंह को अपने बेटे चन्दन सिंह के साधारण वस्त्र पहना कर नाई के हाथ सुरक्षित स्थान पर पहुंचा दिया था। बनवीर राक्षस का रूप धारण करके महल में आते ही पन्ना धाय से पूछता है उदयसिंह कहाँ है ? पन्ना धाय अपने कर्तव्य का पालन करती हुई, पालने की ओर संकेत करती है। वह राणा संग्राम सिंह के वंशज को बचाने के लिए, अपने पुत्र चंदन सिंह का बलिदान दे रही थी। कुल कलंकी, हृदयहीन, दासी पुत्र बनबीर (जो राणा संग्रामसिंह के ज्येष्ठ पुत्र विक्रमसिंह का वध करवा के मेवाड़ का राणा बन चुका था) ने राणा संग्रामसिंह के शिशु उदय सिंह का एक ही बार में तलवार से सिर धड़ से अलग कर दिया। वास्तव में उदयसिंह नहीं, चन्दन सिंह का वध हुआ था और बनवीर लौट गया।

कौन है ऐसी मां जो अपने बेटे को अपने सामने तलवार से कत्ल होता देख सकती है और वह भी स्वयं अपने बच्चे को दूसरी मां के बच्चे के बदले ? समस्त विश्व ने पन्ना जैसी मां आज तक पैदा नहीं की। यदि राजकुमार उदयसिंह, क्रूर हत्यारे बनवीर के हाथों मारे जाते तो भारत देश के गौरव, राणा प्रताप, कहां से पैदा होते ? मेवाड़ का राजवंश ही नहीं अपितु, समस्त भारत और विश्व की मातृशक्ति, पन्ना धाय के इस ऐतिहासिक वफादारी, त्याग और बलिदान के लिए जब तक सूर्य और चन्द्र रहेंगे ॠणी रहेंगे। ऐसी आदर्श मां और अद्वितीय वफादार धाय को मैं अपनी यह पुस्तक समपर्ण करते हुए, गौरव अनुभव करता हूँ।

लेखक:-

गणपति सिंह

अनुक्रम

लेखक का परिचय



श्री गणपति सिंह प्रसिद्ध शिक्षाविद्, समाजशास्त्री, समाजसेवी, हिन्दी के कुशल लेखक, प्रखर वक्ता तथा विचारक हैं। इन का सारा जीवन समाज सेवा और शिक्षण संस्थाओं के निर्माण तथा संचालन में व्यतीत हुआ है। फरीदाबाद (हरियाणा) इन का कार्यक्षेत्र है और दिल्ली प्रदेश का दलूपुरा गांव इनकी जन्म भूमि है। इनकी उच्च शिक्षा जामिया मिलिया विश्वविद्यालय तथा पंजाब विश्वविद्यालय में हुई है।

फरीदाबाद में दयानन्द महाविद्यालय, दयानन्द पब्लिक स्कूल आदि संस्थाओं, जिनका आज फरीदाबाद क्षेत्र में जाल सा बिछा हुआ है, के संस्थापक तथा प्रेरणा स्रोत रहे हैं। इस से पूर्व पांच वर्ष तक पंचायती राज ट्रेनिंग सेन्टर फरीदाबाद के प्रिंसिपल रहे। इस संस्थान में ग्राम नेताओं को पंचायती राज का प्रशिक्षण दिया जाता थ्ग। इससे भी पूर्व राष्ट्रीय भाव व विचार प्रशिक्षण संस्थान, फरीदाबाद के प्रिंसिपल थे, जहाँ पंजाब राज्य के कर्मचारियों तथा अधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जाता था। दयानन्द पब्लिक स्कूल के भी पांच वर्ष तक प्रिंसिपल रहे हैं। नेहरू कॉलेज अजरौंदा, फरीदाबाद के जन्मदाताओं में अग्रणी थे।

अखिल भारतीय ग्राम सहयोग समाज, जो गैर सरकारी, गैर राजनीतिक तथा समाज सेवी संस्था थी उसके आजीवन सदस्य तथा संस्थापक सदस्य रहे। पांच व्रर्ष तक इस संस्था के उत्तरदायी पदाधिकारी भी रहे। भारत के प्रथम श्रेणी के स्वाधीनता सेनानी तथा महान नेताओं के साथ इनका घनिष्ट सम्पर्क तथा सम्बन्ध रहा। जिन में पं. जवाहर लाल नेहरू, डा. जाकिर हुसैन , श्री वी.वी. गिरि, डा. राधाकृष्णन, डा. राजेन्द्रप्रसाद, श्रीमति इन्दिरा गांधी, पं. सुन्दरलाल जी, कर्नल जीवन सिंह, बाबा पृथ्वी सिंह आजाद, श्री रामनारायण चौधरी, श्रीमती अंजना देवी, डा. सुखदेवजी, पं. शिवलाल जी, श्री सी.के. नायर, डा. सत्यव्रत सिद्धांतालंकार, प्रो. इन्द्र

विद्यावाचस्पति, स्वामी श्री सोमानन्द जी उल्लेखनीय हैं। श्री गणपति सिंह ने सदैव अपने को समाचार पत्रों की सुर्खियों से दूर रखा है। इनका सारा जीवन समाज सेवा तथा शिक्षण संस्थाओं के लिये समर्पित रहा है। फरीदाबाद क्षेत्र की जनता इन्हें प्यार व आदर से "भाईजी" कहती है।

अब तक इनकी पाँच पुस्तकें, 'पंचायती राज एक कंटीला रास्ता', 'पंचायती राज का नेतृत्व', '१८५७ के गुर्जर शहीद', 'गुर्जर वीर-वीरांगनाएँ,' 'भारत:मेरा घर', प्रकाशित हुई हैं। 'पंचायती राज का नेतृत्व' की भूमिका डा. जाकिर हुसैन राष्ट्रपति महोदय ने तथा '१८५७ के गुर्जर शहीद' की भूमिका मूर्धन्य इतिहासकार श्री रतनलाल वर्मा ने लिखी हैं। जिसके दूसरे संस्करण का प्रकाशन डा. जयसिंह, मुख्य सम्पादक 'गुर्जर गौरव' ने किया है। छटी पुस्तक 'निरोगी काया' पाठकों को प्रकाशित होने पर मिलेगी। इनके सभी प्रकाशन पाठकों ने बहुत पसंद किए हैं। इनकी पुस्तकों की समीक्षा, पंजाब केसरी जालंधर तथा नव ज्योति, अजमेर से प्रकाशित हुई हैं।

श्री गणपति सिंह सुलझे हुए वार्ताकार हैं। इनकी वार्ताएँ आकाशवाणी रोहतक, श्री नगर तथा दिल्ली से प्रसारित होती रही हैं। दिल्ली दूरदर्शन केन्द्र से पंचायती राज, ग्रामीण विकास तथा ग्राम स्वराज्य पर प्राय: कार्यक्रम देते रहे हैं जिनकी श्रोता भूरि-भूरि प्रशंसा करते रहते हैं। उत्तर भारत तथा फरीदाबाद के अनेक दैनिक पत्र तथा पत्रिकाओं में इन के रचनात्मक लेख तथा देशभक्ति से ओतप्रोत और राष्ट्रीयता से भरपूर विचार प्रकाशित होते रहते हैं। सम्प्रति विचारों द्वारा ही राष्ट्र सेवा, समाज सुधार एवं मानवता का प्रचार प्रसार करने में समर्पित हैं जिसके लिये छोटी सी संस्था 'विचार भारती' है जिसके आप अध्यक्ष हैं।

प्रकाशक-

दो शब्द

इस पुस्तक से पूर्व मैंने 'पंचायती राज एक कंटीला रास्ता', 'पंचायती राज का नेतृत्व', '१८५७ के गुर्जर शहीद,' 'गुर्जर वीर-वीरंगना', 'भारत :मेरा घर' लिखी हैं और उन सब का प्रकाशन भी हो चुका है। प्रस्तुत पुस्तक 'निरोगी काया' लिखने की प्रेरणा मुझे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी से मिली थी। मैं निरंतर इस विषय पर पढ़ता रहा और चिन्तन मनन तथा स्वयं अनुभव भी करता रहा। कुछ समीपस्थ युवकों के आग्रह पर लिखी यह संक्षिप्त पुस्तक पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है। यदि इस पुस्तक ने एक भी युवक व युवती, किशोर और किशोरी अथवा छात्र-छात्रा के जीवन में परिवर्तन की प्रेरणा देकर जीवन को उदात्त बनाने में सहायता की तो मैं अपने परिश्रम को सार्थक समझूंगा।

स्वास्थ्य बहुत व्यापक एवं विस्तृत तथा वैज्ञानिक विषय है। इस विषय में अब तक की खोज को भी पूर्ण नहीं कहा जा सकता, इसलिए खोज जारी रहनी चाहिए। मेरा निश्चित मत है कि भारत के ऋषि-मुनियों और योगियों ने तथा आयुर्वेदाचार्यों ने जितनी खोज स्वास्थ्य और आयुर्विज्ञान पर की है वह अब भी संसार के लिए आदर्श एवं प्रेरणाप्रद है। भारत ने न केवल शरीर अपितु सूक्ष्म शरीर एवं आत्मा तक पहुंच कर ली है जबकि पाश्चात्य वैज्ञानिक केवल स्थूल शरीर पर अटक कर रह गए हैं।

इस पुस्तक में मैंने कोई दवा अथवा नुस्खा नहीं लिखा है। न योगासनों के नमूने व चित्र दिए हैं। न किसी व्यायाम विशेष अथवा चिकित्सा विशेष की वकालत की है। मेरा मन्तव्य, स्वास्थ्य के विषय में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने, प्राकृतिक जीवन जीने और अनुभवी-दीर्घजीवी एवं व्यायाम विशेषज्ञों के अनुभवों का लाभ उठाने से रहा है।

निरोग मां-बाप की सन्तान अवश्य स्वस्थ, सुन्दर सुडौल एवं अच्छे संस्कारों वाली होगी। लेकिन उन्हें पैदा होने के पश्चात घर और बाहर, स्कूल और कॉलेज तथा विश्व-विद्यालय में अश्लील, कामोत्तेजक एवं संस्कार हीनता का वातावरण मिलेगा तो स्वस्थ और निरोग सन्तान भी गंदे पर्यावरण और दूषित सामाजिक वातावरण से अछूती नहीं रह पायेगी। इसलिए मैंने उन सभी आवश्यक तत्वों और साधनों पर जोर दिया है जो मनुष्य के जीवन को सुखी, स्वस्थ एवं सुन्दर बना सकें।

मैं बड़ा सौभाग्यशाली रहा हूँ कि मुझे बचपन से ही अच्छे संस्कार, शिक्षा तथा पवित्र वातावरण में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैं बड़े गर्व से कह सकता हूँ कि

आर्यसमाजी संस्कारों वाले परिवार में जन्म लेने के कारण, मेरे मातापिता तथा गुरूजन व अन्य उच्च विचार व संस्कार वाले महानुभवों, देशभक्तों और राष्ट्रप्रेमियों के संपर्क के कारण अपने पूरे जीवन में दुर्व्यसनों से बचा रहा। लेकिन यह भी मुझे लिखने में जरा भी हिचक नहीं है कि मैं निरोगी नहीं रहा। मैं बचपन में दुर्बल तथा रोगग्रस्त रहा। मेरे शरीर पर एक इंच भी मांस नहीं था। आंख, कान प्रायः पीड़ित रहते थे। दो बार बचपन व किशोरावस्था में पक्षाघात का शिकार हुआ। जानलेवा पेचिश से बड़ी मुश्किल बचा। दो बार हल्का सा रक्त न्यूनता के कारण हृदयाघात भी हुआ। मैं प्रभु कृपा से, इच्छाशक्ति से बच गया। मुझे प्रेरणा हुई कि निरोग रहने और स्वस्थ जीवन पर गहरी खोज की जाए और आनेवाली सन्तति को निरोग एवं स्वस्थ रहने के लिए प्रेरित किया जाए। उसी का परिणाम है, 'निरोगी काया' पुस्तक। मैं अपने प्रकाशक का आभारी हूँ कि उन्होंने मुझे सहयोग दिया तभी तो मेरी 'निरोगी काया' का पुस्तक रूप बना।

मैं उन सभी ज्ञात और अज्ञात महापुरूषों, व्यायामाचार्यों, योगाचार्यों, विद्वानों एवं लेखकों का आभारी हूँ ,जिनसे मैंने निरोग व स्वस्थ रहने की प्रेरणा प्राप्त की तथा अपने जीवन में उदात्त मूल्यों का समावेश किया

विनीत :-

गणपति सिंह

दिनांक १९.११.१९९१

ग्राम -नवादा कोह
पो. पाली-१२१००४
जि. फरीदाबाद
(हरियाणा)

स्वस्थ माता-पिता

स्वस्थ माँ-बाप की सन्तान स्वस्थ, निरोगी, दीर्घायु, बल बुद्धि से भरपूर, पराक्रमी, साहसी तथा परोपकारी होती है। इसलिये माता-पिता का स्वस्थ और निरोग होना जरूरी है। सर्वप्रथम यह जानना चाहिए कि स्वस्थ व्यक्ति कौन होता है ? आयुर्वेद सब से प्राचीन और प्रामाणिक संदर्भ ग्रंथ स्वास्थ्य के विषय में, भारतवर्ष में ही नहीं संसार में रोग और रोगों के निवारण पर दुर्लभ ग्रंथ है। आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रंथ सुश्रुत में स्वस्थ व्यक्ति की परिभाषा की है, जिसका रूपान्तर इस प्रकार है:- "जिसके तीनों दोष, वात पित्त और कफ सम हों, जठराग्नि न तीक्ष्ण न मंद, शरीर को धारण करने वाले सात धातु रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और वीर्य सम अनुपात में हों, मलमूत्र की सम्यक प्रवृत्ति तथा दश इन्द्रियाँ मन एवं इन का स्वामीं आत्मा भी प्रसन्न हों तो ऐसे व्यक्ति को स्वस्थ कहा जाता है।"

आयुर्वेद-चिकित्सा पद्धति के अनुसार व्यक्ति तभी रोगी होता है जब उसके शरीर में वात, पित्त, कफ़ सम नहीं रह कर कम और अधिक हो जाते हैं। वायु की अधिकता होने पर वायु विकार वाले रोग व्यक्ति को घेर लेते हैं जैसे पक्षाघात, लकवा, अधरंग आदि अनेक रोग। पित्त की असमानता होने पर रक्त विकार के रोग तथा कफ़ की असमानता होने पर खांसी, तपेदिक जैसे भयंकर रोग व्यक्ति को आ घेरते हैं। इसलिये वैद्य लोग पित्त,वात,कफ़ दोष पर विशेष ध्यान देते हैं। जठराग्नि भोजन को पका पचा कर मनुष्य के शरीर के लिये सात धातु रस तैयार करती है। जिनसे शरीर का निर्माण होता है। जिस व्यक्ति की पाचन शक्ति कमजोर अर्थात मंद होगी वह न निरोग रह सकता है न दीर्घायु को प्राप्त कर सकता है। शरीर को धारण करने वाले सात धातु रस, रक्त, मांस, भेद, अस्थि, मज्जा और वीर्य में, जठराग्नि की मंदता और तीक्ष्णता के कारण सम अनुपात में नहीं बन सकते। मल-मूत्र की सम्यक प्रवृत्ति भी स्वस्थ अथवा निरोग व्यक्ति की पहचान बताते हैं। मल त्याग के लिए बार-२ जाना, जल्दी-जल्दी पेशाब जाना रोग के कारण हैं। रोगी व्यक्ति की दसों इन्द्रियां, मन तथा आत्मा कभी प्रसन्न नहीं रह सकते।

प्राकृतिक तौर पर स्वस्थ व्यक्ति की पहचान करने के लिये डाक्टर या हकीम व वैद्य की आवश्यकता नहीं है। प्रकृति से बड़ा डाक्टर, वैद्य, सर्जन, हकीम विश्व में न कभी पैदा हुआ है न होगा। जितना मनुष्य प्रकृति से दूर होता जा रहा है उतना ही वह नाना प्रकार के रोग और व्याधियों का शिकार होता जा रहा है। स्वस्थ व्यक्ति के चेहरे पर चमक अर्थात तेजस्वी चेहरा, आंखों में दमक यानी आंखे भरपूर ज्योतियुक्त तथा प्रभावशाली होंगी, दांत मोती की तरह चमकदार होंगे। भरपूर चौड़ा सीना तथा उभरा हुआ वक्षस्थल, पेट का आकार छाती से नीचा और न्यून होगा। हाथ पैर सुडौल मजबूत तथा शक्ति शाली होंगे। दौड़ने,तेज चलने और मेहनत के कामों में सांस नहीं फूलेगा। दोनों समय खुलकर भूख लगेगी और रात को कम से कम छह गंटे की गहरी नींद का आनन्द प्राप्त होगा। पेट में मलबद्धता नहीं होगी; शौचादि क्रिया ठीक समय पर होगी। जर्मनी के प्राकृतिक जीवन के प्रचारक-प्रसारक डा. जस्ट के अनुसार आन्तों की सफाई की पहचान यह है जब स्वस्थ व्यक्ति शौच जायेगा तो मलद्वार पर मल नहीं लगेगा जैसे कि पशुओं को शौच जाने के बाद मलद्वार की सफाई

के लिए पानी लेने की आवश्यकता नहीं रहती उसी प्रकार स्वस्थ व्यक्ति की गुदा पर मल नहीं लगेगा।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के अनुसार रोगी का रक्तचाप परीक्षण, ई.सी.जी. परीक्षण, मल-मूत्र परीक्षण, रजवीर्य परीक्षण, रक्त परीक्षण, थूक परीक्षण करके रोगों का निदान या कारण ज्ञात किया जाता है जो मंहगी प्रक्रिया है और प्रत्येक डाक्टर के पास या हस्पताल में उपलब्ध नहीं हैं। भारत जैसे ग्राम प्रधान देश में ये सब परीक्षण खर्चीले हैं और व्यावहारिक नहीं है। हकीम वैद्य नाड़ी परीक्षा से लगभग सभी रोगों का पता चला लेते थे। प्राय: आजकल अच्छे नाड़ी ज्ञाता हकीम व वैद्यों का अभाव होता जा रहा है। हमारे डाक्टर मशीनीकरण के दास होते जा रहे हैं। अब तो शिक्षित समाज में होम्योपैथी भी लोकप्रिय होती जा रही है। लेकिन ग्रामीण समाज में इस पद्धति का अभी उतना प्रचलन नहीं है, जितना अंग्रेजी चिकित्सा-पद्धति का।

हमारा लक्ष्य इस पुस्तक में चिकित्सा पद्धतियों का गुण दोष वर्णन करना कदापि नहीं हैं। हम व्यक्ति को निरोग और स्वस्थ रहने के कारण और उपायों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहते हैं। इस प्रथम अध्याय में मां-बाप के स्वस्थ होने को उन की सन्तान के स्वस्थ पैदा होने का आधार मैं मानता हूँ। जिसके लिये अधिक गहराई में उतरना होगा। जितना हम समुद्र की गहराई में जायेंगे, उतने ही आबदार मोती प्राप्त कर सकते हैं। इसलिये मां बाप के विषय में कुछ अधिक जानना जरूरी है। कितने ही रोग बच्चे को मां बाप से विरासत में मिलते हैं जिन पर बच्चे और उसके मां बाप का कंट्रोल नहीं होता। इसके लिये विश्वविख्यात स्मृतिकार आर्य पुंगव मनु के संविधान को समझना होगा। मनु उच्चकोटि के विचारक, समाजसुधारक तथा समाजशास्त्री एवं विधायक थे।

मनु ने इस विषय में मनु.अ. ३/२,४-१०,२१,२७,३४,३९-४२ में लिखा है, जिसका रूपांतर निम्न प्रकार है :-

ब्रह्मचर्य से चार, तीन, दो अथवा एक वेद को यथावत पढ़ अखंडित ब्रह्मचर्य का पालन करके गृहस्थ आश्रम को धारण करे।१। यथावत् उत्तम रीति से ब्रह्मचर्य और विद्या को ग्रहण कर गुरू की आज्ञा से स्नान करके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अपने वर्ण की उत्तम लक्षण युक्त स्त्री से विवाह करे ॥२॥ जो स्त्री की माता छ: पीढ़ी और पिता के गोत्र की न हो वही द्विजों के लिये विवाह करने में उत्तम है ॥३॥ विवाह में नीचे लिखे दश कुल, चाहे वे गाय आदि पशु धन धान्य से कितने ही बड़े हों, उन कुलों की कन्या के साथ विवाह न करे ॥४॥ वे दश कुल ये हैं एक - जिस कुल में उत्तम क्रिया न हो। २- जिस कुल में कोई भी उत्तम पुरूष न हो। ३- जिस कुल में कोई विद्वान न हो। ४-जिस कुल में बवासीर हो। ५-जिस कुल में शरीर पर बड़े-बड़े लोम हों। ६- जिस कुल में क्षयी अर्थात राजयक्ष्मा रोग हो। ७- जिस कुल में अग्निमन्दता से आमाश्य रोग हो। ८- जिस कुल में मृगी हो। ९- जिस कुल में श्वेत कुष्ट हो १०- जिस कुल में गलितकुष्ट आदि रोग हैं। उन दश कुलों की कन्या अथवा कुलों के पुरूषों से विवाह कभी न करे ॥५॥ पीले वर्ण वाली, जिसके शरीर में कोई अवयव अधिक

हो, रोगिणी, जिसके शरीर पर भी लोम न हों और जिस के शरीर पर बड़े-बड़े लोम हो, व्यर्थ अधिक बोलने वाली और जिसके पीले बिल्ली के सदृश्य नेत्र हों ॥६॥

तथा जिस कन्या का (ऋक्ष) नक्षत्र पर नाम अर्थात रेवती, रोहिणी इत्यादि, नदी जिस का गंगा यमुना इत्यादि (पर्वत) जिसका विंध्याचला इत्यादि नामावली, (पक्षी) पक्षी अर्थात कोकिला, हंसा इत्यादि, (अहि) अर्थात उरगा, भोगिनी इत्यादि (प्रेषय) दासी इत्यादि (भीषण) कालका, चण्डिका इत्यादि, लक्षण और नाम युक्त कन्या से विवाह न करे ॥७॥

किन्तु जिसके सुंदर अंग, उत्तम नाम और हंस और हस्तिनी के सदृश्य चालवाली, जिसके सूक्ष्म लोम, सूक्ष्म केश और सूक्ष्म दांत हों, जिसके सब अंग कोमल हों उस स्त्री से विवाह करे ॥८॥ ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पिशाच ये आठ प्रकार के विवाह होते हैं ॥९॥

ब्राह्म विवाह-कन्या के योग्य, सुशील, विद्वान पुरूष को सत्कार करके, कन्या को वस्त्रादि से अलंकृत करके उत्तम पुरूष को बुला अर्थात जिस को कन्या ने पसंद भी किया हो, उसको कन्या देना ब्राह्म विवाह कहलाता है ॥१०॥ दैव-विस्तृत यज्ञ में बड़े-बड़े विद्वानों का वरण कर उन में कर्म करने वाले विद्वान को वस्त्र आभूषण आदि से कन्या को सुशोभित करके देना, दैव विवाह कहलाता है ॥११॥ आर्ष - एक गाय, बैल का जोड़ा अथवा दो जोड़ा वर से लेकर धर्म पूर्वक कन्यादान करना आर्ष विवाह होता है लेकिन मनुस्मृति में वर से कुछ भी लेना निषेध लिखा है अर्थात कुछ भी न लेकर दोनों की प्रसन्नता से पाणिग्रहण होना आर्ष विवाह है ॥१२॥ प्राजापत्य-कन्या और वर को यज्ञशाला में विधि पूर्वक सबके सामने "तुम दोनों मिलके गृहाश्रम के कर्मों को यथावत करो," ऐसा कहकर दोनों को प्रसन्नता पूर्वक पाणिग्रहण होना प्राजापत्य विवाह होता है ॥१३॥

आसुर विवाह - वर की जातियों वालों और कन्या को यथाशक्ति धन देकर होम आदि विधि कर कन्या देना आसुर विवाह कहलाता है ॥१४॥ गान्धर्व विवाह - वर कन्या की इच्छा से दोनों का संयोग होना और अपने मन में मान लेना कि हम दोनों (पति-पत्नि) अर्थात स्त्री पुरूष हैं यह काम से हुआ गान्धर्व विवाह कहलाता है ॥१५॥ राक्षस विवाह - हनन, छेदन और कन्या के कुटुम्बियों का विदारण कर क्रोशती रोती, कांपती और भयभीत हुई कन्या को बलात्कार हरण करके विवाह करना राक्षस अति नीच विवाह है ॥१६॥ पैशाच विवाह - जो सोती, पागल हुई या नशा पीकर उन्मत्त हुई कन्या को एकान्त पाकर दूषित कर देना यह सब विवाहों में नीच से नीच, महानीच, दुष्ट, अति दुष्ट पैशाच विवाह है ॥१६॥

ब्राह्म, दैव, आर्ष, और प्राजापत्य इन चार विवाहों में पाणिग्रहण किये हुए स्त्री पुरूष से जो सन्तान उत्पन्न होते हैं वे वेदादि विद्या से तेजस्वी, आप्त पुरूषों के सम्मत, अत्युत्तम होते हैं ॥१८॥ वे पुत्र या कन्या सुन्दर, रूप, बल, पराक्रम, शुद्ध बुद्धयादि उत्तम गुणयुक्त, बहुधन युक्त, पुण्यकीर्तिमान और पूर्ण भोग के भोक्ता, अतिशय, धर्मात्मा हो कर सौ वर्ष तक जीते हैं ॥१९॥ इन चार विवाहों से जो बाकी रहे आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच इन चार दुष्ट विवाहों से उत्पन्न सन्तान निन्दित कर्म कर्ता, मिथ्यावादी, वेदधर्म के द्वेषी, बड़े नीच स्वभाव वाले होते हैं ॥२०॥

इस लिये मनुष्यों को योग्य है कि जिन निन्दित विवाहों से नीच सन्तान अर्थात प्रजा होती है उन का त्याग और जिन उत्तम विवाहों से उत्तम सन्तान अर्थात प्रजा होती है, उन को करना अत्युत्तम है ॥२१॥

मनु महाराज ने मनुस्मृति अ. ९।८८-९० में इस सम्बन्ध में लिखा है, "यदि माता पिता कन्या का विवाह करना चाहे, तो अति उत्कृष्ट शुभ गुण कर्म स्वभाव वाले, कन्या के सदृश्य रूप लावण्यादि गुण युक्त वर ही को चाहे। वह कन्या (वर) माता की छः पीढ़ी के भीतर भी हो तथापि उसी को कन्या देना, अन्य को कभी न देना कि जिससे दोनों अति प्रसन्न होकर गृहाश्रम की उन्नति और उत्तम सन्तानों की उत्पत्ति करें ॥१॥ चाहे मरणपर्यन्त कन्या पिता के घर में बिना विवाह के बैठी रहे, परन्तु गुणहीन, असदृश दुष्ट पुरूष के साथ कन्या का विवाह कभी न करे और वर कन्या भी अपने आप स्वसदृश्य के साथ ही विवाह करे। जब कन्या विवाह करने की इच्छा करे, तब रजस्वला होने के दिन से तीन वर्ष को छोड़ के चौथे वर्ष में विवाह करे। ॥३॥

मनु महाराज ने मनुस्मृति में मानव समाज को उत्तम संस्कार और व्यवहार युक्त बनाने के लिये जो व्यवस्था दी है उसका हमने यहाँ उल्लेख किया है (पाठकों की सुविधा के लिये उन व्यवस्थाओं का अपने शब्दों में भी वर्णन जरूरी समझते हैं। किसान लोग जब कोई पशु खरीदते हैं तो उसके गुण दोषों की गहरी परीक्षा करते हैं, तभी उस पशु को खरीदते हैं। लेकिन मानव समाज विवाह के पूर्व, जितनी गहराई से वर कन्या के विषय में खोज मनु महाराज ने लिखी है, नहीं करता। जिसके कारण अनेक रोग कुल में आ जाते हैं जो बच्चों को विरासत में अर्थात वंशानुगत प्राप्त होते हैं।

सर्वप्रथम मनु ने दश कुलों की कन्या के साथ विवाह करना वर्जित किया है। धन धान्य को मनु ने कतई महत्व नहीं दिया है कुल को विशेष महत्व दिया है। आठ प्रकार के विवाह लिखे जिनमें ब्राह्म, दैव, आर्ष और प्राजापत्य विवाह को उचित और आसुर गान्धर्व, राक्षस और पैशाच इन चार विवाहों को निकृष्ट तथा वर्जित किया है। कन्या के शारीरिक लक्षणों का वर्णन करना भी मनु महाराज नहीं भूले हैं। इसके अतिरिक्त विवाह की आयु का भी वर्णन उन्होंने कन्या की शारीरिक प्रक्रिया के अनुसार किशोरी होने के चौथे वर्ष निर्धारित की है। मनु महाराज चाहे मेडिकल साइंस के ज्ञाता न सही परन्तु समाजशास्त्री होने के नाते वेदों के ज्ञानानुसार मानव समाज के निर्माण के लिये गृहास्थाश्रम की आदर्श रचना चाहते थे।

वर्तमान समाज प्राचीन परंपराओं को रूढ़िवादी और दकियानूसी समझकर आधुनिकता के प्रवाह के साथ बुनियादी अच्छाइयों और रीति रिवाजों को छोड़ कर गृहस्थ जीवन को नारकीय बना बैठा है। अब वर कन्या के वंश की खोज कम और धनधान्य अर्थात आर्थिक सम्पन्नता की अधिक की जाती है। दहेज प्रथा शिक्षित और धनाढ्य समाज अथवा वर्ग में अधिक है। अशिक्षित और निर्धन वर्ग में भी है मगर उन से कम है। दहेज प्रथा स्त्री समाज के लिये कैंसर का रूप धारण कर गई है। अपराधवृत्ति का रूप ग्रहण कर गई है। अदालतों में दहेज प्रथा और अनमेल विवाहों के मुकदमों के अम्बार लग गये हैं। इस दिशा में अविलम्ब सुधार करने की आवश्यकता है वरना मानव समाज सभ्य न रह कर बर्बर हो जायेगा।

विवाह गृहस्थाश्रम के लिये नितान्त आवश्यक है। गृहस्थाश्रम सन्तान के बिना सूना है। ईसा ने बच्चों के बिना स्वर्ग को भी अधूरा और वीरान कहा है। सन्तानोत्पत्ति के लिये स्त्री पुरूष का निरोग होना, शिक्षित होना तथा गर्भवती को पौष्टिक, सुपाच्य और सन्तुलित खुराक का मिलना और गृहकार्यों के निपटाते हुए गर्भस्थ शिशु के भविष्य का ज्ञान होना निहायत जरूरी है।

मां के गर्भ में रज और वीर्य से शिशु के शरीर का निर्माण होता है। पुरूष के वीर्य से शरीर की तमाम हड्डियों का निर्माण होता है। मां के रक्त से शिशु की तमाम मांस-पेशियों तथा नस नाड़ियों का निर्माण होता है। इसलिये गर्भवती महिला को पौष्टिक, सुपाच्य और सन्तुलित भोजन की नितान्त आवश्यकता होती है जो प्राय: महिलाओं को निर्धनता और अज्ञान के कारण नहीं मिल पाता। इसलिये बच्चे दुर्बल, मन्द बुद्धि रोगी और असुन्दर जन्म लेते हैं।

स्वस्थ पुरूष का वीर्य और स्वस्थ स्त्री का रज स्वस्थ हो सकता है। मनु महाराज ने जिन दश वंशों की कन्या वर्जित लिखी है उनमें कुछ विशेष रोग जैसे बवासीर, क्षय रोग, अग्निमन्दता, मृगी, श्वेत कुष्ट, गलित कुष्ट रोग वाले परिवार या कुल की कन्या के साथ विवाह वर्जित किया है। इस का आशय स्पष्ट है इन रोगी कुलों की कन्या में ये रोग वंशानुगत हो सकते हैं। खेत कितना ही उपजाऊ क्यों न हो यदि बीज उस में निकृष्ट बोया जायेगा तो उपज कहां से अच्छी होगी ? रज-वीर्य मानव शरीर के बीज हैं, ये जितने निरोग और स्वस्थ होंगे बच्चा भी उतना ही स्वस्थ और निरोग होगा। इसलिये कुल या वंश का निरोग होना भी स्वस्थ परिवार के निर्माण के लिये अत्यावश्यक है।

वर और कन्या का पूर्ण युवा होने पर विवाह करना आवश्यक है। बाल विवाह की परम्परा अभी तक भारतीय समाज में प्रचलित है। विशेष कर जहाँ शिक्षा का अभाव है उन परिवारों में बाल विवाह, अनमेल विवाह, बहु विवाह, वृद्ध विवाहों का प्रचलन किसी से छिपा नहीं है। ऐसे विवाहों से सम्बन्धित स्त्री पुरूष की सन्तान निरोग, सुन्दर, सबल, बुद्धिमान, लज्जाशील और मर्यादा का पालन करने वाली कदापि नहीं होगी। दीघार्यु माता-पिता की सन्तान प्राय: दीघार्यु को प्राप्त होती है। हमने अनेकों परिवारों में देखा है उन के यहाँ लंबी या न्यून आयु की परिधि में मृत्यु का चक्र चलता रहता है।

निरोग, स्वस्थ और सबल राष्ट्र के निर्माण के लिये निरोग, स्वस्थ तथा सशक्त माता पिता तथा परिवार की परम आवश्यकता है। हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने उत्तम सन्तान उत्पन्न करने और उन का उचित पालन पोषण करने तथा उन को उत्तम संस्कार व शिक्षा देने पर विशेष व्यवस्था वेद शास्त्र तथा अन्य आर्ष ग्रन्थों में लिखी है। हमारे चारों आश्रम और वर्ण व्यवस्था समाज और राष्ट्र को सशक्त, समान तथा सुन्दर बनाने के आधार हैं।

स्वस्थ मातापिता को ही नहीं सभी पुरूष स्त्रियों को सूर्योदय से पूर्व शौच त्याग, स्नान और ध्यान की आदत होनी चाहिये। जो व्यक्ति सूर्योदय के पश्चात शौचादि निवृत होता है वह दिन भर सुस्त आलसी तथा प्रमादी बना रहता है। स्नान भी सूर्योदय से पूर्व करें और कुएं तथा हैंडपंप के ताजा पानी से सदैव स्नान करें। सूर्योदय से पूर्व जो ताजा पानी कुंए

अथवा हैंड पंप से निकलता है उसका तापमान हमारे शरीर के तापमान के समान होता है। सर्दियों में भी वह ठण्डा नहीं लगेगा और इस ताजा पानी से नहाकर आप अपने को एकदम चुस्त दुरूस्त और फुर्तीला अनुभव करेगे। गर्म पानी से स्नान करने की आदत अच्छी नहीं है। इस से आप की त्वचा भी जानदार नहीं रहती है। जहाँ कुएं और हैंडपंप सुविधा नहीं है वहां भले ही आप गुनगुने पानी से सर्दियों में स्नान कर सकते हैं गर्मियों में गर्म पानी से कदापि स्नान न करें।

मेरे घुटने में फ्रेक्चर हो गया था तब मैं सूर्य की किरणों के ताप से गर्म किए हुए जल से स्नान किया करता था, वरना मैं सदैव ताजा पानी से ही नहा कर आनन्द अनुभव करता हूँ। हां सर्दियों में बन्द स्नानघर में नहाना मैं आवश्यक समझता हूँ। गर्मियों में सदैव खुले स्थान पर नहाता हूँ। जैसी अच्छी या बुरी आदत मां बाप को पड़ जाती है वहीं वे प्रायः अपने बच्चों को सिखाते हैं। एक बात सदैव ध्यान रखें ताजा पानी से सदैव पहले सिर को भिगोये और गर्म पानी से नहाने वाले पहले पैरों को धोयें।

गुर्दा और मसाना साफ़ रखने के लिए स्नान से पूर्व शौच से पूर्व तथा सोने से पूर्व पेशाब अवश्य करें। भोजन, व्यायाम तथा स्त्री संभोग के बाद अवश्य पेशाब करना चाहिये। इस नियम के पालन से गुर्दा और मसाना साफ रखे जा सकते हैं। घुटनों के दर्द से बचा जा सकता है। भोजन से एक घंटा पूर्व पानी पीने से क्षुधा तीव्र हो जाती है और एक घंटा भोजन के उपरान्त पानी पीने से पाचन क्रिया ठीक रहती है तथा अपच की शिकायत नहीं होती।

मां बाप को निरोग रहने के लिये भोजन सोने से कम से कम तीन घंटे पहले कर लेना चाहिये। खाना खा कर यदि व्यक्ति एक दम सोना चाहता है तो वह अपनी पाचन शक्ति के साथ खिलवाड़ कर रहा है। भोजन प्रायः तीन घंटे में पच कर रस आदि तैयार करता है जिससे हमारे शरीर की सात धातुओं का निर्माण होता है। दोपहर में विशेष कर गर्मियों के दिनों में थोड़ा विश्राम कर लेना लाभप्रद है। भोजन के उपरान्त बज्र आसन का अभ्यास बहुत उपयोगी है। इस के करने वाले व्यक्ति को गैस का रोग नहीं लगता तथा सौ वर्ष की आयु तक पक्षाघात का आक्रमण नहीं होता। बज्र आसन का अभ्यास किसी से सीख लेना चाहिये। केवल यही आसन ऐसा है जो भोजन करने के उपरान्त किया जाता है वरना अन्य सभी आसन खाली पेट करने चाहियें।

जिस प्रकार भोजन और शयन में तीन घंटे अन्तर स्वस्थ और निरोग रहने के लिये जरूरी है उसी प्रकार भोजन और स्त्री संभोग में भी तीन घंटे का अन्तराल कम से कम होना चाहिये ऐसा न करने से पाचन शक्ति मन्द हो जाती है जठराग्नि मन्द रहने लगती है या अति तीक्ष्ण हो कर आमाश्य के अनेक रोग अथवा विकार पैदा हो जाते हैं। स्वास्थ्य के इन सुनहरी नियमों के पालन न करने से सन्तान रोगी, मन्द बुद्धि, कमजोर तथा सुन्दर पैदा नहीं होती।

प्राकृतिक जीवन, व्यक्ति को सदैव सुखी और स्वस्थ रखने एवं रहने की कला का नाम है। विधि पूर्वक गृहस्थाश्रम का व्यक्ति पालन करके संयमित जीवन जी कर सौ वर्ष पर्यन्त स्वस्थ और निरोग रह सकता है। विलासिता पूर्ण जीवन बिताने वाले व्यक्ति अल्पायु में ही मौत के शिकार हो जाते हैं। भारत के स्वाधीनता सेनानी अधिकतर लंबी उम्र पाकर मरे हैं

जबकि फिल्म अभिनेता और अभिनेत्रियाँ आधी उम्र तक ही पहुंच पाती हैं। हमारे स्वाधीनता सेनानियों ने तपस्या और कष्ट पाकर अपने शरीर को सुदृढ़ बना लिया था जबकि उन्हें भोजन भी अच्छा नहीं मिला। जेल जीवन में कष्ट ही कष्ट सहते रहे परन्तु उन का जीवन-लक्ष्य महान् था। इसके विपरीत फिल्म अभिनेता और अभिनेत्रियां अच्छे से अच्छा भोजन खाते हैं और जीवन की सभी सुख सुविधाओं का आनन्द लेते हैं। अपने शरीर की सुडौलता, सुन्दरता तथा चमक दमक के लिये खूब खर्च करते हैं लेकिन तनावपूर्ण जीवन तथा विलासी जीवन जीने के अभ्यस्त हो जाते हैं जिसके कारण ६० वर्ष की आयु तक ही जी पाते हैं, जबकि स्वाधीनता सेनानी ८० वर्ष की आयु से ऊपर सौ तक पहुंच जाते हैं। ये सब जीवन शक्ति और जीवन इच्छा पर भी निर्भर है।

उत्तर प्रदेश विधान सभा के पूर्व सदस्य ठाकुर संग्राम सिंह का १०५ वर्ष की आयु में इसी वर्ष (१९९१) में स्वर्गवास हुआ है। वे स्वाधीनता सेनानी भी थे। कई वर्ष कठोर कारावास में उन्हें रहना पड़ा था। कारावास में प्रायः सभी स्वाधीनता सेनानियों को कोई न कोई रोग लग जाता था, जिससे वे आजीवन पीड़ित रहते थे, जैसे डा. राजेन्द्र प्रसाद दमा से पीड़ित रहे। विपरीत परिस्थितियों और प्रतिकूल भोजन व्यवस्था के बावजूद स्वाधीनता सेनानी, फिल्म अभिनेताओं और अभिनेत्रियों की अपेक्षा कहीं अधिक आयु तक जीवित रहे हैं, यह अभी तक का रिकार्ड और हमारा अनुभव है।

निरोग मां, निरोग शिशु

यदि मां निरोग है तो उसके गर्भ में पल रहा शिशु भी निरोग होगा। गर्भस्थ बच्चे को मां की नाभि से जुड़ी बच्चे की नाभि-नाड़ी द्वारा खुराक प्राप्त होती है। बच्चे का शरीर मां के गर्भाशय में मां द्वारा खायी हुई खुराक से लगभग नौ महीने में विकसित होता है। बाप के वीर्य से बच्चे की हड्डियों का ही निर्माण होता है। शेष सारा शरीर मां के रक्त से शिशु का रूप धारण करता है। इसलिये मां का निरोग होना, स्वस्थ और सुडौल होना जरूरी है तभी गर्भस्थ बच्चा माँ के अनुरूप निरोग, सुन्दर तथा सुडौल होगा।

निर्धनता के कारण गर्भवती महिलाओं को आवश्यक खुराक नहीं मिल पाती। इसके विपरीत धनवान महिलाओं के लिये खुराक की कमी नहीं है वे शारीरिक श्रम के अभाव में अच्छी खुराक को ठीक प्रकार से पचा भी नहीं पातीं। निर्धन और धनवान दोनों माताएं अज्ञान और अभाव तथा आलस्य के कारण गर्भस्थ शिशु को ठीक खुराक नहीं दे पातीं क्योंकि वे स्वयं संतुलित, पौष्टिक तथा सुपाच्य भोजन की मोहताज रहती है। भोजन का जितना पौष्टिक तथा संतुलित होना जरूरी है उतना ही सुपाच्य होना भी आवश्यक है। ग्रामीण और मजदूर महिलाएं श्रम द्वारा अपना जीवनयापन करती हैं। इसलिये जो भी रूखा सूखा वे खाती हैं वह भली भांति उसे पचा लेती हैं। घरों में रहने वाली शहरी महिलाएं घरेलू काम-काज से जी चुराती हैं और पेट भर कर खूब माल उड़ाती हैं। जो उन्हें शरीर श्रम के अभाव में पच भी नहीं पाता और वे प्रायः आमाश्य के रोगों की आदी बन जाती हैं साथ ही

उनके शरीर पर चर्बी चढ़ कर उन्हें बेडौल और भारी बना देती है जिससे उनका गृहस्थ जीवन भी भार बन कर रह जाता है।

ग्रामीण समाज में महिलाएं घरेलू कामकाज के साथ-साथ पुरूषों का कृषि और पशुपालन के कामों में पूरा हाथ बंटाती है। उनके घरेलू कामों के द्वारा उनका भरपूर व्यायाम हो जाती है। झाडू लगाना, चौका लगाना, चक्की पर आटा पीसना, कुएं से पानी निकालना, आटा गूंथना, दूध बिलौना आदि घरेलू काम काज से स्त्री के प्राय: उन सभी शारीरिक अवयवों का व्यायाम स्वत: हो जाता है जो गर्भस्थ शिशु के विकास और निर्माण के लिए जरूरी है। यही कारण था कि ग्रामीण महिलाएं और उनके बच्चे शहरी स्त्रियों और शिशुओं के मुकाबले शारीरिक तौर पर स्वस्थ तथा निरोग होते थे। गांवों में स्वाधीनता के पश्चात विकास व विज्ञान द्वारा कुछ सुख सुविधाएं उपलब्ध होने के कारण महिलाओं ने चक्की पर आटा पीसना, कुएं से पानी निकालना, दूध बिलौना, झाड़ू व चौका लगाना छोड़ दिया है जिसके कारण वे भी अब शहरी महिलाओं को भांति डाक्टर तथा हस्पतालों के चक्कर लगाने लग गई हैं।

सुदूर गांवों में जहां विकास और विज्ञान के चरण नहीं पहुंचे हैं तथा आदिवासी क्षेत्रों की महिलाएं अब भी उपरोक्त घरेलू कार्य अपने हाथ से करती हैं इसलिये वे प्राय: निरोग और हट्टी-कट्टी मांसल शरीर वाली पायी जाती हैं। वे प्राय: प्रकृति की गोद में और सामीप्य में रहती हैं इसलिये वे निठल्ली, निकम्मी, आलसी तथा विलासितापूर्ण जीवन जीने वाली शहरी महिलाओं के मुकाबिले में प्रसव पीड़ा से भी मुक्त रहती हैं। जर्मनी के विख्यात प्राकृतिक चिकित्सा वैज्ञानिक डा. जस्ट का मत है कि प्रजनन क्रिया भी सहज तथा स्वाभाविक क्रिया है जैसे हम मलमूत्र का त्याग सहज और आराम से करते हैं और हमें कोई कष्ट नहीं होता ठीक उसी प्रकार प्रसव पीड़ा भी प्राकृतिक जीवन यापन करने वाली महिलाओं को नाम मात्र ही होती है। लेकिन बवासीर के रोगी को मलत्याग करने में और पथरिया तथा पेशाब सम्बन्धी रोगी को पेशाब करने में बहुत पीड़ा होती है ठीक उसी प्रकार पौष्टिक, सुपाच्य भोजन के अभाव में शरीर के श्रम तथा व्यायाम के अभाव में, विलासिता पूर्ण जीवन बिताकर तथा अप्राकृतिक गृहस्थ जीवन जीकर स्त्रियाँ प्रसव पीड़ा से तड़प-तड़प कर बच्चे को जन्म देती हैं।

डा. जस्ट का मत है कि घुमन्तु कबीले तथा वनवासी कबीलों की महिलाएं चलते काफिले में भी सहज प्रसव क्रिया कर लेती हैं। किसी गर्भवती महिला को प्रसव पीड़ा हुई और उसने परिवार की मुखिया को प्रसव की सूचना दी काफिला रूका और जरा सा पर्दा किया और बच्चे का जन्म हो गया। जच्चा और बच्चा को साफ किया। जच्चा के नाभि प्रदेश पर पट्टी बांधी बच्चे को कपड़े में लपेट कर टोकरी में रखा और काफिला चल पड़ा। इसके विपरीत शहरी और सभ्यता की सुख सुविधाओं पर पलने वाली महिलाएं हस्पतालों में तड़प-तड़प कर बच्चे को जन्म देती हैं। महीनों बिस्तर पर आराम करती हैं और बहुमूल्य औषधियाँ तथा जीवन शक्ति देने वाली दवाइयों पर निर्भर रहती हैं। एक दो बच्चा पैदा करने के बाद वे स्वास्थ्य तथा सौन्दर्य की मोहताज हो जाती हैं।

मैं नई दिल्ली स्थित राम मनोहरलाल लोहिया हस्पताल के नर्सिंग होम के प्रांगण के लॉन

में सायंकाल टहल रहा था। मैं कई दिन से उसी लॉन में एक सभ्य सुशिक्षित व्यक्ति को परेशान हाल टहलते देखता था, मुझ से रहा न गया, मैंने उससे पूछा, "आप बहुत परेशान हैं। मैं आप की सहायता करना चाहतां हूँ।" मेरी सहृदयता तथा आत्मीयता देख कर उसने अपनी व्यथा-कथा मुझे सुनाई। चार दिन से मेरी पत्नि इस जच्चा-बच्चा वार्ड में दाखिल है। प्रसव पीड़ा के मारे वह मरी जा रही है लेकिन बच्चा जन्म नहीं ले रहा। डाक्टर व नर्सें भी परेशान हैं। बच्चा मां के पेट में ठीक है मगर प्रसव पीड़ा बेहिसाब है। मैंने उससे कहा, यदि आप भविष्य में प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने और प्राकृतिक नियमों का पालन करेंगे तो आप की पत्नि का प्रसव इतना भयावह और कष्टदायी नहीं होगा। मैंने उसे डा. जस्ट का हवाला दिया, वह मेरी बातें सुनकर आशावान हुआ और डा. जस्ट के नियमों का पालन करने का आश्वासन दिया। पशु, पक्षी एवं स्तनधारी सभी प्राणी ऋतकाल में ही संभोग करते हैं केवल मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है जो विलासी जीवन जी कर श्रेष्ठ योनि होने का दावेदार है।

जब स्त्री को यह निश्चय हो जाये कि वह गर्भवती है उसके पश्चात पुरूष उससे संभोग न करे। इतना ही नहीं जब तक बच्चा स्तन पान कर रहा है तब तक स्त्री पुरूष सम्पर्क न करे। पहले बच्चे के पांच वर्ष पश्चात दूसरा बच्चा पैदा होना चाहिये। इस नियम के पालन करने वाले स्त्री पुरूष की सन्तान सुशील, स्वस्थ निरोग सुन्दर तथा बलवान एवं मेधावी होगी। ऐसे स्त्री पुरूष को गृहस्थ ब्रह्मचारी तथा ब्रह्मचारिणी कहा जाना चाहिये। ऐसी स्त्री को प्रसव पीड़ा का अनुभव भी नहीं होगा।

आजकल पश्चिमी सभ्यता के प्रवाह में बहकर भारतवासी भी अपनी वैदिक जीवन प्रणाली को छोड़कर पाश्चात्य देशों की गलत बातों का अंधा अनुकरण कर रहे हैं। गृहस्थ जीवन को कामवासना तथा कामपिपासा को शान्त करने का साधन मान लिया है। परिवार नियोजन से स्त्री पुरूष सम्पर्क तथा संभोग को जरूरत से ज्यादा बढ़ावा मिला है। लोक लज्जा तथा सामाजिक भय भी अब उतना नहीं रहा। स्कूल कॉलेज के अधकचरी उम्र के युवक-युवतियाँ यौन सुख के लिये परेशान हैं और अपराधी जीवन में प्रवेश करते जा रहे हैं। कामी और विलासी मां बाप की सन्तान कभी भी सदाचारी और लज्जाशील नहीं होती। मेरा निश्चित मत है युवा युवतियों को स्वस्थ यौन विज्ञान सीनियर स्कूल तथा कॉलेजों में पढ़ाया जाना चाहिये ताकि वे इस विज्ञान के माध्यम से बुरे व्यसन तथा बलात्कार जैसे अपराधों के अभ्यस्त न हो जायें।

सन्तानोत्पत्ति गृहस्थ आश्रम का मुख्य धर्म है। ईसा ने ठीक ही कहा था जिस घर में शिशु की किलकारियाँ नहीं सुनाई देती वह घर नरक समान है। बच्चों के बिना तो स्वर्ग भी असुन्दर तथा सूना है। आर्य जाति ने समस्त मानव जाति को गृहस्थ आश्रम को स्वर्ग बनाने तथा सन्तानोत्पत्ति को मानव जीवन का श्रेष्ठ कार्य समझने की प्रेरणा वेद, शास्त्र ,उपनिषद, मनुस्मृति, गीता, रामायण आदि व अन्य आर्ष ग्रंथो में दी है।

मेरे एक मित्र श्री प्रीतम सिंह भाटी ने, जो काउन्सिल ऑफ साइन्टिफिक इन्डस्ट्रियल रिसर्च नई दिल्ली में सेवारत हैं, मुझे एक विचित्र बात सुनाई। उन के एक पड़ौसी श्री श्रीचन्द्र गढ़वाली जो इसी संस्था में सेवारत थे उनके ६ बच्चे थे। उनके सारे ही बच्चे स्वस्थ, सुन्दर

तथा तीव्र बुद्धि वाले थे। इन के बच्चों की एक विशेषता यह थी कि जब ये शिशु अवस्था में बैठना सीख जाते थे उसके पशचात वे घुटनों के बल या पेट के बल नहीं चलते थे बल्कि इनके सभी बच्चे बैठकर सीधा उठते और चलने लग जाते थे। ऐसा भी नहीं कि ये बैठना देर से सीखते थे बल्कि अन्य शिशुओं की अवस्था में ही बैठना और बैठकर खड़ा होना और चल पड़ना उन के लिये सहज क्रिया थी जो प्राय: अपवाद है।

प्राय: रोगी और दुर्बल बच्चे चलना, उठना, खड़े होना बड़ी मुश्किल से सीखते हैं। इसका मुख्य कारण अस्वस्थ रजवीर्य, मां बाप तथा गर्भवती मां को समुचित भोजन का अभाव है। स्वस्थ रजवीर्य की सन्तान अवश्य ही स्वस्थ और सुन्दर तथा मेधावी बुद्धि वाली होगी।

महापुरूषों तथा वीर पुरूषों की जीवनियों के सूक्ष्म अध्ययन करने से ज्ञात होता उन की माताएं स्वभाव से धर्मपारायण तथा निडर तथा दयालु थीं। जिन परिस्थितियों में उनका जन्म हुआ उनका उनके गर्भस्थ जीवन पर भी प्रभाव पड़ा था। जिन महापुरूषों का जन्म १८५७ ई. के आसपास हुआ वे प्राय: क्रान्तिकारी विचारधारा के व्यक्ति थे। गुलाम मुल्कों में बच्चे प्राय: भीरू और मन्दबुद्धि पैदा होते हैं। हमने अपने देश में यह अनुभव किया है कि जितने बच्चे सन १९४७ के पश्चात अर्थात् स्वाधीनता के पश्चात जन्में हैं वे प्राय: तीव्र बुद्धि और निडर हैं। टेलीविजन कार्यक्रम जहां ज्ञान विज्ञान का प्रचार प्रसार कर रहा है वहाँ बच्चों और युवकों में अपराध के संस्कारों का बीज भी आरोपण कर रहा है। हमारे सिनेमा घर तो बलात्कार, राहजनी, डकैती, खून करने तथा अन्य अपराधों के प्रशिक्षण देने के संस्थान बन गए हैं।

बच्चों के कोमल मन-मस्तिष्क पर वातावरण का प्रभाव बहुत शीघ्र होता है। गर्भस्थ शिशु पर वातावरण का प्रभाव होता है। द्रौपदी गर्भवती थी, अर्जुन वीरता की कहानियाँ तथा युद्ध विद्या का वर्णन उसे सुनाया करता था। चक्रव्यूह में प्रवेश करने तक तो द्रौपदी ध्यानपूर्वक अर्जुन की बातें सुनती रही मगर उससे निकलने की क्रिया नहीं सुन पायी क्योंकि उसे नींद आ गई थी। अर्जुन पुत्र अभिमन्यु की वीरता संसार प्रसिद्ध है। उस का नाम ही वीर अभिमन्यु कह कर पुकारा जाता है। अभिमन्यु कौरवों द्वारा सेना व्यूह जिसे चक्रव्यूह कहते हैं उसमें प्रवेश तो कर गया था लेकिन बाहर नहीं निकल सका। यह उसने मां के गर्भ में ही सीखा था, उसे किसी ने पैदा होने के पश्चात् सिखाया नहीं था।

मां बाप को बड़ा भ्रम तथा अज्ञान है कि छोटे बच्चे उन के कुकृत्यों को नहीं समझते। जबकि पांच छ:वर्ष की आयु के बच्चे सब कुछ अच्छा बुरा समझने लगते हैं केवल उसका विरोध अथवा अभिंव्यक्ति नहीं कर सकते। इस आयु में मां बाप को बच्चों के साथ कभी झूठ नहीं बोलना चाहिये और ऐसा कोई भी कार्य नहीं करना चाहिये जिससे बच्चे के संस्कार दूषित हो जायें। मां बाप बनना तथा सन्तान पैदा करना आसान है मगर मां बाप के कर्त्तव्यों और धर्म का पालन करना तपस्या है। जिस का हमने इस अध्याय में कई बार जिक्र किया है उन पर मां बाप को विशेष ध्यान देना चाहिए।

गर्भवंती महिला के कमरे में महापुरूषों, वीर वीरांगनाओं तथा धर्मात्माओं के मोहक चिंत्र लगे होने चाहिये इसका भी गर्भस्थ शिशु पर प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता ।

शिशु का पालन पोषण

मां ने बच्चे को जन्म दे कर मानव जाति पर बड़ा उपकार किया। लगभग ९ महीने बच्चे को अपने गर्भ में अपने रक्त से पाला पोसा। शिशु के जन्म के उपरान्त माँ का दायित्व बच्चे के प्रति कम नहीं हुआ। शिशु का गर्भ में पालन पोषण प्रकृति के विधि विधानानुसार हो रहा था। गर्भ से शिशु बाहर आ गया तो जो काम प्रकृति गर्भ में कर रही थी वह मां को करना पड़ता है। शिशु का पालन पोषण साधारण काम नहीं है। शिशु रोता है, भूखा प्यासा है, क्यों रोता है ? उसका समुचित विकास क्यों नहीं हो रहा ये सब ज्ञान यदि मां को नहीं है तो वह शिशु का पालन पोषण तथा देख रेख भली भांति नहीं कर सकती।

शिशु की गर्मी, सर्दी, पशु, पक्षी, हिंसक जानवर, रोग, भूख-प्यास आदि सभी तरह से मां को रक्षा करनी पड़ती है। सुरक्षा मां का शिशु के पालन पोषण तथा रख रखाव में प्रथम एवं सर्वोत्तम कर्त्तव्य है। शिशु के प्रति मां की ममता ये सब कर्त्तव्य स्वतः ही करा देती है। यदि मां के हृदय में ममता न होती तो मानव जाति की वृद्धि न हो कर ह्रास हो जाता। आधे से अधिक शिशु ममता के अभाव में मर जाया करते। आदिकाल में जब मनुष्य जंगलों में घुमन्तु जीवन व्यतीत किया करता था तब शिशुओं की देखभाल केवल मां पर रहती थी। उस समय तक विवाह प्रथा का जन्म नहीं हुआ था। पशु पक्षियों की तरह स्त्री पुरूष के सम्बन्ध हो जाते थे और बच्चे जन्म ले लेते थे। सामाजिक तौर पर बच्चे की मां तो वही होती जिसकी कोख से शिशु ने जन्म लिया है मगर पिता का पता नहीं था।

आर्य जाति के दीर्घतमा ऋषि ने विवाह प्रथा को जन्म दिया। औरत ने जिस मर्द को कहा कि यह इस बच्चे का बाप है वही पिता घोषित किया जाता था बाद में इस प्रथा में भी सुधार आया। पति पत्नि का निश्चय शिशु के जन्म से पूर्व किया जाने लगा यहीं से विवाह प्रणाली का जन्म हुआ जो अभी तक प्रचलित है।

मां की ममता का शिशु के पालन पोषण और देखरेख में प्रथम स्थान है। यदि मां सुशिक्षित और प्रशिक्षित है तो अपने शिशु की देखभाल वैज्ञानिक तरीके से करेगी वरना अनपढ़ मां परंपरागत तरीके से बच्चे का पालन पोषण करेगी। बच्चा बीमार पड़ गया तो वह अन्धविश्वास के कारण भूत-प्रेत, झाड़ा-झपाड़ा, जादू-टोना के चक्र में पड़ जायेगी और बच्चा एक दिन मौत का शिकार हो जायेगा। भारत की स्वाधीनता से पूर्व मनुष्य की औसत आयु २२ वर्ष थी जो अब ५५ वर्ष हो गई है। बच्चों की मृत्यु बहुत हुआ करती थीं लेकिन आजादी आने के पश्चात शिशु मृत्यु दर बहुत घट गई है। संक्रामक रोगों पर भी नियंत्रण कर लिया गया है। आजादी से पूर्व मलेरिया बुखार से देश में लाखों बच्चे, औरतें तथा वृद्ध मौत के शिकार हो जाया करते थे।

कल्याणकारी राज्य होने के कारण हमारी केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारें स्वास्थ्य सम्बन्धी

सेवाओं तथा समाज के अभावग्रस्त वर्ग के कल्याण के लिये अनेक उपयोगी योजना तथा कार्यक्रम चालू किए हुए हैं। खण्ड विकास स्तर पर प्राइमरी हैल्थ सेन्टर तथा उससे निम्न स्तर पर सब हैल्थ सेन्टर गांवों में सरकार द्वारा चलाये जाते है। अभी भी इस सम्बन्ध में काफी सुधार की आवश्यकता है।

मां बच्चे का पालन पोषण वैज्ञानिक तरीके से करेगी तो बच्चा अधिक स्वस्थ, निरोग तथा शारीरिक तौर पर बलिष्ठ होगा। मां के अज्ञान के कारण बच्चे को सारी आयु दुःख भोगना पड़ता है। इसलिये हम कुछ अनुभूत जानकारी इस सम्बन्ध में पाठकों को देना जरूरी समझते हैं।

प्रायः जब बच्चा रोता है उसकी मां से उसका बिलखना सहन नहीं होता। अपने घरेलू काम काज को निपटाने के कारण वह बच्चे को अफीम खिलाकर सुला देती है। जिसके कारण शिशु अफ़ीम के नशे में गफ़लत में पड़ा रहता है मां अपने काम में व्यस्त रहती है। शिशु को अफ़ीम का नशा कितनी हानि पहुंचाता होगा इसका सहज अनुमान लगाया जा सकता है। हमने ऐसे अनेक बच्चे देखे हैं जो शिशुकाल में मां ने अफ़ीम खिलाकर पाले थे। ये बच्चे प्रायः मन्द बुद्धि, सुस्त, निकम्मे तथा पढ़ाई लिखाई और खेलकूद में फिसड्डी पाये जाते हैं। प्रायः ये काम चोर और स्वभाव से माता पिता की अवज्ञा करने वाले पाये जाते हैं। इसलिये बच्चा चाहे कितना ही रोये उसे कभी भी नशीले पदार्थ खिलाकर या सुंघा कर नहीं सुलाना चाहिये। स्मरण रहे बच्चे के फेफड़े जितना हंसने से मजबूत होते हैं उतना ही रोने से भी स्वस्थ होते हैं। अतः माता को उचित है कि अपने शिशु को कदापि नशीले पदार्थों का आदी न बनायें इससे बच्चे की बुद्धि का विकास न हो कर विनाश तथा ह्रास होता है।

प्रायः बच्चे गांवों में मिट्टी में खेलते रहते हैं। घुटनों के बल धरती माता के पेट पर चलना सीखते हैं। जिन शिशुओं में कैल्शियम तत्व का अभाव होता है वे मिट्टी खाने लगते हैं, जिस का कई अज्ञान माताओं को ज्ञान भी नहीं रहता। मिट्टी खाने वाले शिशु का पेट खराब रहने लगता है। आमाशय के रोग उसे बचपन से ही लग जाते हैं जो कई बार तो सारी उम्र पीछा नहीं छोड़ते। बच्चे बहुधा मिट्टी में खेलना पसन्द करते हैं। उनके हाथ प्रायः गन्दी मिट्टी से भरे रहते हैं जिन्हें वे कई बार आंखों में लगा देते हैं जिससे बच्चे की आंखे दुखने आ जाती हैं और प्रायः रोहे, कुकरे आदि आंख के रोग बच्चे की आंख को पकड़ लेते हैं। यदि मां को इस बात का ज्ञान है तो बच्चे को इन बीमारियों से बचाया जा सकता है।

अनपढ़ और अज्ञानी माताएं बच्चे के सिर पर जहां ब्रह्मरन्ध्र अर्थात कपाल होता है घी अथवा मक्खन लगाया करती हैं। निर्धन माताएं सरसों आदि का तेल सिर की मालिश व ब्रह्मरन्ध्र (कपाल) पर लगाया करती है। जिन शिशुओं के ब्रह्मरन्ध्र (कपाल) के स्थान पर घी या मक्खन (लोनी घी) लगाया जाता है। बड़े होने पर इनके सिर ठण्डी और गर्मी का प्रभाव दूसरे बच्चों की अपेक्षा बहुत अधिक रहता है। ऐसे बच्चों के बड़े होने पर उन्हें सिर पर अधिक ठण्ड लगती हैं और गर्मियों में धूप बहुत लगती है। धनवान माताओं को बच्चे के सिर पर तथा ब्रह्मरन्ध्र पर बादाम रोगन लगाना चाहिये। जिस शिशु के सिर पर बादाम रोगन की मालिश होती रही है उसके सिर पर ठण्ड और धूप का कुप्रभाव कभी भी नहीं पड़ेगा।

उसे प्राय: नज़ला तथा मस्तिष्क के रोग भी नहीं लगेंगे। शिशु अवस्था में पालन की हुई यह छोटी सी बात कितनी प्रभावशाली तथा दूरगामी परिणामों से भरपूर है। सरसों का तेल घरों में प्राय: उपलब्ध है वह भी निस्संकोच प्रयोग में लाया जा सकता है। लेकिन घी व मक्खन का प्रयोग शिशु के सिर पर भूल कर भी न किया जाये तो मां का अपने बच्चे पर उपकार होगा

अशिक्षित तथा शिक्षित अज्ञानी माताएं बच्चे को स्नान कराने से जी चुराती हैं वे समझती हैं नहलाने से शिशु को ठण्ड लग जायेगी और वह रोगी हो जायेगा। कपड़े भी गन्दे होने पर नहीं बदलतीं। बार-बार कपड़ों को कौन धोये ? शिशु को सर्दी के मौसम में एक बार अवश्य ताजा पानी से अथवा सूर्य के ताप से गर्म हुए पानी से स्नान कराया जाना चाहिये। यह ध्यान रखा जाये कि शिशु को स्नान कराते समय हवा से बचाना है। लोहे के गहरे तसले अथवा चौड़ी बाल्टी में ताजा पानी निकालकर जहां सूर्य की किरणें तेज पड़ रहीं हों वहाँ रख दो घंटे भर में पानी बच्चे के तापमान के समान गर्म हो जायेगा। अब तो सौर चूल्हे भी प्रचलित हो गए। तांजा पानी से नहाने वाला शिशु कभी भी स्नान करने से जी नहीं चुरायेगा। उसकी त्वचा सौ वर्ष की आयु तक स्वस्थ स्निग्ध तथा झुर्री रहित रहेगी। बच्चे के गंदे कपड़े फौरन बदलने चाहिये। शिशु को सस्ते कपड़े पहनाएं ताकि कई जोड़े कपड़े उस के लिये धुले हुए उपलब्ध रहें।

शिशु के पहनने और ओढ़ने के कपड़े रूई के हों। टैरीकॉट, टैरालीन अथवा बनावटी रेशे के न हो। सर्दियों में ऊनी और गर्मियों में कपास अथवा रूई के बुने हुए कपड़े होने चाहिये। शिशु को कभी भी तंग अथवा फिट कपड़े न पहनाएं इस से शिशु गर्मियों में विशेष कर परेशान हो जाता है उसके पहनने के कपड़े न अधिक ढीले न अधिक तंग हों। उसके कुर्ते जरसी आदि की बांहे लंबी नहीं होनी चाहिये। ऋतु के अनुसार शिशु के कपड़े होने चाहिये। ऋतु परिवर्तन में शिशु प्राय: रोगी हो जाते हैं। आती और जाती ठण्ड बच्चों को अस्वस्थ बना देती हैं, इसलिये मौसम बदलते समय मां बच्चे के कपड़े आदि का पूरा ध्यान रखे।

शिशु जितना लेटा-लेटा अपने हाथ पैर हिलाता रहता है उतना ही वह स्वस्थ और निरोग रहता है। बच्चे के इस हाथ पैर हिलाने की क्रिया को योगाचार्यों ने बालमचलन नामक आसन कहा है जो साल.भर तक के बच्चे के लिये सर्वोत्तम व्यायाम है। प्राय: शिशु को गोदी में रखने को बड़ा लाड़ प्यार माना जाता है। जिस शिशु को गोदी में खेलने की आदत पड़ जाती है उसका पेट प्राय: खराब रहेगा। उसकी पाचन क्रिया बालमचलन करने वाले शिशु की अपेक्षा मन्द रहेगी। इसलिये शिशु को गोदी में कम से कम रखना चाहिये। सालभर के शिशु को उसके पैरों पर खड़ा होना और सहारा देकर चलना सिखाना चाहिये। इससे उसके पैर मजबूत बनेंगे और पाचन क्रिया भी ठीक रहेगी।

एक बात और ध्यान रखी जाये कि बच्चे की देखरेख तथा पालन पोषण आया, धाय तथा अन्य किसी नौकर महिला पर पूरी तरह न छोड़ा जाये उनकी सहायता अथवा सहयोग लिया जा सकता है। मां शिशु में जितना सामीप्य रहेगा उतना ही उन दोनों का प्यार हिलोरें

लेगा। जिस बच्चे को अपनी मां का दूध और प्यार व दुलार नहीं मिला है वह बड़ा होने पर कठोर हृदय तथा निष्ठुर व्यक्ति बन जाता है।

कई माताओं का दूध विशेष कारण से विषाक्त होता है। प्रायः ऐसी माताओं के शिशु अपनी मां के जहरीले दूध को स्तन द्वारा पी पी कर मर जाते हैं। इस रोग का ज्ञान मां को नहीं रहता वरना वह अपने शिशु को जहरीला दूध क्यों पिलाती ? जिस स्त्री के बच्चे का स्वास्थ्य निरन्तर गिरता जा रहा है उसे अवश्य अपने दूध की परीक्षा करानी चाहिये और तदानुसार अपने इस भयंकर दुश्मन रोग का अच्छे बाल विशेषज्ञ अथवा योग्य डाक्टर से उपचार कराना चाहिये। वरना वह मां अपने बच्चे की हत्यारी अज्ञानतावश बन जायेगी। ऐसे केसों की जानकारी मुझे डा.ए.के. बनर्जी ने दी थी जिन के पास बाल रोगों और माता के रोगों के रोगियों का नित्य मेला सा लगा रहता था। उनका क्लीनिक शहादरा (दिल्ली) में था और निवास २३, दरियागंज अन्सारी रोड, दिल्ली में था। वे उच्च कोटि के औषधि विशेषज्ञ तथा सर्जन थे। -

जिस मां के दूध में विषैलापन है, ऐसी मां से अन्य शिशुओं की माताओं को सावधान रहना आवश्यक है। प्रायः महिलाएं अन्ध विश्वासी होती है। उनसे यदि कोई जादू टोने वाला यह बता दें कि किसी दूसरे शिशु को अपने स्तन द्वारा दूध पिला देगी तो तेरा बच्चा निरोग हो जायेगा तो यह पाप वह अवश्य कर देगी और किसी शिशु को अपना जहरीला दूध पिला कर रोगग्रस्त कर देगी। ऐसी घटनाओं की मुझे निजी जानकारी है। अतः विषैले दूध वाली तथा सूखा रोगग्रस्त बच्चे की मां से स्वास्थ्य शिशु की मां को सदैव चौकस रहना चाहिये।

मां का दूध सर्वोत्तम खुराक

शिशु के लिये मां के स्तन का दूध सर्वोत्तम आहार है। प्राचीनकाल से ही शिशु के लिये मां का दूध संतुलित, पौष्टिक तथा सुपाच्य आहार माना गया है। आधुनिक वैज्ञानिकों, आहार विशेषज्ञों तथा बाल चिकित्सा विशेषज्ञों ने भी मां के स्तन के दूध को शिशु के लिये उत्तमोत्तम आहार मान लिया है। जब तक बच्चे के दान्त न निकल आयें तब तक बच्चे को अन्न तथा चबाने वाले पदार्थ खाने के लिये बिल्कुल नहीं देना चाहिये। जब बच्चा ९ महीने का हो जाए तब उसे केले का गूदा, चीकू का गूदा, सब्जी का बिना मिर्च व गरम मसाले का सूप तथा मुलायम सब्जी का पका हुआ गूदा छोटे-छोटे टुकड़े करके शिशु को खिलाना चाहिए। बड़े टुकड़ों को वह सटक सकता है और उसके गले में फंसने का भय रहता है। यदि बच्चे को प्रारंभ से छोटे-छोटे टुकड़े चबा-चबाकर खाने की आदत पड़ जाये तो उसे आजीवन चबाकर भोजन खाने की आदत बनी रह सकती है। भोजन चबाकर खाने से भोजन भली भांति पच जाता है और भोजन से सात धातु तत्व सम अनुपात में तैयार होते हैं जो शरीर को स्वस्थ, सुडौल और सबल बनाते हैं। समय पर भोजन करने वाले तथा भोजन चबाकर खाने वाले व्यक्ति को कभी भी पेट विकार तथा आमाशय के रोग नहीं लगते।

बच्चे के दान्त निकलने पर दाल, दलिया तथा खिचड़ी तथा सब्जी, बिस्कुट तथा फ्रूटी

ब्रैड के टुकड़े मां अपने हाथ से थोड़ा-थोड़ा करके खिलाये। जब वह इन पदार्थों को ठीक प्रकार से हज़म करने लग जाये तब रोटी कम सब्जी अधिक खिलाये। दान्तों से चबा कर खाने वाले मीठे, पके तथा ताजा फल धोकर खिलायें। बच्चे को एक बार ठूंस-ठूंस कर न खिलायें। थोड़ा-२ करके दिन में कई बार आहार दें। दूध, फल, रोटी, सब्जी, बिस्कुट, दलिया, खिचड़ी आदि अदल बदल कर शिशु को खिलायें। बाल आहार वैज्ञानिकों का मत है कि शिशु पूरे दिन में कुल मिलाकर अपनी माता के तुल्य आहार पचा लेता है। बच्चे की जठराग्नि बहुत तीव्र तथा भोजन को पचाने वाली होती है। इसलिये उसे जल्दी-जल्दी भूख लगती है। इसलिये उसे जितनी बार भूख लगे उतनी ही बार थोड़ा-थोड़ा ठोस व पेय आहार अदल बदल करके दिया जाना आवश्यक है। शिशु को यदि अधिक भोजन खाने का अभ्यास हो गया तो वह आजीवन अधिक आहार करने का अभ्यस्त हो जायेगा जिससे आमाशय के कई रोग बड़ी उम्र में उसे लग जायेंगे।

शिशु के लिये मां के स्तन द्वारा पीया जाने वाला दूध क्यों सर्वोत्तम आहार माना गया है ? प्रथम तो प्रकृति ने मां के वक्षस्थल में दो स्तन दूध के लिये दिए हैं। जिन में शुद्ध, सात्विक, पौष्टिक सुपाच्य दूध बच्चे के लिये मां के हृदय के समीप बच्चे के लिये उपलब्ध है। शिशु और मां का एक दूसरे के प्रति घनिष्ट आत्मीयता का साधन बच्चे का मां का स्तन मुंह में डाल कर दूध पीना है। मां और शिशु दोनों इस तरह दूध पीने से और पिलाने से अलौकिक आनन्द प्राप्त करते हैं। स्तन द्वारा दूध पीकर शिशु की क्षुधा शान्त होती है और मां के प्यार का सागर हिलोरें लेने लगता है। संसार भर में आदिम जातियों से लेकर सभ्य जातियों तक की माताएं अपने शिशुओं को अपने स्तन का दूध पिलाकर फूली नहीं समाती हैं।

दूसरी विशेषता मां के दूध की यह है वह न गर्म करना पड़ता है न ठण्डा करके बोतल में भरना पड़ता है। वह प्राकृतिक तौर बच्चे के लिये सम तापमान वाला दूध है। किसी भी प्रकार की बाह्य गन्दगी से मां का दूध सुरक्षित हैं जबकि अन्य दूध का प्रदूषण से बचाना काफी कठिन कार्य हैं। जिसके द्वारा बच्चे को रोग आसानी से लग जाते हैं। इसके विपरीत मां के स्तन का दूध प्रदूषण रहित तथा रोग रहित तो है ही इस के अन्दर प्रकृति ने रोग निरोधक शक्ति भी भरपूर मात्रा में प्रदान की है। बाल आहार वैज्ञानिकों का मत है कि स्वस्थ एवं निरोग मां के स्तन पान करने वाले शिशु को दस्त, कान की बीमारी, सांस (श्वास) तथा छाती के रोगों से छुटकारा मिला रहता है शुगर तथा कैंसर जैसे भयंकर रोग बड़े होने पर भी उसे नहीं लगेंगे जबकि बोतल के निप्पल द्वारा दूध पीने वाले शिशु को इन रोगों के लगने का पूरा-पूरा खतरा बना रहता है। स्तन का पहला दूध पतला और बाद का दूध गाढ़ा होता है। ये दोनों ही दूध शिशु के लिये आवश्यक हैं क्योंकि ये शिशु का प्राकृतिक आहार है जो प्रकृति का उसके लिये अनुपम उपहार हैं।

तीसरे मां का दूध बाहर निकाल कर भी आठ घंटे तक खराब नहीं होता। फ्रिज में वह दूध चौबीस घंटे ठीक रह जाता है। अन्य दूध जो फ्रिज में रखा गया हो उसे बच्चे को गर्म करके पिलायेंगे तो उस दूध में रोगों से बचाने की क्षमता नष्ट हो गई होती है। मां का दूध

कीटाणु रहित होता है। मां के वक्षस्थल में बच्चे की आवश्यकतानुसार ही दूध बनता है। यह भी कुदरती करिश्मा है। स्तनपान करने वाले शिशु को कैंसर जैसी बीमारी से बचाव रहता है।

चौथे मां के दूध में सारे तत्व मौजूद हैं जो शिशु के शरीर निर्माण के लिये आवश्यक हैं। इसीलिये इस दूध में रोग निवारक शक्ति है। मां का दूध प्राकृतिक है इसे खरीदना नहीं पड़ता न खरीदा जा सकता है। स्तनपान कराने वाली मां का स्वास्थ्य व सौन्दर्य निखर जाता है। बोतल के द्वारा दूध पीने वाले शिशु को मां के स्तनपान करनेवाले शिशु की अपेक्षा पच्चीस गुणा दस्त अधिक लगते हैं और जरा सा मौसम बदलते ही और जरा सी लापरवाही करते ही बच्चा रोगों का शिकार हो जाता है। मां के दूध को बच्चा स्तन द्वारा पीता है। स्तन मां के शरीर का प्रमुख अंग है जिसे शिशु चूसता है जिससे मां का शिशु के प्रति और शिशु का मां के प्रति प्यार और निकटता बढ़ती है और बराबर बनी रहती है। यही कारण है बच्चा संसार में सबसे पहले अपनी मां को पहचानना सीखता है और मां को वह भूलता भी नहीं है। ये भी कुदरती प्रेमलीला है, मां और शिशु जैसा पवित्र आध्यात्मिक प्रेम संसार में मिलना दुर्लभ है जो कुदरत की मां और शिशु को अद्भुत देन है।

आजकल सुशिक्षित व अनपढ़ महिलाएं भी जो धनवान है बच्चे को बाहर का दूध पिलाना अपनी शान समझती हैं और बच्चे की देखभाल अन्य महिला नौकर से कराती हैं। बच्चे के लालन पालन तथा पालन पोषण को वे व्यर्थ का बोझ समझती हैं। उन को ये भी भ्रम रहता है कि बच्चे को अपने स्तन का दूध पिलाने से उनके सौन्दर्य और शरीर सौष्ठव की हानि होती है। परंतु ये भ्रम अब धीरे-२ अंधविश्वास का रूप लेता जा रहा है जो मानव जाति के लिये अभिशाप सिद्ध होगा। हमारा निश्चित मत है कि मां को अपने शिशु को अपने स्तन का दूध ही पिलाना चाहिए तथा बच्चे के पालन पोषण को बोझ न समझकर अपना नैतिक तथा राष्ट्रीय कर्तव्य समझना चाहिये।

किन्हीं कारणवश जिन माताओं के स्तन में दूध कम है या शिशु की आवश्यकता पूरी नहीं होती है वे माताएं शिशु को गाय तथा बकरी का दूध पूरी सावधानी बरतते हुए दे सकती हैं। बाल रोग विशेषज्ञ बोतल के निप्पल द्वारा दूध पिलाने को कीटाणुओं से सुरक्षित नहीं मानते। उन का मत है शिशु को चम्मच, प्याले द्वारा प्रारंभ से ही दूध पिलाया जा सकता है बच्चा आराम से पीना सीख जाता है। लेकिन मां को स्वयं पिलाना चाहिये। पहले पांच महीने तक तो मां का दूध जितना भी उपलब्ध है वह शिशु जरूर पिलाना चाहिये। वह शिशु को अनेक रोगों से बचायेगा।

मां को स्वयं बहुत पौष्टिक, सात्विक, संतुलित आहार लेना चाहिये तभी उसका दूध निरोग और बलिष्ठ होगा। मां खुले कपड़े पहने ब्रा भी ढीला पहनना जरूरी है। अपने स्तनों पर किसी भी दवाई का अपने डाक्टर की अनुमति के बिना लेप न करे। शिशु को सदैव प्रसन्न मन और सुखद अवस्था में स्तनपान करायें। स्तन को सदैव स्वच्छ रखे बच्चे के मुंह में स्तन देने से पूर्व और बाद में अवश्य साफ़ कर लेना चाहिये।

यदि दुर्भाग्यवश मां की मृत्यु हो जाये और शिशु जीवित रह जाये तो उसे अन्य स्वस्थ

स्त्री के स्तनपान द्वारा भी पाला जा सकता है। यदि ऐसी स्त्री परिवार में नहीं है तो धाय या धात्री नौकर रखी जा सकती है। विश्व इतिहास में पन्ना जैसी मां तथा धाय दूसरी नहीं। पन्ना ने अपने पुत्र चन्दन सिंह को उदयपुर के भावी सम्राट उदयसिंह के स्थान पर बनवीर द्वारा कत्ल करने के लिये लिटा दिया था। बनवीर ने उदय सिंह समझकर चन्दन सिंह को तलवार से काट दिया था। पन्ना जाति की गुर्जर थी उसने अपने कलेजे पर पत्थर रख कर राणा संग्रामसिंह मेवाड़ नरेश के वंश को समाप्त होने से बचाया था और अपने पुत्र चन्दन सिंह का बलिदान दे कर अद्वितीय उदाहरण विश्व विख्यात कर दिया। इसी उदयसिंह के रक्त से महाराणा प्रताप का जन्म हुआ। यदि उदयसिंह मारा जाता तो भारत के गौरव, महान देशभक्त, महाबली, इतिहास पुरूष, राणा प्रताप कहां से पैदा होते ? मेवाड़ का राजवंश ही नहीं, समस्त भारत पन्ना धाय के इस बलिदान का ऋणी है।

पन्ना धाय का बलिदान देश प्रेम और कर्तव्य पालन तथा कर्तव्य परायणता की अद्वितीय मिसाल है। कोई मां अपने हृदय के टुकड़े, पुत्र को अपने सामने तलवार से टुकड़ों में कटता हुआ नहीं देख सकती जिसे पन्ना ने देखा था। राजपूताने और राजपूत राजवंशों में धाय प्रथा का प्रचलन राजपूत जाति की उत्पत्ति के समय से चला आ रहा है। राजपूत वंशों में आज भी यह कहावत प्रसिद्ध है कि राजपूत वही हो सकता जिसने गुर्जरी का दूध पीया हो वे गुर्जरी के दूध को शेरनी का दूध मानते हैं। इसलिये गुर्जर महिलाएँ राजमहलों तथा धनाढ्य राजपूत परिवारों में धाय रखी जाती थीं और धाय के पुत्र को धा-भाई कहा जाता रहा है। यह प्रथा राजस्थान के मेवाड़ में बहुत प्रचलित रही है।

राजस्थान में राजपूतों की देखादेखी अन्य सम्पन्न परिवारों ने धाय प्रथा का पालन करना शुरू कर दिया था। भारत के प्रसिद्ध उद्योगपति गूजरमल मोदी को गुर्जर धाय ने पाला था इनकी मां की मृत्यु शिशुकाल में हो गई थी। इनका बचपन का नाम कुछ और था लेकिन उस धाय की याद में इन का नाम गूजरमल मोदी रखा गया था।

अत: मां की अनुपस्थिति में अन्य निरोग तथा स्वस्थ महिला के दूध की परीक्षा कराके उस का दूध शिशु को दिया जा सकता है। पांच छः मास तक स्तन का दूध शिशु के लिये परमावश्यक होता है। बाद में स्वस्थ गाय अथवा बकरी के दूध से बच्चे का पालन पोषण हो जाता है और दान्त निकलने के उपरान्त वह ठोस आहार पर निर्भर रह सकता है। वास्तव में बच्चे राष्ट्र की धरोहर हैं जिसे मां बाप ने पाल पोस कर राष्ट्र की सेवा और सुरक्षा के लिये तैयार करना है इसीलिये मैंने बच्चे के पालन पोषण को मां का नैतिक एवं राष्ट्रीय कर्तव्य माना है।

हमारे देश में पूर्व स्व. राष्ट्रपति डा. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू का जन्म दिवस (१४ नवंबर १८८९) बाल दिवस के रूप में मनाने की प्रथा शुरू की थी। सारा देश बाल दिवस मना कर लोकप्रिय नेता नेहरू को याद करता है। बच्चों के समारोह सारे देश में इस दिन गांव-२ और शहर और कस्बों में आयोजित किये जाते हैं। मैंने, जब मैं दयानन्द पब्लिक स्कूल, फरीदाबाद का प्रिंसिपल था, बालदिवस परंपरा को बड़े पैमाने पर मनाने का सिलसिला शुरू किया था। एक बार मैंने इसे अन्तरराष्ट्रीय

बालदिवस मनाने का मन भी बना लिया था, मगर हमें परराष्ट्रों के दूतावासों और उनके स्कूलों ने व्यवस्था का बहाना बनाकर सहयोग नहीं दिया।

बाल दिवस के अवसर पर स्वस्थ मां और स्वस्थ शिशु प्रदर्शनी सरकारी स्तर पर आयोजित होनी चाहिये और स्वस्थ शिशु तथा बालक बालिकाओं और उनकी माताओं को समाज व बाल कल्याण कार्यक्रम के अन्तर्गत पुरस्कार देने चाहियें। इससे मां-बाप का ध्यान बच्चे और बच्चे की मां के स्वास्थ्य की ओर जायेगा। इस शुभदिन पर भाषणबाजी के स्थान पर कुछ ठोस कार्यक्रम होने चाहियें। हमने बाल दिवस पर स्वस्थ शिशुओं की माताओं को सार्वजनिक तौर पर पुरस्कार भी दिए थे जिसे स्थानीय नागरिकों ने बहुत पसन्द किया था।

कल-कारखानों के मालिक अपने वर्करों के शिशुओं और उन की माताओं के अच्छे स्वास्थ्य के लिये पुरस्कृत कर सकते हैं। इससे मालिक और मजदूरों के सम्बन्धों में मधुरता तथा समीपता बढ़ेगी। नागरिक समाज सेवी संगठन, रेड क्रास संगठन, रोटरी तथा लायन्स क्लब भी स्वस्थ शिशु, स्वस्थ मां पुरस्कार योजना चलाकर एक प्रशंसनीय और राष्ट्रहित का कार्य कर सकती हैं। सब के सहयोग से ही राष्ट्र सबल, सुन्दर और महान बनता है, अकेले सरकार से नहीं।

बचपन की संभाल-संवार

जिस प्रकार एक कलाकार किसी मूर्ति को बड़ी सावधानी से तैयार करता है उसी प्रकार मनुष्य के बच्चे को संभाल कर रखना बहुत जरूरी है तभी वह अच्छे व्यक्तिव का मालिक बन सकता है। मां-बाप बच्चे को जन्म देकर अपने कर्तव्य की इति श्री समझ लेते हैं इसलिये उन के बच्चे गली मौहल्ले के बच्चों से गंदी-गंदी बातें सीख कर अपना जीवन बर्बाद कर लेते हैं। बच्चे की देखभाल और उसको अच्छे संस्कार और शिक्षा देने का प्रमुख तथा प्रथम दायित्व मां-बाप तथा आचार्य का होता है। ये तीनों अपनी-अपनी जगह पर बच्चों के जीवन के निर्माण और विनाश के लिये उत्तरदायी हैं।

सब से पहले बच्चा, शिशु अवस्था से बचपन तक अधिक से अधिक मां के सम्पर्क में रहता है। मां का कर्तव्य और उस का धर्म अपने बच्चे के प्रति क्या है, अधिकतर माताओं को इसका ज्ञान भी नहीं हैं। बच्चे का जन्म, अर्थात गर्भ में निर्माण, बच्चे का पालन पोषण बच्चे को अच्छी और साफ सुथरी आदतों का अभ्यास तथा उसे हृष्ट-पुष्ट एवं बलिष्ठ तथा बुद्धिमान बनाने के पौष्टिक, सात्विक तथा संतुलित आहर देने का वैज्ञानिक ज्ञान एवं नैतिक शिक्षा का अभ्यास कराना मां के प्रमुख कर्तव्य हैं। हमारे देश की अस्सी प्रतिशत माताएं अनपढ़ तथा निर्धन हैं। अशिक्षा और अभाव के कारण हमारी माताएं बच्चों की देखभाल और पालन पोषण ठीक तरह से नहीं कर पातीं।

नेपोलियन बोनापार्ट कहा करता था कि यदि तुम मुझे साठ अच्छी माताएं दे दो तो मैं तुम्हें एक महान राष्ट्र दे दूंगा। कहने में यह बात साधारण मालूम होती है मगर यह वाक्य अक्षरश: सत्य है। शिवाजी को महान् बनाने वाली उस की मां जीजाबाई तथा गुरू रामदास

थे। मोहनदास कर्मचन्द गांधी को राष्ट्रपिता महात्मा गांधी बनाने वाली उन की मां थीं। समझने और समझाने के लिये ये उदाहरण पर्याप्त हैं। जब तक अच्छी माताएं नहीं होंगी उत्तम सन्तान पैदा होने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। इसलिये महिला शिक्षा सर्वोपरि है। आजकल जो छात्राओं को स्कूल कॉलेज में पढ़ाया जाता है उसमें बहुत सुधार की जरूरत है।

महिला शिक्षा में वे सभी चीजें पढ़ाईं जानी चाहियें जो मां बनने और बच्चे के लालन पालन तथा बाल शिक्षा का ज्ञान बच्चे को दे सके। संक्षेप में मां को आवश्यक शरीर विज्ञान, बाल मनोविज्ञान, पाक कला तथा बाल रोगों का ज्ञान होना जरूरी है। दसवीं कक्षा तक संक्षिप्त में हर कन्या को इन विषयों का ज्ञान कराया जाना जरूरी है। मनुष्य के बच्चे को हर चीज का ज्ञान कराया जाता है उसे बोलना, बैठना, खड़े होना, चलना, दौड़ना, तैरना, पढ़ना-लिखना आदि सभी सीखना और सिखाना पड़ता है। जबकि पशु और पक्षी के बच्चों को ये कुछ भी सिखाने की जरूरत नहीं हैं। वे स्वभावत: ही सब कुछ जानते होते हैं। गऊ के बछड़े या बछड़ी को आप जन्मते ही तालाब में फैंक दे वह स्वत: ही तैरने लगेगा। लेकिन मनुष्य चाहे पचास वर्ष का हो जाये उसे तैरना सीखना और सिखाना पड़ेगा।

जब तक बच्चा विद्यालय जाने योग्य नहीं हो जाता तब तक उसकी मां ही उसकी शिक्षक भी होती है। वह बच्चे को धीरे-२ चबा-चबाकर खाना खाना, नहा धोकर ऋतु अनुकूल वस्त्र पहनने, समय पर सोना जागना, शौचादि निवृत होने का ज्ञान स्वयं कराती है। घर पर आने जाने वाले लोगों से नमस्ते आदि अभिवादन का बोध कराती है। बच्चे के मन तथा मस्तिष्क पर मां नैतिक शिक्षा का गहरा प्रभाव डालती है जैसे सत्य बोलना, झूठ नहीं बोलना, आज्ञा पालन करना, बिना पूछे किसी वस्तु को न लेना तथा कुछ लेने पर धन्यवाद आदि कहना। जिस प्रकार किसी भवन की नींव के पत्थर नज़र नहीं आते उसी प्रकार बच्चे में मां के द्वारा दी हुई नैतिक तथा व्यावहारिक शिक्षा नज़र नहीं आती है जिस पर व्यक्ति के चरित्ररूपी भवन का निर्माण हुआ है।

संक्षेप में मां को चाहिये कि अपने बच्चे का दिन भर का कार्यक्रम बना ले। सूर्योदय से कम से कम एक घंटा पूर्व बच्चे को उठने का अभ्यास होना चाहिये। बच्चे को प्रारंभ से ही समय पर प्रत्येक काम करने कराने का अभ्यास कराना चाहिये। सफाई का अभ्यास भी प्रारंभ से ही ठीक रहता। स्कूल का गृहकार्य रोज के रोज कराना आवश्यक है।

बच्चे के लिये मनोरंजन और खेल के साधन अवश्य उपलब्ध हों। यदि बच्चे को खेलने का अवसर नहीं दिया गया तो उसके व्यक्तिव का विकास होना कठिन है। बच्चे गंदी आदतें घरेलू नौकरों और स्कूल तथा गली मौहल्ले के बच्चों से बहुत जल्दी सीखते हैं। बच्चे प्राय: गाली देना, बात-बात में झूठ बोलना, एक दूसरे को मारना पीटना, लड़ना-झगड़ना सीखते देर नहीं लगाते। बच्चा फूल और पौधे के समान है जिसे टेढ़ा-मेढ़ा होने से रोका जा सकता है और उसे सुन्दर वृक्ष बनाया जा सकता है। बड़ा होने पर वृक्ष को सीधा करना असम्भव है यही हालत बच्चे की है जो गंदी आदतें, व्यसन तथा संस्कार बचपन में पक्के हो गए उन्हें साक्षात् ब्रह्मा भी नहीं बदल सकते।

घर के चार दीवारों के अन्दर माँ का राज्य रहता है जैसे ही बच्चा घर से बाहर निकलना

सीखा और स्कूल जाने योग्य बड़ा हुआ अब पिता का दायित्व प्रारंभ हो जाता है। घर के अन्दर भी बच्चे के लिए सुख-सुविधाएँ जुटाना पिता का ही कर्त्तव्य होता है मां तो केवल बच्चे को उन के उपयोग सिखाती है। पिता जिस विद्यालय में अपने बच्चे को दाखिल करे तो यह अवश्य देखे कि उस विद्यालय में वे सब सुविधाएं उपलब्ध हैं जो उसके बच्चे को घर पर प्राप्त हैं। यह भी उसे देखना चाहिए शिक्षक शराबी, धूम्रपान करने वाला, गाली गलौज करने वाला तो नहीं है जो कि आजकल स्कूलो में सामान्य बन गया है। बच्चे के मन पर शिक्षक का प्रभाव बहुत गहरा पड़ता है। यदि शिक्षक का आचरण सन्देहास्पद तथा समाज की दृष्टि में संदिग्ध एवं आदर्श नहीं है तो बच्चों को ऐसे शिक्षक को सौंपना अभिभावकों द्वारा अपने बच्चों का हितसम्पादन नहीं है।

हमारे शास्त्रों में शिक्षक को आचार्य कहा गया है। आचार्य वही होता है जो महान विद्वान तथा उच्च आचरण का स्वामी हो। जिस का चरित्र आदर्श हो। जिस की कथनी और करनी में अन्तर न हो। जिसका आचरण और ज्ञान एक हो। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आचार्य की व्याख्या इस प्रकार से की है :- आचार्य उस को कहते हैं जो सांगोपांग वेदों के शब्द, अर्थ, सम्बन्ध और क्रिया का जानने द्वारा छल कपट रहित, अति प्रेम से सब को विद्या का दाता, परोपकारी, तन मन और धन से सब को सुख बढ़ाने में जो तत्पर, महाशय, पक्षपात रहित और सत्योपदेष्टा, सब का हितैषी, धर्मात्मा तथा जितेन्द्रिय होवे।

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा के विषय में इस प्रकार कहा है :- शिक्षा, व्यक्ति में विद्यमान दिव्य गुणों को उजागर करती है। शिक्षा का ध्येय वास्तव में मनुष्य का बहुमुखी निर्माण करना है। शिक्षा से तात्पर्य चरित्र निर्माण, बुद्धि का विकास, प्रतिभा का चमत्कार तथा आत्म निर्भरता आदि गुणों का निर्माण करना है। संक्षेप में शिक्षा जीवन का निर्माण, मनुष्य का निर्माण, चरित्र निर्माण तथा दिव्य विचारों का जीवन में व्यावहारिक आचरण करना सिखाती है।

शिक्षक तथा आचार्य को बच्चे में मौजूद गुणों का विकास करना, दुर्गुणों से मुक्त करना और नये संस्कारों व विचारों से बच्चे को नवजीवन प्रदान करने का महान कार्य करना है। ऐसे दृष्टान्त इतिहास में बहुत पाये जाते हैं कि छोटे बच्चों में प्रतिभा मौजूद थी और उन्होंने बचपन में अपनी विद्यमान प्रतिभा का चमत्कार दिखाना प्रारंभ कर दिया था। वास्तव में वे आयु में छोटे और अक्ल में बड़े थे। जॉन स्टुअर्ट मिल ने ६ वर्ष की आयु में रोम का इतिहास लिखना शुरू कर दिया था। मैकाले ने ७ वर्ष की आयु में कविता लिखना शुरू कर दिया था गेटे ने ७ वर्ष की आयु में प्रश्न लिखा था। पास्कल ने बचपन में यूक्लिड के अनेक कठिन प्रश्न हल किए थे। मोजार्ट ७ वर्ष की आयु में संगीत का धुरन्धर विद्वान था। आदि गुरू शंकराचार्य ९ वर्ष की आयु में सन्यासी होना चाहता था और किशोर अवस्था में उसने भारत में तहलका मचा दिया था। नचिकेता भी आयु में छोटा परंतु बुद्धिबल से बड़ा था। स्वामी दयानन्द सरस्वती (बालक मूलशंकर) को भी कम आयु में शिवरात्रि के दिन आत्मबोध हुआ था। जिसने वेदों का डंका सारे आलम में बजवा दिया था। भारत को गुरू विरजानन्द जी जैसे महान गुरू तथा आचार्य चाहिये और दयानन्द सरस्वती जैसे पटु शिष्य। परमहंस

रामकृष्ण जैसे गुरू और विवेकानन्द जैसे परम शिष्य भारत की जरूरत है। भारत को लम्पट, आचारहीन, तथा मूर्ख एवं धूर्त आचार्यों से बचाना बहुत जरूरी है। आज हमारे स्कूल, कॉलेजों, विश्वविद्यालय शिक्षा का केन्द्र न रह कर राष्ट्र विनाश के प्रशिक्षण केन्द्र बनते जा रहे हैं।

हमारे वेदों ने बच्चे के चरित्र तथा जीवन निर्माता मां, बाप आचार्य तथा गुरू को माना है। बुनियादी तौर पर ये तीनों ही बच्चे के निर्माण और विनाश के लिये उत्तरदायी हैं। आचार्य व गुरू का कार्य मां और बाप के पश्चात् प्रारंभ होता है। आज कल तो मां बाप और आचार्य तीनों का कार्य गुरू अथवा आचार्य को करना पड़ता है। हमारे देश में शिक्षित तथा अशिक्षित दोनों मां बाप बच्चे को पैदा करना और उसके पश्चात उसे लाड़ प्यार से बिगाड़ना ही अपना कर्त्तव्य मान बैठे हैं। वे माता पिता अभागे होते हैं जो अपने बच्चे का लालन पालन ठीक ढंग से न करके लाड़ प्यार में उन्हें हठी, बेशर्म, अनुशाहसनहीन, अनाज्ञाकारी बना कर विद्यालय भेजते हैं। ऐसे बच्चों का जीवन निर्माण एवं चरित्र निर्माण करना आज शिक्षक का प्रथम कर्त्तव्य होना चाहिये। आचार से आचार्य बनता है। जिस राष्ट्र का आचार्य आचारहीन हो उस राष्ट्र का रसातल चले जाना अवश्यम्भावी है।

जिस का आचार अनुकरणीय हो वही आचार्य होना चाहिये। विद्यादान से आचारदान की शिक्षा कहीं अधिक सार्थक एवं श्रेष्ठ होती है। आचार अथवा आचरण से ही विद्या की शोभा होती है। आचारहीन विद्या व शिक्षा विद्या नहीं है, उसे साक्षरता कहना अधिक उचित होगा। आजकल टीचर, मास्टर, प्रोफेसर जो शिक्षा दे रहे हैं, वह साक्षरता है क्योंकि उनका छात्र छात्रा के जीवन, निर्माण व चरित्र निर्माण से कोई सम्बन्ध नहीं है। ऐसे अध्यापकों की आज कमी नहीं है जिन्होंने शिक्षा को व्यवसाय बना लिया है। वे ट्यूशन करते हैं, पास करने-कराने का भी धंधा खूब चलाते हैं।

प्राचीन काल में एक आचार्य ने अपने शिष्यों को पहला पाठ यह पढ़ाया था, "हमारे आचार में जो जो बातें प्रशंसनीय हैं उन का अनुकरण करो और जो भी निन्दनीय हैं, उन का सदा परित्याग करो।" परन्तु वह यह भूल गया था कि हमारे आचार से तुम्हारा आचार बनेगा अर्थात जैसा आचार्य या अध्यापक का आचरण होता है वैसा ही उसके शिष्यों का होता है।

वे मां-बाप तथा अध्यापक कितने अज्ञानी हैं जो अपने आचरण और स्वभाव को न सुधारकर अपने बच्चो और विद्यार्थियों का चरित्र निर्माण करना चाहते हैं। इसलिये हमारे प्राचीन आचार्यों ने ठीक कहा था, " आचारः परमो धर्मः" अर्थात् आचार ही परम धर्म है। साथ ही यह भी कहा था, " आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः" अर्थात आचारहीन को वेद पवित्र नहीं करते। छात्र-छात्राओं के जीवन और चरित्र का निर्माण अध्यापक की विद्या से नहीं आदर्श व्यक्तित्व और आचरण से होता है। अध्यापन कार्य में बड़े तप और साधना की आवश्यकता है। अध्यापक व अध्यापिकाएं सदैव अपनी योग्यता तथा क्षमता में वृद्धि करते रहें।

आचार्य व अध्यापक को राष्ट्र निर्माता इसीलिये तो कहा गया है कि वह देश की वर्तमान

सन्तान व पीढ़ी को भविष्य के लिये चरित्रवान विद्वान और बलवान बनाने के लिये उत्तरदायी है। यदि वह ऐसा नहीं करता है तो वह राष्ट्र निर्माता नहीं राष्ट्र विनाशक है। अब देश में गुरूकुलशिक्षा प्रणाली नाममात्र की रह गई है। शिक्षा पर सरकार का नियंत्रण है। मां बाप को भी बच्चे के जीवन निर्माण तथा चरित्रनिर्माण में पूरा सहयोग देना चाहिये। बच्चा विद्यालय में अधिक से अधिक पांच घंटे रहता है, उन्नीस घंटे घर पर रहता है। मां बाप के पास चार पांच बच्चे होते हैं। अध्यापक की कक्षा में चालीस-चालीस बच्चे हैं। इतने पशु तो एक ग्वाला के लिये भी समस्या बन जाते हैं। मेरा निश्चित मत है नर्सरी कक्षा में १०-१५ बच्चे, प्रथम व द्वितीय श्रेणी में १५-२० बच्चे, तीसरी चौथी कक्ष में २०-२५ बच्चे अधिक से अधिक होने चाहिये। बच्चों को शब्दों का उच्चारण तथा उन का शुद्ध तथा सुलेख लिखने की आदत शुरू से ही डालनी चाहिये। विद्यालय में समय पर आने की आदत से बच्चों को समयितता तथा नियमितता की भविष्य में भी आदत बनी रहेगी। बाल शिक्षा, उच्च शिक्षा की आधार शिला है। छोटी कक्षाओं के अध्यापक, अध्यापिकाएं बच्चों के जीवन निर्माण तथा चरित्रनिर्माण के लिये अधिक उत्तरदायी हैं, मां बाप के सहयोग से ही यह महान् कार्य सम्भव है।

किशोर किशोरियों की सुरक्षा

युवा अवस्था तथा बाल अवस्था के मध्य बड़े उतार-चढ़ाव तथा तूफानों से ओत-प्रोत अवस्था किशोर अवस्था कहलाती है। यह पाश्चात्य विचारधारा के अनुसार तेरह वर्ष से उन्नीस वर्ष तक मानी जाती है। मोटे तौर पर प्राइमरी शिक्षा तक बाल अवस्था, इस के उपरान्त दसवीं श्रेणी तक किशोर अवस्था मान ली जाये तो बात स्पष्ट हो जाती है। किशोर अवस्था लड़के और लड़कियों के जीवन में हलचल पैदा कर देती है। उन के शरीरों में विशेष परिवर्तन होने लगता है। इस आयु में परस्पर एक दूसरे के प्रति आकर्षण बढ़ने लगता है। यदि लड़के लड़कियों की किशोर अवस्था में ठीक प्रकार से देखभाल न हो तो उन में कई प्रकार के व्यसन, यौन रोग तथा चरित्रहीनता की सम्भावना रहती हैं। समाज में अशिक्षा, नैतिक शिक्षा का अभाव, मातापिता की अज्ञानता तथा लापरवाही, कुसंगत और विद्यालय में सहशिक्षा किशोर और किशोरियों में पनप रहे दुष्चरित्र का कारण है।

अतः मां बाप को अपने बेटे बेटियों पर इस आयु में विशेष ध्यान देना चाहिये। मां को चाहिये लड़की के शरीर में होने वाले परिवर्तनों के विषय में वह उसे भली भांति समझा दें। कई कन्याओं को जब प्रथम बार रजोदर्शन अथवा मासिक धर्म होता है तो वे बहुत घबरा जाती हैं और उन के मन में विशेष प्रकार का भय बैठ जाता है। इस विषय में मां अपनी बेटी को निसंकोच ज्ञान कराये ताकि उस के मस्तिष्क में कोई विकार पैदा न हो जाये। वंशानुगत रोगों को छोड़कर या अन्य साधारण रोगों को छोड़कर स्त्रीरोगों का प्रारंभ रजोदर्शन होने पर शुरू हो जाता है। श्वेत प्रदर और रक्त प्रदर जैसे रोग महिलाओं के जीवन को दीमक की तरह धीरे-धीरे निस्सार और जीवंतताहीन बना देते हैं। यौन शिक्षा (ब्रह्मचर्य ज्ञान) के अभाव में लड़कियाँ कुसंगति में पड़कर कई प्रकार के यौन रोगों की शिकार हो जाती हैं। ऐसे रोगों से

पीड़ित कन्याएं न स्वयं स्वस्थ रह सकतीं हैं न स्वस्थ और निरोग माता बन कर निरोग, सुंदर, बुद्धिमान और बलवान बच्चों को जन्म दे सकती हैं। संकेत में इतना ही लिखना इस विषय में पर्याप्त है।

जिस प्रकार मां को अपनी पुत्री की इस नाजुक आयु में चौकसी और सावधानी रखनी पड़ती है उसी प्रकार पिता को भी अपने पुत्र की किशोर अवस्था में देखभाल करनी चाहिये। इस आयु में जिस लड़के तथा लड़की में कोई व्यसन तथा रोग नहीं लगा है, उसका स्वास्थ्य और सौन्दर्य देखते ही बनता है। साधारण खुराक से भी लड़के, लड़कियाँ बहुत स्वस्थ, आकर्षक, सुडौल तथा सुन्दर हो जाते हैं। लेकिन जैसे ही कुसंग तथा किसी व्यसन ने इन को पकड़ा और ये दिनोंदिन निस्तेज, क्षीण, दुर्बल और रोगी बन जाते हैं। प्रायः इस आयु में लड़कों को ब्रह्मचर्य सम्बन्धी ज्ञान नहीं होता। शरीर विज्ञान का भी उन्हें प्रायः ज्ञान नहीं रहता । इस आयु में विपरीत लिंग की ओर स्वाभाविक आकर्षण बढ़ जाता है। वे कई प्रकार के गंदे व्यसन कुसंग से सीख जाते हैं जिसके कारण उन्हें वीर्य सम्बन्धी रोग तो लग ही जाते हैं साथ ही उन का पूरा शरीर किसी न किसी रोग से ग्रस्त होता रहता है। वास्तव में किशोर अवस्था, युवावस्था की नींव है। इसलिए नींव को बहुत पक्की और पायदार होना चाहिये।

किशोर अवस्था में चरित्र भ्रष्ट लड़कों का जीवन नीरस और शुष्क हो जाता है उन्हें वास्तव में जवानी पूरे तौर पर चढ़ती ही नहीं है। जब वे गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते हैं तो उन्हें गार्हस्थ बोझ और झंझट नज़र आने लगते हैं। कई तो दुर्व्यसनों के कारण नपुंसकता तक पहुंच जाते हैं। कई पौरूष हीन तो नहीं होते परन्तु संभोग से पूर्व ही शीघ्र पतन के रोग के कारण लज्जा महसूस करने लगते हैं। जिसके कारण उन्हें मानसिक रोग तक घेर लेते हैं। पति पत्नि का परस्पर प्रतिदिन कलह और झगड़ा इस का प्रमुख कारण पाया जाता है। नीम हकीमों से इलाज करवाकर ये प्रायः निराश, हताश तथा निवीर्य होकर आत्महत्या के द्वार खटखटाने लगते हैं। किशोर और किशोरियों की इस अवस्था में देखभाल इसलिये कहीं अधिक आवश्यक हो जाती है क्योंकि ये युवा होने से पूर्व जरायु हो जाते हैं और ये राष्ट्र को कभी सबल सुंदर और मजबूत बनाने के स्वप्न भी नहीं देख सकते।

भारत के ऋषि मुनियों ने आत्मा, परमात्मा, सुखी और स्वस्थ जीवन के विषय में जितनी खोज की थी उतनी अन्य देशों में नहीं हुई। हमारे ऋषियों ने जीवन का निर्माण करने के लिये (चार) आश्रम प्रणाली प्रारंभ की थी। पच्चीस वर्ष तक ब्रह्मचर्याश्रम, पच्चीस से पचास वर्ष तक गृहस्थाश्रम, पचास से पिछहत्तर वर्ष तक वानप्रस्थ आश्रम तथा इसके उपरान्त सन्यासाश्रम की व्यवस्था थी। लड़के लड़कियों के पृथक--- २ गुरूकुल या आश्रम होते थे, जहां राजा रंक सभी के बच्चे- बच्चियाँ, समान शिक्षा , समान भोजन, समान वेश-भूषा आदि द्वारा सदाचारी, विद्वान तथा चरित्रवान तेजस्वी आचार्यों की देख रेख में विद्या ग्रहण किया करते थे। यह शिक्षा प्रणाली प्रत्येक दृष्टि से आदर्श थी। विद्यार्थी अपने अध्यापकों के साथ गुरूकुल में शिक्षा ग्रहण करते थे और साथ ही आवास करते थे। आचार्य सेवाभाव

से बालकों को शिक्षा देते थे आर्थिक दृष्टिकोण उनका बिल्कुल नहीं होता था। आज पश्चिमी देशों का अन्धानुकरण करके भारतवासी भी सहशिक्षा के चक्रव्यूह में फंस गये हैं।

एक जमाना था जब विदेशी लोग हमारे विश्वविद्यालयों (तक्षशिला और नालंदा) में ज्ञान-विज्ञान और अध्यात्म-विज्ञान की शिक्षा गुरूओं के सान्निध्य में रह कर प्राप्त करते थे। स्पार्टा का महान विद्वान, समाजसुधारक, शिक्षाशास्त्री लाइकरगस भारत आया था और उसने यहां की गुरूकुल शिक्षा प्रणाली को बहुत पसन्द किया था। उसने स्पार्टा में इस प्रणाली को प्रचलित किया और अपने राष्ट्र को नवजीवन प्रदान किया। लाइकरगस के देश स्पार्टा में एक भी वेश्या नहीं थी। समाज और राज्य में भ्रष्टाचार को कोई जानता भी नहीं था। सोवियत रूस में प्राइमरी शिक्षा तक सहशिक्षा है। उसके उपरान्त स्नातक शिक्षा से पूर्व सहशिक्षा नहीं है। कॉलेज और विश्वविद्यालय में सहशिक्षा है। एक प्रकार से रूस के भाग्य निर्माताओं ने भी किशोर अवस्था में सहशिक्षा प्रणाली को अपने यहां नहीं अपनाया। उन के यहां शिक्षाकाल में छात्र-छात्राएं धूम्रपान या अन्य नशीले पदार्थों का सेवन नहीं कर सकते जबकि अमेरिका के युवा युवतियां नशीले पदार्थों का सेवन प्रचुर मात्रा में करते हैं।

मैं जब दयानन्द पब्लिक स्कूल फरीदाबाद में प्रिंसीपल था मैंने, एक नया परीक्षण सीमित सहशिक्षा पर किया था, जो मेरे रहते हुए सफल रहा। प्राइमरी कक्षा तक मैनें सहशिक्षा पर पाबन्दी नहीं लगाई। माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा तक इतनी पाबन्दी लगाई कि उसी लड़के को विद्यालय में प्रवेश दिया जायेगा जिस की बहन भी उसके साथ पढ़ती होगी। पांच वर्ष तक सह शिक्षा सम्बन्धी शिकायतें दूर रहीं और यह परीक्षण सफल रहा। मेरे पश्चात इस नियम में ढील दे दी गई और सह शिक्षा अपना विकराल रूप दिखाने लगी। इस परीक्षण की चर्चा मैंने हैदराबाद विश्वविद्यालय के कुलाधिपति जस्टिस श्री जगन्नाथन रेड्डी से की तो उन्होंने इसे पसंद किया। अन्य शिक्षा शास्त्रियों ने भी इसे वर्तमान स्थिति में व्यावहारिक प्रयोग बताया।

जिस प्रकार सहशिक्षा किशोर और किशोरियों को यौन अपराधों की ओर चुम्बक की तरह खींचते हैं, उसी प्रकार सिनेमा तथा दूरदर्शन पर दिखाई जाने वाली फिल्मों के द्वारा बलात्कार, मारकाट, कत्ल, छलकपट का प्रशिक्षण सहज ही हमारे किशोर किशोरियों तथा युवा-युवतियों को प्राप्त हो रहा है। यौन अपराध ही नहीं, अन्य अपराधों की शिक्षा फिल्मों द्वारा अपनेआप मिल रही है। मुझे याद है कि हरियाणा राज्य के डी.आई.जी. (सी.आई.डी.) की हत्या उसके अर्दली (नौकर) ने सन् १९७४ में की थी। अंतिम जांच में पाया गया कि नौकर ने एक उपन्यास पढ़ा था जिसमें इसी प्रकार अपने स्वामी का सेवक ने खून कर दिया था तथा इसी तरह की एक फिल्म उसने देखी थी। जबकि पुलिस को इस हत्या के विषय में अनेकानेक संदेह और संशय घेरे हुए थे। अपराधों पर आधारित उपन्यासों की बिक्री और प्रकाशन पर भी पाबन्दी लगाई जानी चाहिये।

मेरा निश्चित मत है कि मां बाप तथा आचार्य अपने अपने स्तर पर किशोर किशोरियों के चरित्र निर्माण पर जोर दें और इन्हें ब्रह्मचर्य की शिक्षा वैज्ञानिक आधार पर दें। यौन शिक्षा, ब्रह्मचर्य शिक्षा का अत्यंत महत्वपूर्ण अंग है। यौन शिक्षा का तात्पर्य हरगिज यह नहीं है कि

हम अपने बच्चों को लंपट, निर्लज्ज तथा व्याभिचारी बनने दें अपितु काम वासना तथा काम विकारों से कच्ची उम्र में उन्हें संरक्षण देना है। हमारा सामाजिक ढांचा इस में बहुत सहायक रहा है। संयुक्त परिवारों में अधिक सन्तान न पैदा करने पर और किशोरावस्था में लड़के लड़कियों पर स्वतः ही नियंत्रण रहा करता था।

मुझे सीमित सहशिक्षा का प्रयोग करने का विचार संयुक्त परिवार प्रणाली से मिला। परिवार का वातावरण इतना पवित्र, स्वतः नियंत्रित तथा संरक्षण पूर्ण होता था कि किशोर किशोरियां, युवा युवतियां एक दूसरे से स्वतः ही नियंत्रित रहते थे। यही जान कर मैने दयानन्द पब्लिक स्कूल की प्रमुख शाखा में, भाई बहनों को सहशिक्षा में बाधा नहीं माना और प्रयोग सफल पाया। कुछ पाश्चात्य विचारधारा के अनुयायी शिक्षा शास्त्री सहशिक्षा को आवश्यक मानते हैं लेकिन गर्म देशों में सहशिक्षा यौन अपराधों की जननी हैं कम से कम किशोरावस्था में तो निश्चित तौर पर सहशिक्षा आग और रूई का मेल है जो जरा से हवा के झोंके की इन्तजार में है अर्थात् जिसका परिणाम विकास नहीं विनाश है।

मुझे यहां महात्मा बुद्ध का एक उदाहरण याद आता है। एक दिन भगवान बुद्ध बहुत चिन्तामग्न तथा उदास बैठे थे। उन के परम शिष्य आनन्द ने प्रश्न किया, "तथागत आज आप बहुत चिन्तित तथा उदास क्यों हैं ? आप तो हमें सदैव समरस रहने का आदेश तथा उपदेश देते रहे हैं।" भगवान् बुद्ध ने भावुक होकर उत्तर दिया, "आनन्द! मुझ से हिमालय जैसी महान् भूल हो गई है। मैंने युवक युवतियों को भिक्षु और भिक्षुणी का जीवन व्यतीत करने का अधिकार दे दिया साथ ही उन्हें इकट्ठे बौद्ध विहारों में रहने सहने का अवसर दे दिया। जब तक पूर्ण वैराग्य न हो किसी को सन्यास नहीं देना चाहिये न उसे लेना चाहिये। जो बुद्ध धर्म पांच हजार वर्ष तक देश विदेश में प्रचलित रहता उसका पतन पांच सौ वर्ष से पूर्व ही हो जायेगा। संसार जानता है वही हुआ भी जैसा भगवान बुद्ध को आशंका ही नहीं विश्वास था। बौद्ध विहार यौनाचार तथा व्यभिचार के अड्डे बन कर रह गये थे, जनता जनार्दन का विश्वास बुद्ध द्वारा स्थापित बौद्ध धर्म से, जिसमें अशोक महान् जैसे सम्राट शामिल हुए थे, उस बौद्ध धर्म से उठ गया था।

किशोर किशोरियों को जहां शुद्ध, सात्विक और संतुलित भोजन की जरूरत है वहां उन्हें व्यायाम तथा खेल कूद का शौक लगाना भी निहायत जरूरी है। जो लड़के लड़कियां इस किशोरावस्था में व्यायाम, खेलकूद में दिलचस्पी नहीं रखते वे ब्रह्मचर्य की रक्षा कदापि नहीं कर सकते। व्यायाम और खेलकूद, उन्हें तेजस्वी, ओजस्वी तथा बलवान बनाते हैं।

व्यायाम से इन का शरीर सुदृढ़ होता है। शरीर, आलस्य और प्रमाद से ढीलाढाला और निस्तेज नहीं होता। आलस्य तथा प्रमाद शरीर का महान् शत्रु है। शत्रु को तो घात लगाकर मारा जा सकता है मगर आलस्य तो शरीर पर सदैव ही हावी रहता है। यह इन्सान को निकम्मा, निठल्ला और कर्महीन तथा बेकार बना देता है। इसलिये मां बाप व अध्यापक को चाहिये कि अपने लड़के लड़कियों को सदैव कर्मठ बनाने का प्रयास करें। व्यायाम प्रेमी और विद्याभ्यासी के पास कभी भी आलस्य, सुस्ती और प्रमाद नहीं फटकते। व्यायाम के विषय में अन्य स्थान पर विस्तार से वर्णन किया जायेगा।

हमारे तपस्वी गुरू पं. शिवलाल जी कहा करते थे, "जिसने बचपन में विद्या नहीं पढ़ी, जवानी में धन नहीं कमाया, अधेड़ हो कर धर्म नहीं किया, बुढ़ापे में वह सिर धुन-धुन कर पछतायेगा।" छात्र-छात्राओं को अपनी पढ़ाई मन लगाकर करनी चाहिये। परीक्षा परिणामों में अपनी मेधा (बुद्धि) का प्रमाण देना चाहिये। नकल का अभ्यास कभी नहीं करना चाहिये। नकल करने वाले अपने जीवन में कभी भी ईमानदार नहीं पाये जाते। विद्यार्थी जीवन में दुष्चरित्रता और नकल को मैं भारी भ्रष्टाचार मानता हूँ। व्यायाम और खेलकूद से जी चुराने वाले छात्र-छात्राएं अपने शरीर को निर्बल, निस्तेज, रोगी, अल्पायु बनाते हैं जो उनका अपने जीवन के साथ खिलवाड़ ही नहीं अपितु आत्मघाती कदम हैं।

किशोर अवस्था में विद्यार्थियों को महान् पुरूषों की जीवनियाँ, सन्त-महात्माओं के उपदेश तथा सत्संग करने का चस्का भी लग जाना चाहिये। जिस प्रकार जल को नल के द्वारा ऊंचे पर चढ़ाया जाता है उसी प्रकार जीवन को अच्छी-२ जीवनियां पढ़ कर दिव्य तथा महान बनाया जा सकता है। पं. जवाहर लाल नेहरू का उदाहरण हमारे सामने है। उन्होंने "पिता के पत्र, पुत्री के नाम" पत्र लिखे थे जो सभी मां बाप के लिये एक मिसाल है कि किस प्रकार एक पिता जेल से भी अपनी किशोरी पुत्री इन्दिरा प्रियदर्शनी का संरक्षण विचारों द्वारा कर रहा है, वही पुत्री भारत की सशक्त प्रधान मंत्री तथा विश्व की महान् महिला बनीं।

किशोर अवस्था में मित्र तथा सखा का विशेष स्थान है। जिन किशोर किशोरियों के मित्र तथा सखी-सहेली व्यसन रहित और नशा से मुक्त हैं, वे बड़े सौभाग्यशालीं हैं। इस अवस्था का बिगाड़ सुधार साथी और सहेलियों पर काफ़ी निर्भर है। ये तरह-तरह के गंदे नशे सिखा देते हैं और गंदी गंदी आदत का गुलाम बनाकर अपने साथी का जीवन नष्ट कर देते हैं। मां बाप को तो तब पता चलता है जब उन का बेटा बेटी परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाता है। शिक्षा व पढ़ाई से जी चुराने लगता है तथा लम्पटता, अशिष्टता तथा उद्दण्डतापूर्ण व्यवहार सब के साथ करने लगता है। घर के काम-काज से बच कर आवारागर्दी का आदी हो जाता है। इसलिये मां बाप को सदैव अपने किशोर किशोरियों के मित्रों के बारे में सही-सही जानकारी होनी चाहिये। अत: गन्दे लड़का लड़कियों से उन्हें बचा कर रखना चाहिये।

किशोर अवस्था में यदि छात्र-छात्राओं का विश्वास सर्वशक्तिमान परमात्मा में पैदा हो जाये तो फिर ये स्वत: ही ठीक दिशा में चलेंगे। आस्तिकता वास्तव में मनुष्य को आध्यात्मिक दिशा में ले जाती है। प्रारंभ से बच्चों में आत्मा व परमात्मा का सही सही बोध कराना चाहिये। संसार का इतिहास साक्षी है कि जिन बच्चों में प्रारंभ से ही आध्यात्म का बोध पाया गया वे संसार के महापुरूष, सन्त,परम सन्त बने। जिस प्रकार बल्ब के ऊपर कई तह करके काला कपड़ा लपेट दिया जाए तो वह रोशनी होते हुए भी रोशनी नहीं देगा। इसी प्रकार आत्मा का प्रकाश काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के आवरण से ढका हुआ है। कुसंग, दुर्व्यसन और अज्ञान के कारण किशोर किशोरी भी नास्तिकता की ओर तीव्रता से बढ़े चले जाते हैं। नास्तिकता भी मनुष्य का बड़ा शत्रु है।

निरोगी रहने की इच्छा

जीवन में इच्छा शक्ति का बहुत बड़ा योगदान होता है। जिस व्यक्ति के जीवन में कुछ करने की इच्छा शक्ति नहीं है वह व्यक्ति समाज व राष्ट्र को कुछ नहीं दे सकता। संसार में जितने महापुरूष बने वे इच्छा शक्ति के भण्डार थे अर्थात उन में अथाह इच्छा शक्ति थी। चाहे वे धार्मिक क्षेत्र में सुधार चाहते थे, चाहे राजनैतिक क्षेत्र में, चाहे सामाजिक एवं आर्थिक एवं व्यापारिक क्षेत्र में, उनकी प्रबल इच्छा शक्ति ने उन्हें लक्ष्य तक पहुंचाया था।

मां बाप स्वस्थ हों, उनका शिशु भी स्वस्थ हो, शिशु का बचपन, किशोरावस्था भी ठीक ठीक गुजरी हों, युवा होने पर वह मां बाप बना हो और स्वस्थ सुन्दर, सुडौल और निरोग हो लेकिन यदि वह जीवन में कुछ करने की इच्छा नहीं रखता है तो उस का भावी जीवन ओजस्वी, तेजस्वी तथा आदर्श नहीं बन सकता।

मनुष्य को निरोग और दीर्घायु प्राप्त करने के लिये भी इच्छा शक्ति का सहारा लेना होगा। इसके बिना उसका जीवन नीरस और भाररूप रहेगा। विश्व विख्यात कहावत है, "जहां चाह वहां राह"। अर्थात् जब इन्सान के मन में इच्छा है तो वह उस की प्राप्ति के लिये साधन भी प्राप्त करेगा और उस इच्छा को पूर्ण कर के दम लेगा। इच्छा शक्ति व्यक्ति को जुझारू, कर्मठ तथा लगनशील बनाती है। जिस प्रकार गुब्बारा, उसके अन्दर की हवा से, आकाश की वायु में उड़ रहा है। उसके निकलते ही वह जमीन आ पड़ता है या फट जाता है और उसका अस्तित्व समाप्त हो जाता है, उसी प्रकार व्यक्ति को इच्छा शक्ति साधारण से आसाधारण तथा महान् बना देती है।

जो व्यक्ति निरोग, स्वस्थ, सुन्दर, बलवान, तेजस्वी ओजस्वी बनना तथा दीर्घायु प्राप्त करना चाहता है उसे व्यसन, कुटेव व नशीले पदार्थों का त्याग करना होगा। शुद्ध सात्विक एवं संतुलित आहार का प्रयोग करना, प्रतिदिन नियमित व्यायाम करना, अपने को सदैव रचनात्मक गतिविधियों में व्यस्त रखना, अच्छे लोगों की संगति करना तथा जीवनोपयोगी साहित्य पढ़ना और ईश्वर में दृढ़ विश्वास रखने का अभ्यासी बनना होगा, तभी उसका लक्ष्य पूर्ण होगा।

यूं तो संसार का इतिहास ऐसे व्यक्तियों के उदाहरणों से भरा पड़ा है जिन्होने इच्छा शक्ति के सहारे जिस क्षेत्र में कदम रखा उन्हें सफलता मिली। लेकिन हम कुछेक व्यक्तियों के विषय में ही लिख कर अपना विचार स्पष्ट करना चाहते हैं। महात्मा गांधी अपने बाल्यकाल में एक दुर्बल और अति साधारण बालक थे। वही दुर्बल बालक इच्छा शक्ति के बल पर विश्व के महानतम् व्यक्तियों में गिना गया। संसार में महात्मा गांधी एक ऐसी विभूति थे जिन्होने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रयोग किए और अपने अनुभव और अध्ययन के आधार पर मानव जाति के लिये उन का प्रचार-प्रसार किया। प्रायः साधारण लोग गांधीजी को स्वाधीनता संग्राम में सत्य, अहिंसा तथा सत्याग्रह के हथियारों के प्रयोग द्वारा देश को स्वाधीन कराने वाला नेता अथवा राष्ट्र पिता के रूप में जानते हैं। वे महान् आत्मा के स्वामी होने के कारण महात्मा

के रूप में जाने जाते हैं लेकिन वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी बहुमुखी प्रतिभा तथा व्यक्तित्व के कारण भी विश्व-विख्यात हैं।

यहां हम केवल गांधी जी के स्वास्थ्य सम्बन्धी कतिपय अनुभवों का उल्लेख करना चाहते हैं। गांधी जी की इच्छा डाक्टर (ऐलोपैथ) बनने की थी। परन्तु वैष्णव धर्म का अहिंसात्मक पहलू उनकी डाक्टरी की पढ़ाई में बाधा बना। इसलिये उन्होंने अपने आप मानव शरीर की संरचना को समझा और प्राचीन आयुर्वेदिक उपचार पद्धति को प्राकृतिक चिकित्सा के रूप में स्वास्थ्य संबंधी प्रयोगों का आधार बनाकर अपने को स्वस्थ बनाया। अपने आश्रम में उन सिद्धांतों का पालन कराया जो उन्होंने स्वयं पर आजमाए थे। प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में वे कूने, फादर कनाइप एवं डा. जस्ट से बहुत प्रभावित हुए थे। डा. जस्ट की 'रिटर्न टु नेचर' पुस्तक बहुत प्रसिद्ध हैं।

महात्मा गांधी संसार के महापुरूषों में प्रथम कहे जा सकते हैं जिन्होने किसी भी पेशेवर डाक्टर से अधिक स्वास्थ्य संबंधी पुस्तकों का अध्ययन किया था और सर्वसाधारण के लिए प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार प्रसार सारी उम्र किया।

उन्होंने देखा कि मनुष्य के अतिरिक्त संसार के सभी प्राणी विशेष कर पशु पक्षी अधिक से अधिक प्राकृतिक नियमों का स्वतः पालन करते हैं प्रकृति के साहचर्य में रहते हैं। बीमार पड़ते ही खाना छोड़ देते हैं। बिना भूख के भोजन नहीं करते। इन का भोजन सादा सरल होता है। वे आहार विहार में संयमी रहते हैं। मनुष्य इस के विपरीत अर्थात प्रकृति के विरूद्ध चलता है और अस्वस्थ रहता है। उन की दृष्टि में प्रकृति के नियमों का पालन करके नीरोग रहना ही प्राकृतिक उपचार है। उन्होंने उरूली कंचन नामक गांव में एक प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र की स्थापना भी इसी आधार पर की थी।

गांधी जी उपवास की महत्ता को खूब समझते थे। वे सदा इस बात का प्रचार करते थे कि जिह्वा के स्वाद के वशीभूत न होइए। अपनी पाचन प्रणाली पर अत्याचार न कीजिए। अपने ही दान्तों से कब्र मत खोदिए। अल्पाहार ही दीर्घायु का मूल रहस्य है। उपवास न केवल रोगों को नष्ट करता है अपितु वासना व विकारों को भी नष्ट कर देता है तथा आन्तरिक शान्ति और संयम सिखाता है। प्राचीन शास्त्रों में लिखा है कि -"जठराग्नि आहार को पचाती है और जब पेट में आहार नहीं रहता तब वह दोषों को पचाती अर्थात नष्ट कर देती है। सुश्रुत के अनुसार उपवास से ज्वर का नाश होता है और अग्नि का दीपन होता है शरीर हल्का हो जाता है। उपवास से बवासीर, गठिया, सिरदर्द, मधुमेह, दमा, मोतीझरा, यकृत में रक्त का जमाव, कब्ज, अतिसार, शूल, जुकामादि रोगों में चमत्कारिक लाभ होता है।

प्रकृति के पांचों तत्व, मिट्टी, पानी, वायु, अग्नि तथा आकाश गांधी जी की प्राकृतिक चिकित्सा के आधार थे। मैने गांधी जी को सन् १९४५ में देखा था। उन का शरीर कुन्दन की तरह चमकता था। उन की इच्छा सवा सौ वर्ष जीने की थी लेकिन वह नाथूराम गोडसे ने पूरी नहीं होने दी। ३० जनवरी १९४८ को उन की हत्या कर दी। गांधी जी का जीवन खुली किताब थी। उनका दिनचर्या, खानपान, रहन सहन, कार्यक्रम सभी नियमित और प्राकृतिक नियमों के अनुसार होता था।

गांधी जी जब इंग्लैंड गोलमेज परिषद की बैठक में भाग लेने गए तो उन्हें व्यस्तता के कारण सैर का समय नहीं मिल पाता था तो रात को सोने से पूर्व अपनी सैर का नियम पालन करके सोते थे। लार्ड माउन्टबेटन से मिलने गए तो अपना प्रातःराश साथ ले गए और निश्चित समय पर बात करते करते नाश्ता कर लिया। दुर्बल बालक मोहनदास कर्मचन्द गांधी जो बचपन में डरपोक भी था, इच्छा शक्ति के सहारे कितना स्वस्थ और निर्भय बन गया सारा संसार इस सच्चाई को जानता है।

दूसरा उदाहरण मैं फिल्म अभिनेता पहलवान दारासिंह का देना चाहता हूँ। इन की आत्मकथा पढ़ने से ज्ञात होता है कि ये कितने साधारण परिवार के साधारण बालक थे इन की दृढ़ इच्छा शक्ति ने इन्हें पंजाब के एक साधारण गांव से बंबई के फिल्म जगत तक पहुंचा दिया। बचपन में बगीची वाले बाबा शामसिंह ने दारासिंह को वर्णमाला सिखाई बल्कि उन के मन में यह बात भी पक्की तरह बिठाई कि पढ़ाई वही अच्छी होती है जिसे जीवन में उतारा जाये। बगीचे वाले बाबा अपने पैरों को हाथ नहीं लगवाते थे न नमस्कार कराते थे वे सूरज को ही नमस्कार कराते थे। दारासिंह को मेहनत करके खाने और सच बोलने की दीक्षा दी थी। दारा सिंह खेती के काम में बाबा बूड़सिंह का हाथ बंटाते थे। ढलती शाम तक कसरत व्यायाम का अभ्यास करने के कारण वे उच्च कोटि के विश्वविख्यात पहलवान बने। फिल्मी दुनिया में कदम रखा तो कदम-दर-कदम आगे बढ़े। फिल्म में अभिनय तथा निर्देशन के अलावा पटकथा तथा संवाद लेखन भी किया। पुस्तक रचना के क्षेत्र, अपनी आत्मकथा में जो १५० पृष्ठ से कम है लेकिन इस पुस्तक में आबदार मोती बेहिसाब बिखरे पड़े हैं। महात्मा गांधी की तरह अपनी आत्मकथा में सच का पल्ला मजबूती से पकड़ कर अपनी शादी वाली रात भी चारपाई पर पेशाब करने की बात नहीं छिपाई। ना ही चोरी से पैट्रोल की डिब्बियां उतारने, तथा अपने भोलेपन की बात कि उन्हें सिंगापुर तथा मलाया में चैक तथा कागज के फर्क की पहचान भी नहीं थी, पाठकों से छिपाई। सच बोलना, सत्य मानना, सच लिखना, सत्य का आचरण करना, महानता के लक्षण हैं। दारासिंह के मन में एक अच्छा मशहूर पहलवान बनने की प्रबल इच्छा बचपन से ही थी। उसके पश्चात् फिल्म जगत में धूम मचाने की इच्छा ने उन्हें अच्छे फिल्म अभिनेताओं की प्रथम पंक्ति में ला खड़ा किया।

नैपोलियन बोनापार्ट ने इच्छा शक्ति के बल पर एक बार संसार को हिला दिया था। उसने असंभव शब्द को शब्द कोष से निकाल देने को कहा था। उस का मत था 'असंभव' नाम की कोई चीज़ वीरों के रास्ते में बाधक नहीं होती। वीर पृथ्वी पर असंभव को संभव कर दिखाते हैं। नैपोलियन कहा करता था ईश्वर में पूरा भरोसा रखो मगर गन में इस्तेमाल के लिये बारूद को सूखा रखो। वह किसी राष्ट्र के निर्माण में मातृशक्ति के योगदान को जानता था। उस का मत था, "यदि तुम मुझे साठ अच्छी माताएँ दे दो तो मैं तुम्हें एक शक्तिशाली राष्ट्र का निर्माण कर के दिखा दूंगा।"

आदि शंकराचार्य ने अल्पायु में ही कुछ करने की ठान ली थी और उस की इच्छा शक्ति ने उसे महान् धर्माचार्यों की श्रेणी में ला खड़ा किया था। बुद्ध मत में फैले भ्रष्टाचार को देख कर उस में सुधार करने का बीड़ा उठा लिया था। उस के स्वयं के गांव में उस का विरोध हुआ।

उस की मां की मृत्यु होने पर गांव के लोग शवयात्रा में भी शरीक नहीं हुए शंकराचार्य ने अपनी मां के शव को तीन भागों में काट कर अकेले शव को श्मशान पहुंचाया और दाह संस्कार सम्पूर्ण किया था। केरल में आज भी पश्चाताप प्रतीक रूप में प्रत्येक शव पर चाक से तीन लकीर खींची जाती है जो शंकराचार्य के साथ किए गए असहयोग का पश्चाताप माना जाता है। शंकराचार्य ने भारत में वेद शास्त्रों का प्रचार किया।

भोजन की आवश्यकता

शरीर को निरोग, स्वस्थ और दीर्घायु बनाने के लिये शुद्ध सात्विक, पौष्टिक एवं सुपाच्य भोजन की आवश्यकता है। हमारा शरीर पांच तत्वों से बना है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश ये पांच तत्व हैं। ये पांचो तत्व शरीर को स्वस्थ तथा निरोग रखने के लिए आहार में होने चाहिये। हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने इस रहस्य को जान लिया था। हम दिन भर कार्य करते हैं जिससे हमें थकान महसूस होती है अर्थात हमारी शक्ति खर्च हुई है उस शक्ति की क्षतिपूर्ति हमारा आहार, विश्राम तथा नींद द्वारा होती है। भोजन द्वारा हमारे शरीर का निर्माण होता है। नई शक्ति का संचार होता है।

आहर के विषय में वैज्ञानिक एवं प्राकृतिक दृष्टिकोण बहुत जरूरी है। प्राय: जिन परिवारों में हम पैदा होते हैं, परिवार की परंपरा अनुसार तथा आर्थिक स्थिति के अनुसार हम भोजन बनाते खाते हैं। कई परिवार शाकाहारी और मांसाहारी होते हैं। उन के बच्चे वैसे ही भोजन के अभ्यस्त हो जाते हैं। शाकाहारी परिवार के बच्चे मांसाहारी परिवार के बच्चों के भोजन को खाने में हिचक व संकोच करेंगे, उन्हें मांसाहारी भोजन पचेगा भी नहीं। यह आदत की बात हुई, उन्हें आमिष और निरामिष भोजन के विषय में वैज्ञानिक ज्ञान नहीं है, यह तो केवल परिवार की आहार परंपरा हुई।

सारे संसार में आमिष और निरामिष भोजी पाये जाते हैं। इस की खोज में हमें इतिहास का गहरा अध्ययन करना होगा। मनुष्य आदिम अवस्था में पशु पक्षियों का शिकार करके अपनी क्षुधा शान्त किया करता था। शिकार के लिये उसे काफ़ी भाग दौड़ करनी पड़ती थी। पशु पक्षियों के शिकार के कारण उन की संख्या बढ़ने के बजाय कम होती जा रही थी। मनुष्य ने यह भी देखा कि दुधारू पशुओं के बच्चे दूध पी कर जीवित रहते थे। यहीं से पशुओं के पालन का सिलसिला शुरू हुआ था। सभ्यता के विकास का यह पहला कदम कहा जा सकता है। पशुओं की ऊन से कपड़ा बनाने का सिलसिला शुरू हुआ। इससे पहले इन्सान नंगा अथवा भेड़ बकरी की खाल या वृक्षों की छाल से अपने शरीर की सर्दी से रक्षा करता था।

आदिम मानव ने पक्षियों तथा वनमानुस, वानर, लंगूर आदि जानवरों को फल खाते देखा उसे यह ज्ञान हुआ कि वृक्षों के फल खाकर ये प्राणी जीवित रहते हैं तो इन्सान क्यों नहीं रह सकता उसने फल खाना सीख लिया, अब उस की खुराक में दूध और फल शामिल

हो गए। धीरे धीरे आदिम मनुष्य अपने पशुओं के साथ चरागाह की खोज में इधर उधर घूमता रहता था। उसने यह भी देखा कि जिन फलों को वह खाता था उस के बीज उग आते थे और वे समय पर फल देने लगते थे अब इन्सान ने उन वृक्षों को अपनाना शुरू किया और कृषि का आविष्कार हो गया। इस सभ्यता को पनपने में हजारों वर्ष का समय लगा होगा। आज भी कुछ जातियां जो जंगलों में रहती हैं ये उस सभ्यता के अवशेष हैं, जिन का हम ऊपर जिक्र कर चुके हैं।

ज्यों ज्यों मनुष्य सभ्य होता गया उस का आहार बदलता गया। कच्चे मांस की जगह पका मांस मसालेयुक्त हो गया। दूध से बनने वाले अनेक स्वादिष्ट एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थ व पेय दही, छाछ, पनीर, मक्खन, घी, खीर, श्रीखंड, वसुन्धी आदि जो इन्सान के भोजन में पहले नहीं थे। केवल इन्सान धारोष्ण दूध पीया करता था। अन्न से रोटी बनने लगी और नाना प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन मनुष्य के आहार में शरीक हो गये। उस का प्राकृतिक आहार अप्राकृतिक हो गया जिसके कारण मनुष्य का मेदा तथा आन्तें कमजोर हो गईं और वह निरोग न रह कर अनेक रोगों का शिकार हो गया। यदि इन्सान अपने आहार में स्वाद और उसे स्वादिष्ट बनाने के चक्र में न पड़ता तो वह कहीं अधिक सभ्य, स्वस्थ, सुखी तथा निरोग रह सकता था। आज भी संसार की आदिम जातियां एवं आदिवासी तथा वन जातियां स्वास्थ्य की दृष्टि से अधिक स्वस्थ एवं निरोग तथा दीर्घायु हैं जबकि सभ्य, शिक्षित तथा सुख सुविधाओं के भोगी रोगी शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

शाकाहार व मांसाहार पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण

अन्य विषयों की भांति आहार पर भी हमारे ऋषि मुनि तथा मनीषियों ने न केवल धार्मिक दृष्टिकोण से अपितु आध्यात्मिक तथा प्राकृतिक दृष्टिकोण से विचार किया था। उन की खोज का सार था, 'जैसा खाओ अन्न वैसा होगा मन'। जैसा भी हमारा आहार होगा, वैसे ही अपने विचार बनेंगे। जिस प्रकार सोने चांदी की परख कसौटी से की जाती है उसी प्रकार भोजन की कसौटी अग्नि है। अग्नि में घी, फल और मेवा इत्यादि पदार्थ डालों तो सुगन्धित वायु उत्पन्न होगी और उस में यदि एक लाल मिर्च डाल दो तो सारे घर की वायु ऐसी दूषित हो जायेगी कि उस में रहने वाले मनुष्यों को बेचैन कर देगी और वायु में जो सूक्ष्म जीव होंगे वह भी इस जहरीली वायु से सब मर जायेंगे। निष्कर्ष यह है कि जो खाद्य पदार्थ की अग्नि पर इतना दुःख उत्पन्न कर रही है वह मनुष्य के पेट की अग्नि में पहुंच कर न जाने कितने रोग शरीर में फैलायेगी। यदि मसालेदार मांस की एक बोटी आग में डाल दो तो उसकी बदबू से नाक फटने लगेगी। ऐसे ही ज़हरीली औषधियों या वस्तुओं को अग्नि में डालने से जो विषाक्त वायु मनुष्य की आंख को लगे तो मनुष्य अंधा हो जाये। संखिया का तेल निकालने वाले इस तथ्य को खूब जानते हैं।

प्राचीन समय से भोजन करने से पूर्व भोजन के सभी पदार्थों में से थोड़ा थोड़ा लेकर अग्नि पर डाला जाता था, यह परंपरा चली आ रही थी, अब पश्चिमी आहार सभ्यता के कारण यह परम्परा लुप्त सी हो गई है। थोड़ी बहुत रूढ़िवादी परिवारों में यह अग्नि पूजा के रूप में रह गई है मगर वे इस के वैज्ञानिक पहलू से बिल्कुल अनभिज्ञ हैं। आर्य परिवारों में हवन करके भोजन करने की परम्परा मनु महाराज की देन है। अग्नि में जो औषधि तथा सुगंधित पदार्थ डाले जाते हैं वे सोलह गुणा बढ़ कर वायु में फैलते हैं और जलवायु तथा वायुमंडल को शुद्ध करते हैं। जो व्यक्ति ऋतु अनुकूल सामग्री, समिधा तथा शुद्ध घी द्वारा हवन करता है या हवन के पास बैठता है तो हवन की वायु के माध्यम से उसके शरीर में ऐसे सूक्ष्म परमाणु एवं अग्नि का तेज प्रवेश करते हैं कि उस व्यक्ति का शरीर रूपवान तेजस्वी तथा ओजस्वी होता जाता है। चालीस दिन रोगनाशक औषधियां तथा सुगन्धित पदार्थ, केसर, कस्तूरी, चन्दन आदि से हवन करने वाले पुरूष की चेष्टा बदल जाती है। यज्ञ हवन की वैज्ञानिकता को संसार के वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार कर लिया है।

प्रकृति ने मांस खाने वाले पशु पक्षियों के वैसे ही अंग, दांत, पंजे, आंते और रूचि स्वाद इत्यादि बनाए हैं। जो पशु घास इत्यादि चरने वाले हैं उन के वैसे ही अंग गर्दन, मुख, दांत, आंत, रूचि, स्वाद आदि बना दिए हैं। घास चरने वाला पशु मांस को कदापि नहीं खायेगा और मांस खाने वाला पशु कभी भी हरी हरी घास को खाने के लिये लालायित नहीं होगा। मनुष्य पके हुए फल, घी, बूरा, मोहनभोग, खीर, हलुवा आदि पदार्थों को बड़ी रूचि से ग्रहण करेगा। प्राकृतिक तौर पर मनुष्य किसी पशु के छोटे बच्चे को देखकर उसे खाने को कभी लालायित नहीं होगा। हाड़मांस की खुली टोकरी को घृणा भरी दृष्टि से देखेगा। परन्तु मसालेदार वस्तु और घी से तले हुए मांस को खाने में रूचि लेगा। यहां तक की मनुष्य कंकड़ और पत्थरों तक को मसाले में भून कर चाटने लगा है।

भोजन से मनुष्य की बुद्धि, रक्त तथा आयु पर असर पड़ता है। जैसे जानवर का मांस इन्सान खायेगा वैसा ही उसका रक्त, बुद्धि पर असर पड़ेगा। सिंह का मांस खाने वाला व्यक्ति महा क्रोधी होगा। डाक्टरों का मत है मांसाहार से पेट तथा मैदे के रोग बड़ी तेजी से फैलते हैं।

मनुष्य का वास्तविक आहार फल, दूध, अन्न, शाक, घी, मेवा, अंकुरित अन्न तथा दालें इत्यादि हैं। अग्नि की कसौटी या वैज्ञानिकों के मतानुसार ये स्वाद, रस, बल तथा सौन्दर्य तत्वों से ओत प्रोत हैं। सब से अधिक दूध में बल बढ़ाने की शक्ति है। दूध में आहार के सभी तत्व विद्यमान हैं। शाक में एक भाग शक्ति है तो अन्न में चार, फलों में आठ तथा दूध में सोलह गुणा शक्ति है। दूध से मनुष्य की हड्डियां बन कर शरीर बलिष्ठ तथा पुष्ट होता है। प्राय: हम इन वस्तुओं का सेवन वैज्ञानिक विधि से नहीं करते। धारोष्ण दूध शरीर के लिये अमृत है। फलों को मिर्च मसाला लगाकर मत खाओ। जिन फलों का छिलका सूक्ष्म तथा खाने योग्य हैं, उन्हें बिना छीले खाना उत्तम है जैसे अमरूद, अंगूर, बेर, जामुन इत्यादि।

मांस मनुष्य का आहार नहीं है। लन्दन के प्रसिद्ध डाक्टर हेग का मत है कि सभी मांसों में एक प्रकार का विष पाया जाता है। जब वह विष खून में मिलता है तो इस से दिल की

जलन, जिगर की खराबी, तपेदिक, सांस का रोग, खून की कमी, गठिया, हिस्ट्रिया, सुस्ती, नींद का अधिक आना, अजीर्ण रोग, शरीर में तरह तरह के दर्द, जुकाम, इन्फ्लुएंजा, मलेरिया, न्यूमोनिया आदि सैकड़ों रोग मनुष्य के शरीर में पैदा हो जाते हैं।

अमेरिका के विख्यात डा.ए.वाचमैन तथा डा. डी.एस. वकरटीन के मतानुसार मांसाहार से हड्डियां कमजोर हो जाती हैं। अधिक मांसाहार से कैन्सर का रोग अधिक बढ़ता है। जिन की हड्डियां कमजोर हों उन्हें फल सब्जियाँ तथा दूध का सेवन अधिक करना चाहिये और मांस खाना सर्वथा छोड़ देना चाहिये। डा. रसल भी भोजन में मांस की मात्रा बढ़ाते ही कैन्सर के बढ़ने को मानते हैं। इसलिये वे भी मांसाहार छोड़ने के लिये आग्रह करते हैं।

नोबेल पुरस्कार विजेता, अमेरिका निवासी, हृदयरोग विशेषज्ञ डा. एस. ब्राउन तथा डा. जोसेफ एल.मोल्डस्टीन के अनुसार, " अण्डे खाने वाले बच्चे बाहर से हृष्ट पुष्ट दिखाई देते हैं, किन्तु वे हृदय रोग से ग्रस्त हो जाते हैं। अण्डे खाने से शरीर की रक्तवाहिनी नसों में कोलेस्ट्रोल नामक तत्व जमना शुरू हो जाता है जो खून के प्रवाह में बहुत बाधक बन जाता है। धीरे धीरे जमते जमते यही तत्व इतनी अधिक मात्रा में हो जाता है कि रक्त प्रवाह रूक जाताहै। इसे ही हार्ट अटैक कहते हैं।

यदि मस्तिष्क में रक्त प्रवाह न हो तो इसे स्टोक कहते हैं और यदि मूत्राश्य में यह तत्व जम जाये तो पथरी का रूप धारण कर लेता है।

कोलेस्ट्रोल अण्डों में सब से अधिक पाया जाता है जिस की अधिकता से नाना प्रकार के चर्म रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं। अण्डों में छः प्रकार के विष पाये जाते हैं चाहे अंडे मुर्गी मुर्गे के संसर्ग से उत्पन्न हुए हों अथवा बिना संसर्ग के। वे विष हैं :- कोलेस्ट्रोल, लाइपो प्रोटीन, सेचुरेटेड फैटी एसिडस, एसजार, डी.डी.टी.और फैक्शनमाईलोब्युलिनस ।

अंडे खाने से जठराग्नि मन्द हो जाती है, जिससे मनुष्य की आयु घट जाती है। आंतों में सड़न पैदा करके अनेक रोगों को जन्म देते हैं क्योंकि अंडों में विटामिन सी व कार्बोहाइड्रेट तत्व नहीं होते। विटामिन 'बी' कॉमप्लैक्स भी नहीं के बराबर है।

मांस, अंडा, मछली आदि पदार्थों के सेवन से मनुष्य रोगों को आमंत्रित करता है। उसी प्रकार हुक्का, मदिरा, तंबाकू, अफीम, गांजा, सुल्फा, भांग, चरस, स्मैक, क्रैक आदि नशीली वस्तुएं मनुष्य के शरीर पर अनेक रोगों का आक्रमण अपने साथ लाती हैं। हुक्का या बीड़ी, सिगरेट, तंबाकू के सेवन से मनुष्य निर्बल हो जाता है। खून खराब बनता है। मस्तिष्क की रगें कमजोर हो जाती हैं। आंखों की ज्योति कम हो जाती है। फेफड़ें और जिगर कमजोर हो जाते हैं। आयु कम हो जाती है, सांस के रोग आ घेरते हैं। पाचन शक्ति क्षीण अथवा मन्द पड़ जाती है। मदिरा से मस्तिष्क की रगें शीघ्र ही निर्बल हो जाती हैं और नेत्रों को भी कमजोर बना देती हैं। फेफड़ों को गला देती हैं। मदिरा पीने वाले का शरीर या तो सूखा और दुर्बल मिलेगा या कुछ वादी से फूला मिलेगा शराब सब अपराधों की जननी है। शराब पी कर अपराध किए जातेहैं। बलात्कार, कत्ल आदि केसों में शराब सेवन का एक प्रमुख योगदान रहता है। शारीरिक और नैतिक आधार पर शराब का सेवन वर्जित है। अफ़ीम खाने वाले व्यक्ति की स्मरण शक्ति समाप्त हो जाती है उस का मेदा शुष्क हो जाता है। बकरी

की तरह उसका शौच सख्त होकर गोलियों की शक्ल में निकलता है। रंग काला पड़ जाता है। भांग सेवन करने वाले पागल हो जाते हैं। कहा जाता है कि एक रत्ती भर भांग का सेवन करके साधु लोग अपना ध्यान दुनियादारी से हटाते हैं। खेद का विषय यह है कि साधु अधिकतर नशीले पदार्थों के आदी पाये जाते हैं जबकि उन्हें प्रभु के नाम का नशा होना चाहिये। प्रभु के नाम के नशे के स्थान पर भांग, गांजा, सुल्फा, चरस, अफीम आदि का सेवन प्राय: साधु लोग करते हैं जो भगवा वेश पर भारी कलंक है।

आजकल स्मैक का नशा विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों के छात्र छात्राओं के जीवन पर मौत की तरह मंडराया हुआ है। स्मैक का नशा सम्पूर्ण व्यक्तिव को धीरे धीरे मिट्टी में मिला देता है। शरीर सूख कर हड्डियों का कंकाल बन जाताहै। स्मरण शक्ति, विचार शक्ति, कार्य शक्ति तथा साहस खत्म हो जाता है। नपुंसकता तथा पौरूषहीनता का रोग लग जाता है। मनुष्य आत्महत्या तथा हत्या करने पर उतर आता है। भूख समाप्त हो जाती है। इसके सेवन करने वाले की दिनचर्या केवल स्मैक सेवन और शयन तक सीमित रह जाती है। धीरे धीरे श्वेत कीटाणु मरते जाते हैं और एक दिन मौत आकर स्मैक से स्मैकी का पिंड छुड़ाती है। अन्य नशीली दवाइयों का प्रचार और सेवन भी हमारे युवा युवतियों के जीवन का अंग बन गया है। पहले एक दो नशैड़ी पाये जाते थे, अब घर घर कोई न कोई, किसी न किसी नशीले पदार्थ का आदी, बिना ढूंढे मिल जाता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के सलाहकार डा. प्रेम सोबती ने स्वास्थ्य और तंबाकू पर भाषण देते हुए कहा था, "तंबाकू से जुड़ी बीमारियों से दुनिया में हर साल २५ लाख लोग मरते हैं। उन में ५ लाख सिर्फ भारत के हैं। डा. सोबती ने इस बात पर चिन्ता व्यक्त की है कि तम्बाकू से होने वाली आमदनी को उसके द्वारा होने वाली बीमारियों से जोड़कर नहीं देखा जाता। ९५० करोड़ रूपये वार्षिक की जो आमदनी तम्बाकू उद्योग से होती है उससे ७५० करोड़ रूपये तो देश के भीतर मिलता है। २०० करोड़ रूपया निर्यात से उपलब्ध होता है। पर यह नहीं देखा जा रहा है कि उस से कितनी मौतें हो रहीं हैं। भारत में १५ साल की आयु से ऊपर के आधे लोग धूम्रपान करते हैं। १० करोड़ व्यक्ति ऐसे हैं जो किसी न किसी प्रकार तम्बाकू सेवन करते हैं। यदि यही दशा रही तो आने वाले ५ वर्षों में भारत में तम्बाकू महामारी तक फैला सकता है।" तम्बाकू के सेवन से कैन्सर जैसे भयंकर रोगों का प्रसार बढ़ता जा रहा है। अभी हाल ही (२९ जून १९९१ नवभारत टाइम्स दैनिक) में इराक के बहुचर्चित राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन के स्वास्थ्य के विषय में रहस्योदघाटन हुआ है कि वे सिगरेट बहुत पीते थे। फलस्वरूप उन को एक असाध्य रोग हो गया, जिस का उपचार भी असंभव हो गया था। लंदन के डा. विलियम फ्रेंकलिन अपने किसी रिश्तेदार के यहां बगदाद आए तो उन्हें राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन के बिगड़े और लाइलाज घोषित स्वास्थ्य के विषय में बताया गया, तो डा. विलियम फ्रेंकलिन की इच्छा उन्हें देखने की हुई और वे उन से मिले। डा. फ्रेंकलिन ने उन्हें तुरन्त सिगरेट पीना त्यागने को कहा। राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन ने वैसा ही किया, अब वे न केवल रोगमुक्त हैं, अपितु खूब स्वस्थ हैं। डा. फ्रेंकलिन की सलाह यदि राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन ने न मानी होती तो वे कभी भी स्वस्थ नहीं होते।

भोजन कब और कितना खायें ?

मनुष्य का आहार शुद्ध सात्विक, पौष्टिक, संतुलित तथा ऋतु और रूचि अनुसार होना चाहिये तभी वह स्वस्थ, सबल निरोग और दीर्घायु हो सकता है। भोजन के विषय में जितना यह जरूरी है कि वह शुद्ध सात्विक, पौष्टिक, संतुलित और ऋतु अनुकूल हो उस से कहीं अधिक जरूरी है भोजन कब और कितना खाया जाये। इस विषय पर पूरा ध्यान देने की आवश्यकता है। प्राय: लोगों को बार बार बकरी की तरह मुंह चलाने की आदत हो जाती है। कुछ न कुछ वे प्राय: खाते पाये जाते हैं। भोजन खूब भूख लगने पर ही खाना चाहिये। खुल कर भूख तभी लगती है जब व्यक्ति की जठराग्नि अर्थात पाचन शक्ति ठीक होती है। पेट के रोग बिना भूख भोजन करने ,स्वाद के कारण अधिक भोजन करने, मांसाहार और मसालेदार भोजन करने, बासी तथा तामसी भोजन करने से पैदा होतेहैं। बिना चबाये भोजन करना भी पेट को खराब करता है। जल्दी जल्दी बिना अच्छी तरह चबाये जो भोजन किया जाता है वह ठीक प्रकार से पचता नहीं है।

आहार के सम्बन्ध में बहुत खोज हो चुकी हैं और उन का प्रचार प्रसार भी होता रहता है। दो भोजनों के बीच में आठ घंटे का अन्तर रहना चाहिये। प्राय: भोजन चार घंटे में पच जाता है और शेष चार घंटों में वह रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि मज्जा और वीर्य आदि धातुओं की पुष्टि करता है। भोजन और नाश्ते (प्रात:राश) में चार घंटे का अन्तर जरूरी है। इसके साथ ही भोजन का समय निश्चित होना चाहिये। जो लोग निश्चित समय पर भोजन नहीं करते उन की पाचन शक्ति कभी ठीक नहीं रह सकती यह प्रकृति का अटल नियम है। सोने और भोजन के बीच में भी तीन घंटे का अन्तराल होना चाहिये। रात को भोजन करते ही सो जाना स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त हानिकारक होता है। जो लोग भोजन करते ही सो जाते हैं उन का भोजन ठीक तरह पच नहीं पाता। उनके शरीर पर और खासतौर पर पेट पर अनावश्यक चर्बी का जमाव हो जाता है। मन्दाग्नि, गैस, कब्ज आदि रोग उसे पकड़ लेते हैं। भगवान महावीर जैन ने सूर्यास्त से पूर्व भोजन करने का उपदेश मानव जाति को देकर बड़ा उपकार किया था, धन्य हैं वे लोग जो सूर्यास्त से पूर्व अपना भोजन कर लेते हैं जहां इस नियम का आध्यात्मिक महत्व है वहां शारीरिक निरोगता के लिये कम महत्व नहीं है। यह ठीक है बिना आत्मिक उन्नति के हमारी शारीरिक उन्नति भी ऐसी है जैसे बिना फल के वृक्ष होंता है। इसीलिये भगवान् महावीर जैन ने सूर्यास्त से पूर्व भोजन को आत्मिक और शारीरिक दोनों दृष्टि से उपयोगी मान कर मानव जाति को इस नियम का पालन करने का उपदेश दिया। जैन समाज के लोग प्राय: इस नियम का पालन कठोरता से करते हैं मगर नई पीढ़ी के युवा युवतियां घर पर न सही पंचतारा होटलों में सूर्यास्त के पश्चात भोजन करने लगे हैं और मांस मदिरा के भी आदी होते जा रहे हैं। अब यह अपवाद नहीं है अपितु पंचतारा होटल संस्कृति बन गई है।

जिस प्रकार सायंकाल का भोजन और शयन में तीन घंटे का अंतराल आवश्यक हैं उसी प्रकार पुरूष स्त्री के संसर्ग अथवा एकान्तवास के मध्य भी भोजन और संसर्ग में भी तीन घंटे

का अन्तराल जरूरी है। जो स्त्री पुरूष इस नियम का उलंघन करते हैं वे स्वयं रोगी रहते हैं और उन की सन्तान भी निरोग नहीं होती। यह साधारण सा नियम मनुष्य के जीवन का आधार है और उस के परिवार के निरोग रहने की गारंटी है। यदि स्त्री पुरूष इस नियम का पालन करेंगे तो उन की आयु भी अधिक होगी और जीवन भी सुखी होगा। भोजन सदैव भूख से कम, जल्दी पचने वाला शरीर को पौष्टिक और शक्ति देने वाला होना चाहिये। जो व्यक्ति बिना चबाये, ठंडा बासी और अशुद्ध भोजन खा लेते है या भूख से अधिक खा लेते हैं और जो शरीर में लगने से बचा रहता है वह मेदे में पहुंच कर कुछ समय पश्चात् सड़ने लगता है।

भोजन के सड़ने की वायु भाप बन कर शरीर में फैल जाती है। जब वह भाप पूर्णतया शरीर में फैल जाती है तो उस को ज्वर कहते हैं। जब वह वायु मस्तिष्क की ओर जाती है तो नेत्र रोग, सिरदर्द, जुकाम, नज़ला इत्यादि उत्पन्न हो जाते हैं। जब यह भाप पैरों की ओर जाती है तो गठिया इत्यादि रोग पैदा हो जातेहैं। खून की ओर जब यह गैस जाती है तो फोड़ा फुन्सी पैदा हो जातेहैं। जब यह भाप फेफड़ों की ओर जाती है तो खांसी, कफ़ दाम इत्यादि रोग उत्पन्न हो जाते हैं ये सब रोग मेदे के सड़ने से उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिये भोजन के सभी प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन अपने जीवन को कष्टमय और रोगों से भरपूर करना है।

भोजन दो बार करना ही प्रकृति के अनुकूल है। इससे भोजन को शरीर में रचने पचने का उचित समय मिल जाता है। बार बार खाना आन्तों और मेदे के साथ अत्याचार करना है। आजकल प्रातःकाल प्रातःराश (नाश्ता) का रिवाज़ चला हुआ है। प्रातःराश या नाश्ते में फल और दूध लेना स्वास्थ्य के लिये सर्वोत्तम है। मौसम के फल ही सदैव खाने चाहिये। मंहगे फल और बेमौसम के फल खाना भी चोंचले बाजी अथवा इठलाना है। दीर्घायु और आरोग्यता के लिये गाय का ताजा अथवा धारोष्ण दूध सर्वोत्तम आहार है। गाय के दूध और घी में सुनहरी रंग होना उसकी विशेषता है। सुनहरापन एक औषधि है जिसे सोना कह सकते हैं जो व्यक्ति के शरीर के विषैले तत्वों को नष्ट करता है और शरीर में अनावश्यक चर्बी पैदा नहीं होने देता। आंखो की ज्योति बढ़ाता है और हृदय जैसे रोगों से दूर रखता है। इस के विपरीत भैंस का दूध चर्बी बढ़ाता है। जिससे हृदय रोग, रक्तचाप, मोटी बुद्धि तथा व्यक्ति प्रमादी बन जाता है। आंखों की ज्योति शीघ्र कम होने लगती है और व्यक्ति लंबी आयु को प्राप्त नहीं होता।

भोजन में अन्न का अधिक से अधिक दो बार ही सेवन करें। वह भी शरीर की आवश्यकता अथवा काम को देखकर अर्थात् शरीर श्रम करने वाला व्यक्ति अन्न को अधिक पचा सकता है और उसे उसकी उतनी आवश्यकता भी है। बुद्धिजीवी लोग अन्न कम खायें तो उत्तम रहेगा। उन्हें दूध फल तथा सब्जियां,अंकुरित अन्न, दालें, गिरियां भोजन के मुख्य भाग बनाने चाहिये प्रातःकाल दूध अकेले नहीं लेना चाहिये उसके साथ कोई फल, मेवा तथा अंकुर अन्न तथा दाल या गिरी ली जानी चाहिये। खाली पेट दूध पीना गैस के रोगों को न्यौता देना है। धारोष्ण दूध का सेवन पेट के रोगों के लिए अमरबाण औषधि है। पीलिया जैसा रोग तथा स्वप्न दोष और वीर्य सम्बन्धी रोग दोनों समय जी भर कर धारोष्ण दूध का सेवन करने से दूर हो जातेहैं।

आजकल मोटे अनाज जैसे जौ, चना इत्यादि लोग नहीं खाते। गेहूं की रोटियां खाते हैं। गेहूं की पैदावार बढ़ाने के लिये किसान रासायनिक खाद खेत में डालता है जिससे पैदावार तो बढ़ जाती है मगर गेहूं के अन्न में रासायनिक खाद का प्रभाव रह जाता है जो व्यक्ति के पेट में गैस का रोग उत्पन्न कर देता है। नब्बे प्रतिशत लोग पेट की व्याधि से पीड़ित पाये जाते हैं। इसलिये हमारा सुझाव है गेहूं, जौ, चना तीनों अनाजों को सममात्रा में मिलाकर खाना चाहिये। ये तीनों अन्न सुपाच्य, स्वादिष्ट एवं पौष्टिक हैं और पेट के रोगों से मुक्त रखते हैं। प्राय: चने और जौ की फसल में रासायनिक खाद का प्रयोग नहीं किया जाता। गेहूं, जौ, चना के समान मात्रा के आटे की रोटी कब्ज निवारक होती है। पेट का आकार भी नहीं बढ़ने देती। आन्तों की सफाई ठीक रहती है। सर्दियों के दिनों में बाजरे का सेवन उत्तम है। बाजरा निरोगा अन्न माना जाता है। राजस्थान के लोग प्राय: बाजरा खाते हैं।

जिस प्रदेश में प्राकृतिक तौर पर जो फसलें पैदा होती हैं या पैदा की जाती हैं उनके अन्न उस प्रदेश के निवासियां के लिये लाभप्रद होते हैं क्योंकि वहां की जलवायु के अनुकूल वे अन्न तथा दालें होती हैं। नागपुर जैसे सन्तरे भारत में अन्य कहीं पैदा नहीं होते। गोआ के काजू अपना सानी नहीं रखते। चमन के अंगूर, कश्मीर के सेब, शरदा आदि फल वहां के जलवायु की विशेषता के कारण विशेष स्वादिष्ट तथा उपयोगी होते हैं।

भोजन अधिक खाने का भी भ्रम प्राय: लोगों को रहता है जो स्वास्थ्य और दीर्घायु प्राप्त करने के लिये बहुत बड़ी रूकावट है। अल्पाहार को दीर्घायु का रहस्य माना जाता है। चालीस वर्ष की आयु तक मनुष्य के शरीर में अधिक कार्य करने और पर्याप्त आहार पचा लेने की शक्ति होती है लेकिन चालीस वर्ष की आयु के उपरान्त व्यक्ति को अपनी शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार ही कार्य करना चाहिये और आहार भी पहले की अपेक्षा कम कर देना चाहिये। शरीर में चर्बी बढ़ाने वाले पदार्थ जैसे घी, मांस, मछली खाने बन्द कर देने चाहिये। वे लोग अपने शरीर और स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ करते हैं जो चालीस वर्ष की आयु के उपरांत भी पहले जितनी ही खुराक खाते रहते हैं।

विश्वविख्यात प्रो. राममूर्ति सैंडो हमारे लगभग एक सप्ताह अतिथि रहे थे। यह हमारा सौभाग्य था कि उन के अनुभव और विचार हमें व्यायाम और आहार के विषय में विस्तार से सुनने और समझने को मिले थे। उन्होने हमें बताया, "प्राय: इन्सान को यह भ्रम रहता है कि जितना वह भोजन अधिक खाएगा उतना ही वह अधिक बलवान बनेगा। जब कि यह मान्यता सत्य के विपरीत है। उन का निजी अनुभव था वे ग्यारह सेर दूध प्रतिदिन पीया करते थे। जिसे शरीर में रचा-पचाने के लिये काफी व्यायाम करना पड़ता था। अधिक व्यायाम करने से थकावट भी बहुत होती थी, उसे दूर करने के लिये आराम और नींद की जरूरत अनुभव होती थी। सदैव ग्यारह सेर दूध उपलब्ध रहना भी कठिन हो सकता था। इसलिये उन्होंने अनुभव के आधार पर ग्यारह सेर दूध घटाते घटाते सवा सेर दूध अपने आहार का भाग रहने दिया। उन्होने जोर देकर बताया कि ऐसा करने से मेरी शारीरिक शक्ति कम नहीं हुई अपितु फुर्ती और ओज अधिक बढ़ गया। साथ ही न अधिक व्यायाम करना पड़ता था न अधिक आराम और सोने की आवश्यकता पड़ती थी। उनकी मान्यता थी कि जितनी

खुराक हम स्वा-पचा कर शरीर का अंग बना सके वही पर्याप्त है न कि दूध, घी, अन्न, बादाम आदि की तौल और मात्रा बढ़ा कर शरीर के साथ अन्याय और अत्याचार करना है।

पहलवान या व्यायाम करने वाले व्यक्ति की खुराक किसी भी हालत में साधारण स्वस्थ शारीरिक श्रम करने वाले व्यक्ति से दुगुनी नहीं होनी चाहिये बल्कि सवाई या ड्योढ़ी खुराक ही पर्याप्त है। आहार के विषय में दूसरी बात ध्यान करने योग्य यह भी है कि मंहगी और बेमौसम की चीजें न खरीदनी चाहियें न खानी चाहियें। पहलवान लोग जो प्राय: शाकाहारी होते हैं वे बादाम जैसी मंहगी वस्तु खाकर शक्ति अर्जित करना जरूरी समझते हैं जबकि अंकुरित चने उन के बराबर शरीर में शक्ति और उर्जा पैदा कर देते हैं। चने और बादाम की कीमत में जमीन आसमान का अन्तर रहता है। बादाम के खाने के तरीके पर भी गौर करने की जरूरत है। आहार विशेषज्ञों तथा आयुर्वेदाचार्यों का कहना है यदि एक बादाम को पकड़ कर उसे खरल अथवा सिल पर रगड़कर घिसा जाये और से शहद के साथ चाट लिया जाये तो उस के खाने से सौ बादाम बिना रगड़े खाने के बराबर शक्ति त व ओज प्राप्त होगा। लेकिन इतना परिश्रम कौन करे ? जो बादाम को रगड़कर नहीं खाते वे अपने बजट पर अनावश्यक बोझ डालते हैं और शरीर का नुक्सान करते हैं।

बादाम अधिक मात्रा में खाने से रक्त में कोलेस्ट्रोल की मात्रा अधिक बढ़ जाती है जिसे ह्रदय रोग तथा स्टोक तथा पथरी के रोग जन्म ले लेते हैं। मूंगफली बादाम की अपेक्षा सस्ती और कोलेस्ट्रोल रहित हैं। इस का प्रयोग साधारण आय वाला व्यक्ति भी कर सकता है। चालीस वर्ष की आयु के पश्चात बादाम के स्थान पर मूंगफली और अंकुरित चने खाने चाहिये। घी के स्थान पर सोयाबीन का घी, मूंगफली का तेल तथा तिल और सरसो का शुद्ध तेल खाने में प्रयोग करना ह्रदय के रोगों से मुक्त रहना है। गाय का घी प्रयोग करने में कोई खतरा नहीं है। गाय के घी, दूध, मक्खन, पनीर, छाछ, दही सभी अमृत तुल्य हैं इसीलिए गाय को माता कहा गया है। जिस मां की छाती में अपने शिशु के लिये दूध नहीं है वह अपने बच्चे का पालन पोषण गाय के दूध से कर सकती है लेकिन गाय स्वस्थ और निरोग होनी चाहिये।

गाय का दूध सदैव खूब उबाल कर पीना चाहिए क्योंकि गाय के शरीर में क्षय रोग के कीटाणु होते हैं जो दूध में भी हो सकते हैं ऐसा आधुनिक डाक्टरों का मत है।

भोजन और चिकित्सा

महात्मा गांधी जी का सेवाग्राम आश्रम सत्याग्रह और अहिंसा के प्रयोगों का केन्द्र ही नहीं था वहां पर भोजन और चिकित्सा पर भी अनेक प्रयोग किए गए थे। महात्मा गांधी स्वयं खोजी स्वभाव के व्यक्ति थे। इसलिए किसी भी नई खोज के लिये वे स्वयं तैयार रहते और अन्य खोजियों को खोज करने में भरपूर सहयोग देते थे। डा.सतीशचन्द्र दास ६० वर्ष की आयु के पश्चात सेवाग्राम आश्रम में आए थे। उन के पास कलकत्ता एडिनबरो, ग्लासगो और डबलिन विश्वविद्यालय की ऊंची-२ मेडीकल डिग्रियां थीं। उन्होने कलकत्ता,

दार्जिलिंग, शान्ति निकेतन, और बनारस विश्वविद्यालय में भी मेडीकल ऑफिसर का कार्य किया था। डाक्टर दास पश्चिम के विज्ञान और पूरब के आस्तिक्य भाव के विचित्र संगम थे। गांधीजी के आश्रम में काफी अरसे तक वे तरह तरह के भोजन के विषय में प्रयोग करते रहे।

डा. दास ने अनुभव किया था कि अधिकतर बीमारियों का कारण भोजन की गलतियाँ हैं। दवाओं से फायदा कम और नुक्सान ज्यादा होता है। आहार को ठीक करके या अदल बदल करके करीब करीब सब रोग ठीक हो सकते हैं। खाने में वे तीन बातों पर विशेष बल देते थे अर्थात पहला गुण, दूसरा मात्रा, तीसरा मेल। प्राचीन आयुर्विज्ञान ग्रंथों में भी इन तीनों बातों पर विशेष ध्यान दिया गया है। किस आहार में क्या-क्या गुण हैं। शरीर को किस-किस चीज की आवश्यकता है। क्या-क्या चीज कितनी-२ खानी चाहिये और क्या-क्या चीजें एक साथ खाईं जा सकती हैं और क्या-क्या नहीं। गुण की दृष्टि से डा. दास ने आहार को नौ अलग अलग श्रेणियों में बांटा था जो निम्न प्रकार से है :-

१. कन्सेन्ट्रेटेड कारबोहाइड्रेट - अर्थात वे चीज़ें जिनमें कारबोहाइड्रेट की मात्रा अधिक है जिन से अधिकतर हमारे शरीर के पुट्ठे बनते हैं। जैसे-गेहूं, चावल, जौ, साबूदाना, मक्का, बाजरा, ज्वार, केला, खजूर, अमरूद, आलू, शकरकन्द, किशमिश, मुनक्का और खरबूजा।
२. कन्सेण्ट्रेटेड प्रोटीन-अर्थात वे चीजें जिन में प्रोटीन की मात्रा पर्याप्त है। जो कार्बोहाइड्रेट के बाद हमारे शरीर के लिये विशेष कर नसों के लिये आवश्यक है। जैसे मूंग, उड़द, अरहर इत्यादि सब तरह की फलियां (बीन्स, मछलियां, अंडा, गोश्त, पनीर और छाना)
३. दूध और दही - इन दोनों को डा. दास एक अलग श्रेणी में रखते थे।
४. वे सब चीजें जिनमें कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन दोनों थोड़ी-थोड़ी मात्रा में मौजूद हैं। जैसे गाजर, मूली, गोभी, बैंगन,शलजम, कुम्हड़ा, लौकी, करेला, भिंडी, कद्दू, ककड़ी, सहजन, परवल, प्याज, टिंडा, आम और जामुन।
५. कन्सेण्ट्रेटेड वैजिटेबिल प्रोटीन और फैट की चीजें जिन में एक खास किस्म का अर्थात वनस्पति का प्रोटीन भी बहुत है और चिकनाई भी है। इन में अधिकतर सूखे मेवों जैसे बादाम, काजू, नारियल, पिश्ता, मूंगफली, और अखरोट तथा वे सब चीजें जिन से तेल निकलता है।
६. शुद्ध फैट (चिकनाई) जैसे -मक्खन, घी, तेल और मलाई।
७. खट्टे फल : जैसे संतरा, मौसम्मी, अंगूर, नींबू और टमाटर।
८. मीठे फल : जैसे केला, अमरूद, खजूर, किशमिश, आम, मुनक्का, पपीता।
९. पत्तियां जैसे - नीम, धनिया, पोदीना, पालक, मेथी और करीब करीब सभी हरे साग।

इन नौ तरह की चीजें जैसे केला, अमरूद,खजूर, किशमिश और मुनक्का नं. ८ में भी है और नं. १ में भी हैं ऐसे ही आम और पपीता नं. ८ में भी है और नं. ४ में भी। डा. दास के आहार सम्बन्धी सिद्धांतों में मेल का विचार अर्थात कौन-कौन सी चीजें एक साथ खाई

जा सकतीं हैं और कौन-कौन नहीं खाई जा सकतीं, विचित्र बात थी जो हमारे प्राचीन आयुर्विज्ञान ग्रंथों में भी विद्यमान है।

इस का विशेष कारण डा.दास यह मानते थे कि अलग चीजें मेदे और अन्तड़ियों में (हजम होने के लिये) से अलग-अलग तरह के रस खींचती हैं अर्थात कोई अम्ल रस कोई क्षार रस इत्यादि। एक तरह का रस खींचने वाली चीजें मेलवाली और अलग अलग तरह का रस खींचने वाली चीजें बेमेल वाली समझी जाती हैं। मेलवाली चीजें खाने से मेदे और शरीर की नसों (नरवस सिस्टम) को आसानी होती है और हाजमा अच्छा रहता है। बेमेल चीजें खाने से मेदे और शरीर पर जोर पड़ता है जिस का धीरे-२ हाजमें पर कुप्रभाव पड़ता है। इस से खाना शरीर में नहीं लगता और शरीर दुर्बल हो जाता है। पेट के अधिकतर रोग इसी कारण पैदा होते हैं।

हमारे देश में करोड़ों लोग हजारों साल से दाल-रोटी, दाल-चावल या भात-मछली खाते रहे हैं और अब भी खाते हैं। उन में से लाखों व्यक्ति बहुत तन्दुरूस्त दिखाई देते हैं। लेकिन डा. दास इस तरह के मेल को गलत कहतेहैं और उनकी तन्दुरूस्ती का कारण आदत बताते हैं। उन का मत था कि यदि ये लोग बेमेल चीजें न खाते तो निस्संदेह इन का स्वास्थ्य और अधिक अच्छा होता तथा वे बीमार नहीं पड़ते और लंबी आयु प्राप्त करते। डा. दास के अनुसार गेंहू, मक्का की रोटी या चावल के साथ दाल नहीं खानी चाहिये। चने की रोटी के साथ दाल खाई जा सकती है क्योंकि चना नं. २ है। दाल अकेले या किसी ऐसे खाने के साथ खाई जा सकती है जिसमें श्रेणी नं. १ की कोई चीज शामिल न हो।

डा. दास का यह भी कहना है कि चालीस साल से ऊपर के लोगों को विशेष कर जो शारीरिक श्रम नहीं करते, इस तरह के लोगों के लिए दिन में चार तोले से दस तोले तक सिकी हुई रोटी या उतना ही पका हुआ दलिया या चावल काफी हैं। यदि उस के साथ उसी श्रेणी की दूसरी चीज खाई जाय या आठ खजूर खाए जायं, तो दो तोले रोटी कम कर देनी चाहिये।

डा. दास का निश्चित मत था कि नगर के लोग विशेषकर शिक्षित लोग अधिकतर आवश्यकता से अधिक खाना खाते हैं और यही उनकी बीमारियों की जड़ है। इस बुरी आदत के कारण उनके मेदे बढ़ जाते हैं जब तक वह नहीं भरते भूखे-भूखे महसूस होता है उन के भर जाने पर तृप्ति अनुभव करते हैं। यह झूठी भूख उन के स्वास्थ्य का सत्यानाश कर डालती है। इस का उत्तम निदान खाने को समुचित मात्रा में चबा-चबा कर खाना चाहिये धीरे-धीरे मेदा ठीक हो जायेगा। श्रेणी नं. २ की चीजों के विषय में भी डा. दास का विचार था कि इस तरह की चीजें विशेष कर दालें, मटर और सेम कमजोर मेदे वालों या चालीस साल से ऊपर के लोगों को बिल्कुल नहीं खानी चाहिये। दालों की जरूरत सिर्फ प्रोटीन के लिये होती है। दाल का प्रोटीन मुश्किल से देर में पचता है। दूध का प्रोटीन अति शीघ्र पच जाता है। चालीस साल से ऊपर की आयु के लोगों जितना प्रोटीन चाहिये वह आध सेर दूध से और ताजा सब्जियों से मिल सकता है।

श्रेणी नं. १ की किसी चीज के साथ श्रेणी नं. ७ की कोई चीज अर्थात खट्टा जाति के फल या खट्टी सब्जी या खट्टी चीज़ जैसे दही कभी नहीं खाना चाहिये। श्रेणी नं. २ की चीजों

के साथ इस तरह की चीजें खाई जा सकती हैं। गेहूं की रोटी या भात के साथ दही, नींबू या टमाटर नहीं खाये जा सकते। लेकिन चने की रोटी या किसी तरह की भी दाल के साथ दही, नींबू या टमाटर अच्छी तरह खाये जा सकते हैं। अचार और मुरब्बे प्राय: गलत और हानिकारक चीजें हैं। दूध श्रेणी नं. १ की चीजों के साथ या श्रेणी नं. २ की चीजों के साथ या इन में से किसी के साथ भी खाया जा सकता है। लेकिन उचित यह है कि दूध बिल्कुल अलग ही खाया जाय विशेष कमजोर पाचन शक्ति वाले को दूध अलग ही लेना चाहिये।

श्रेणी नं. ७ की कोई चीज संतरा, अंगूर, नींबू या टमाटर दूध के साथ थोड़ा सा खाना सभी के लिये फायदेमंद हैं। दही के साथ संतरा, अंगूर, नींबू या टमाटर खाना अच्छा है। लेकिन दूध या दही के साथ श्रेणी नं. ८ की ये चीजें जैसे - केला, अमरूद खजूर या किशमिश या मुनक्का नहीं खाना चाहिये। आम या पपीता दूध के साथ खाया जा सकता है। श्रेणी नं. ४ की कोई भी चीज़ श्रेणी नं. १ की किसी भी चीज के साथ, या श्रेणी नं. २ की किसी भी चीज़ के साथ अच्छी तरह खाई जा सकती है। इतना ही नहीं जिस समय श्रेणी नं. १ या श्रेणी नं. २ की कोई भी चीज खाई जाय तो उस के साथ श्रेणी नं. ४ की एक या अधिक चीजें उससे चौगुनी मात्रा में खानी आवश्यक है। मसलन यदि १० तोला गेहूं की रोटी खाई जावे, तो उसके साथ चालीस तोला सब्जी श्रेणी नं. ४ में से खाना आवश्यक है। यदि ५० तोला सामान इस तरह एक साथ नहीं खाया जा सकता, तो गेहूं की रोटी को उसी अनुपात से कम खाना चाहिये। अर्थात यदि केवल ५ तोले की भूख है, तो एक तोला रोटी और चार तोला सब्जियां खानी चाहियें। यही नियम भात के साथ या दाल के साथ यानी श्रेणी नं. १ और श्रेणी नं. २ की हर चीज के साथ निभाना चाहिये।

श्रेणी नं. ४ की हर चीज दूध या दही के साथ भी खाई जा सकती है। श्रेणी नं. ५ की चीजें बादाम, नारियल, काजू वगैरह कठिनाई से हजम होती हैं, इसलिए इन्हें सदैव पृथक खाना उचित है किसी दूसरी चीज के साथ कतई नहीं। इन्हें थोड़ी मात्रा में ही खाना लाभप्रद हैं। श्रेणी नं. ६ की चीजें मक्खन, घी, तेल या मलाई श्रेणी नं. १ या नं. २ या नं. ३ या नं. ४ में से किसी भी श्रेणी की चीज के साथ खाई जा सकती है लेकिन इन की मात्रा अपनी पाचन शक्ति के अनुसार होनी चाहिये। श्रेणी नं. ८ जिस में मीठे फल जैसे - केला, अमरूद, खजूर, किशमिश, मुनक्का श्रेणी नं. १ की चीजों जैसे गेहूं की रोटी या भात आदि के साथ खाई जा सकती है लेकिन श्रेणी नं. २ की कोई चीज जैसे दाल या चने के साथ श्रेणी नं. ८ की कोई चीज नहीं खानी चाहिये।

पपीता और आम ये दोनों फल श्रेणी नं. १ की या ३ की किसी भी चीज के साथ खाये जा सकते हैं। पपीता और आम अपने विटामिन के लिहाज से बहुत अच्छे फल हैं। विशेष कर आम तो बहुत ही अच्छा आहार है। श्रेणी नं. ७ का कोई फल श्रेणी नं. ८ के किसी फल के साथ मिलाकर एक साथ नहीं खाना चाहिये। अर्थात सन्तरा और केला एक साथ कभी नहीं खाना चाहिये। फलों के विषय में सबसे अच्छा नियम यह है कि एक समय में कोई एकफल ही खाया जावे दो तरह के फल एक साथ न खाये जावें। श्रेणी नं. ९ में से धनिया,

पौदीना, नीम, मेथी या पालक इन में से कोई न कोई एक या अधिक प्रकार की हरी पत्ती, कच्ची दो चार माशे हर भोजन के साथ अवश्य खानी चाहिये। इन में विटेमिन बहुत होते हैं ये बहुत लाभदायक होती हैं।

कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और फैट (चिकनाई) जो रोटी चावल दाल और घी में बहुत है। इन से हमारे शरीर की रचना होती है। लेकिन विटेमिन राज या कारीगर की तरह इस मसाले से शरीर रूपी इमारत बनाते हैं। इसलिये विटेमिन शरीर के लिये आवश्यक हैं। धनिया, पौदीना, नीम की पत्ती, ताजा आंवला और पान का पत्ता विटेमिन के भंडार हैं। इन्हें कच्चा और ताजा ही खाना चाहिये। पान को बिना लगा चबना सर्वोत्तम है। अधिकतर फलों में विटेमिन होते हैं। सब्जियों के विटेमिन, पकाने से तथा गेहूं, चावल, दाल वगैरह के विटेमिन भी पकाने से नष्ट हो जाते हैं। डा. दास की राय है कि गाजर, मूली, शलजम, करमकल्ला, लौकी, भिंडी कच्ची खाई जा सकती है तभी इन का पूरा लाभ मिलता है। उन की राय में खोवा, रबड़ी, पूरी, पकवान, मिठाइयाँ और मसालेदार चीजें मुर्दा खाद्य हैं और हानिकारक अधिक हैं। चीनी सफ़ेद जहर है, चाय तम्बाकू का प्रयोग हानिकारक है। गुड़ बहुत लाभप्रद है। गेहूं की रोटी, गुड़ और घी को मिलाकर या दलिया गुड़ और घी को मिलाकर, भात, गुड़ और घी को मिलाकर खाना बहुत अच्छा होता है यह डा. दास का मत है। केवल उसके साथ अनुपात से सब्जी या पत्ती आवश्यक हैं। वे दूध और दलिया को गलत बताते हैं। दूध या दही के साथ गुड़ उनकी राय में गलत है। वे केले और घी को मेल अच्छा मानते हैं केला और दूध नहीं। घी से मक्खन और डबलरोटी से चपाती अच्छी होती है। सब्जी आमतौर पर कच्ची या उबली हुई खाई जाय नमक न खाया जाय तो उत्तम है क्योंकि कुदरती तौर पर अनाज, दूध, सब्जी में पर्याप्त नमक होता है। खाना ठूंस ठूंस कर कभी नहीं खाना चाहिये, सदैव हल्की सी भूख बाकी रह जाय।

महात्मा गांधी अपने रोगी मित्रों को आश्रम में बुलाकर रखने और उनका इलाज कराने, खुद उन की सेवा सुश्रुषा करने के बेहद शौकीन थे। सेठ जमनालाल बजाज की पत्नि श्रीमती जानकी बाई बवासीर के अलावा अन्य रोगों से पीड़ित थीं। उनका ऑपरेशन भी कराया गया था। वे जीवन से निराश हो चलीं थी। बिस्तर पर पड़ गई थीं। डा. दास ने न कोई दवा दी, न ऑपरेशन, न इन्जेक्शन। पहले चौदह दिन उपवास कराया। उपवास में प्रतिदिन एनिमा दिया जाता था। उसके बाद एक संतरा रोज, एक सप्ताह बाद दो संतरा रोज, दो से तीन, तीन से चार और पांच संतरे तक नौबत पहुंचा दी। तीन संतरे खाकर जानकी बाई तीन मील सैर करने लगी थीं। वे डा. दास को जादूगर मानने लगी थीं। उन्हें डा. दास की आहार चिकित्सा से चमत्कारिक लाभ पहुंचा।

इसी प्रकार श्री दासप्पा मैसूर के देशभक्त वकील, गठिया और जोड़ों के दर्द से बहुत पीड़ित थे। उन के सभी जोड़ जाम हो गए थे। बापू ने उन्हें भी बुलाकर डा. दास को इलाज के लिये सौंप दिया। डा. दास ने पहले उपवास और बाद में थोड़ा थोड़ा फलों का रस देकर इलाज किया। दो महीने के अन्दर श्री दासप्पा बिना दवा और इंजेक्शन के तीन मील दौड़ सकता था, दस मील साइकिल चला सकता था। उन की आयु ५५ साल थी लेकिन २०

साल के युवक की तरह तेज दौड़ता था। उनका वजन १५० पौंड से घटकर ११८ पौंड रह गया था।

डाक्टर दास ने श्री दासप्पा को बताया तुम्हारा वजन ही रोग का कारण था इसे बढ़ने मत देना। खाने में फल और सब्जियों का उचित प्रयोग करना। डाक्टर दास को बहुत दुख हुआ जब दासप्पा ने उन्हें बताया कि पायरिया के कारण उस के सारे दांत निकाल फेंके हैं। डा. दास का मत था इसी इलाज से पायरिया भी भाग जाता और दासप्पा के दांत भी बच जाते। इसी प्रकार एक दस वर्ष के लड़के के टॉन्सिल एक महीने के अन्दर कार्बोहाइड्रेट तथा गुड़ बंद कराके बिना ऑपरेशन के, बिना दवा के आहार सुधार करके बिल्कुल ठीक कर दिये।

डा. दास ने १२ साल पुराने कोढ़ के रोगी परचुरे शास्त्री का भी इलाज उपवास और आहार सुधार से किया था। जबकि अन्य डाक्टर आमतौर पर उपवास को कोढ़ में बुरा बताते हैं। शास्त्री जी चल फिर नहीं सकते थे लेकिन डा. दास के उपचार से लंबा कुर्ता पहन कर कुटिया के बाहर सड़क पर टहलने लगे थे। महात्मा गांधी स्वयं परचुरे शास्त्रीजी के जख्म साफ किया करते थे। एक दिन शास्त्री जी ने कहा बापू आप खाना खाने के बाद प्रतिदिन मेरे जख्मों को साफ किया करते हैं कृपया आप कष्ट न किया करें आप को राष्ट्र के लिये अनेक काम करने हैं अपना समय मेरे उपचार में नष्ट न करें। बापू ने शास्त्रीजी को उत्तर दिया, सचमुच शास्त्री जी आप बहुत स्वार्थी हैं मुझे जो आनन्द आप की सेवा से आता है वह अन्य कार्य से नहीं। आप मुझे इस आनन्द से वंचित करना चाहते हैं, यह आप का स्वार्थ है, कृपया मुझ क्षमा करें मुझ सेवा करने से वंचित न करें। स्वयं बापू ने डा. दास के आहार सुधार के नियमों को अपनाया और भोजन में काफी सुधार किया था।

डा. जस्ट की आहार चिकित्सा

डा. जस्ट जर्मनी के चोटी के एलोपैथ डाक्टर थे। वे कब्ज के जन्मजात रोगी थे। चालीस वर्ष तक शरीर में रोगों से लड़ने और कुछ भी हजम कर लेने की प्राकृतिक अद्‌भुत क्षमता तथा शक्ति होती है। इसके उपरान्त पाचन क्रिया व शक्ति क्षीण होने लगती है। मनुष्य जल्दी जल्दी रोगी होने लगता है। दवाईयां प्रारंभ में तो चमत्कार दिखाती हैं मगर धीरे धीरे दवाईयां लाभ के स्थान पर अधिक हानि पहुंचाने लगती हैं क्योंकि मनुष्य में प्राकृतिक शक्ति का लोप होता जाना इस का मुख्य कारण होता है। डा.जस्ट ने स्वयं भी और अन्य अनुभवी डाक्टरों से भी इलाज कराया मगर उन का रोग बढ़ता ही गया। उन्हें भूख नहीं लगती थी। शौच ठीक नहीं होता था, नींद नहीं आती थी। काम करने को मन नहीं करता था। जीवन में निराशा का प्रकोप दिनोंदिन बढ़ता जा रहा था। कभी कभी आत्महत्या तक नौबत आने लगती थी। डा. जस्ट में जीवन शक्ति का ह्रास बड़ी तेजी से हो रहा था।

एक दिन डा.जस्ट ने निराश होकर अपने क्लीनिक को ताला लगा दिया और घर से निकल पड़े। उन की कोई मंजिल नहीं थी, कोई कार्यक्रम नहीं था। केवल वे अपने कब्ज

के रोग से छुटकारा पाना चाहते थे यदि छुटकारा नहीं मिलता है तो जीवन से ही छुटकारा मिल जाये तो अच्छा है बस इसी विचार से वे सैर के बहाने घर छोड़कर चल पड़े। जिधर पैर चलते वे चलते गये वे इतने चले कि उन्हें बहुत दिन के पश्चात भूख अनुभव हुई। भूख का शान्त करने के लिये जंगल में क्या खायें यही सोचते चले जा रहे थे कि जंगल में एक अंजीर का वृक्ष पके हुए अंजीरों से लदा पड़ा था, बस उसी वृक्ष के नीचे डेरा डाल दिया। क्षुधा को शान्त करने के लिये वहीं डट कर जी भर कर अंजीर खाये। क्षुधा शान्त हुई और थकान के कारण नींद आ गई और गहरी नींद, बिना बिस्तर के ही धरती माता की गोद में सो गए।

डा. जस्ट बड़ी गहरी नींद सोये, आंखे खुली और उन्हें शौच की हाज़त हुई। बड़ा खुल कर बदबूदार पुराना सड़ा मल आया जिससे उन का शरीर हलका हुआ और पुनः तीव्र भूख लगी। उन्होने पुनः अंजीर के फल पेट भर कर खाये और नींद का जोर हुआ वे उसी वृक्ष के साये में सो गए खूब सोये, आंखे खुली, शौच की हाज़त हुई। पहले की भांति खुलकर बदबूदार गला सड़ा सूखा दस्त आया। डा. जस्ट को बहुत प्रसन्नता हुई वे शरीर को फुर्तीला और स्वस्थ अनुभव करने लगे भूख जोर से लगने लगी फिर वही अंजीर खाये और सो गए। नींद खुलती, शौच जाते, प्यास लगती झरने का पानी पीते, भूख लगी, अंजीर खाते और सो जाते, यही क्रम कई दिन रात चलता रहा और धीरे धीरे डा. जस्ट अपने मन और शरीर को युवा अनुभव करने लगे। उन के चेहरे का तेज बढ़ने लगा, झुर्रियां लापता हो गईं फुर्ती और नवशक्ति का संचार होने लगा, उत्साह, उमंगे लेने लगा तब उन्होने अंजीर के वृक्ष तथा उसके फलों का धन्यवाद किया और अपने घर को वापिस लौटे।

डा. जस्ट ने अनुभव किया कि उन के रोग का उपचार अंजीर का फल, लंबी पदयात्रा और झरने का पानी तथा शहर की दूषित वायु के स्थान पर जंगल की साफ सुथरी वायु है। इस के पश्चात डा. जस्ट दवाई के स्थान पर उपवास और प्राकृतिक आहार अपने रोगियों को देने लगे। उनके इलाज से असाध्य रोगी भी स्वस्थ होने लगे। उन्हें शरीर की संरचना तथा कार्य प्रणाली का तो ज्ञान पहले ही था अब उन्होंने प्राकृतिक इलाज आरंभ किया। जिस के लिये उन्होने आदिवासियों के रहन सहन, खान पान, जीवनचर्या तथा प्राकृतिक इलाज का गहरा अध्ययन किया। वे इस परिणाम पर पहुंचे कि ज्यों ज्यों मनुष्य प्रकृति से दूर होता गया वह रोगी रहने लगा और उस की आयु घटने लगी। इसलिये उने 'रिटर्न टु नेचर' पुस्तक लिखी, जिसका हिन्दी में रूपांतर डा. विट्ठल मोदी, प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र, गोरखपुर (उत्तप्रदेश) ने किया है। यह पुस्तक पठनीय और जीवनदायिनी है।

डा. जस्ट के मतानुसार पशु और पक्षी स्वाभाविक तौर पर प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते हैं। इसलिये वे प्रायः बीमार नहीं पड़ते। उन्हें कोई रोग लगा, खाना छोड़ देते हैं। वे रोग मुक्त हुए, खाना खाने लगते हैं। वे आवश्यकता से अधिक कभी भी नहीं खाते। पक्षी ताजा फल या अपना आहार तलाश करते हैं। पशु मल त्याग करने के पश्चात सफाई के लिये पानी नहीं लेते। बीमार पशु का ही गुदाद्वार मल से मैला मिलेगा, स्वस्थ पशु का नहीं डा. जस्ट ने लिखा है कि जिस मनुष्य का पेट स्वस्थ है अर्थात पेट में खराबी नहीं है उस का मल शौचादि निवृत्ति के उपरान्त गुदाद्वार पर मल लगा नहीं होगा, यह पहचान है स्वस्थ

आमाश्य, स्वस्थ आंतें, स्वस्थ जिगर की। दूसरी पहचान इसी सम्बन्ध में फ्लश शौचालय के पॉट को मल पकड़ेगा नहीं पानी डालते ही तुरन्त बह जायेगा अगर मल पॉट को चिपकता है तो समझना चाहिये कि आन्तों में मल चिपका हुआ है और मेदा खराब है।

डा. जस्ट की प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति में जितना स्थान उपवास का है उतना ही अल्पाहार तथा चबा-चबा कर भोजन खाने का महत्व है। शरीर श्रम करने वाले व्यक्ति की खुराक में अन्न दालें, घी, तेल तथा चिकनाई आदि चीजों का होना जरूरी है क्योंकि उसका शरीर मेहनत मजदूरी करता है। बुद्धिजीवी व्यक्ति की खुराक में दूध, दही, फल, सब्जियां तथा अंकुरित अन्न तथा दालें जरूरी हैं। कच्ची सब्जियां तथा पके ताजा फलों तथा शीत ऋतु में सूखे मेवों को वे स्वास्थ्य के पहरेदार समझते हैं। दूध को वे सम्पूर्ण आहार मानते हैं धारोष्ण दूध के बहुत हिमायती हैं। मांसाहार को वे मनुष्य का आहार मानने को तैयार नहीं है अपितु हिंसक पशुओं का आहार मानते हैं।

घुमन्तु तथा फिरन्दर अर्थात् खानाबदोश कबीलों की जीवन शैली का भी डा.जस्ट ने अध्ययन किया था। उन्होंने देखा एक कबीला चला जा रहा है। गर्भवती महिला ने कबीले की सरगना महिला को प्रसव पीड़ा की शिकायत की, बुढ़िया के संकेत पर काफिला रूका, औरतों ने जच्चा के चारों ओर सर्किल बना लिया। गर्भवती जमीन पर लेटी और बच्चा उस के पेट से बाहर, न प्रसव पीड़ा, न करूण क्रन्दन जैसी कि शिक्षित और सुविधा सम्पन्न घरानों की महिलाएं हॉस्पिटल में हाय हाय करके बच्चों को जन्म देती हैं। बच्चे का नाल काटा, जच्चा की नाभी पर कपड़ा की पट्टी बांधी, बच्चे को साफ किया, कपड़े में लपेटा और टोकरी में लिटाकर जच्चा कारवां के साथ पैदल चल पड़ी। प्रसव प्रक्रिया उन महिलाओं के लिए एक सहज स्वाभाविक क्रिया है, जिस का मुख्य कारण इन कबीलों की प्राकृतिक जीवन शैली। वे स्त्री को भोग विलास और काम पिपासा का साधन नहीं अपितु इंसान समझते हैं।

महिला के गर्भवती होने के बाद पुरूष उससे संसर्ग नहीं करते दूसरे वे महिलाएं शरीर श्रम से जी नहीं चुरातीं। इस लिये स्वस्थ और निरोग रहती है। स्वस्थ और निरोग औरत को बच्चा पैदा होते समय कष्ट नहीं होता। जिस प्रकार स्वस्थ व्यक्ति को मल त्याग के समय पीड़ा नहीं होती। लेकिन बवासीर के रोगी को मल त्याग करने में बहुत कष्ट होता है। कच्ची उम्र में वे लोग शादी नहीं करते। आदिवासी कबीलों का जीवन सादा तथा प्राकृतिक होता है। उन्हें झरनों का पानी, जंगल की प्रदूषण रहित जीवनदायिनी वायु, जंगल के फल, शहद, जड़ी बूटियाँ खाने को उपलब्ध होती हैं। शरीर श्रम से उन्हें कभी परहेज नहीं होता वे खूब मनोरंजन करते हैं। संक्षेप में उनका जीवन प्राकृतिक है, वे प्रकृति प्रेमी हैं। प्रकृति के समीप रह कर वे सुखी रहते हैं।

डा.जस्ट स्वास्थ्य की दृष्टि से पत्थर और ईंट के मकानों को अच्छा नहीं मानते। ये मकान गर्मियों में अधिक गर्म, ठंड के दिनों में अधिक ठंडे रहते हैं। गर्मियों में ये मकान गैस छोड़ते हैं जो स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होती है। हवादार झोंपड़ी को वे स्वास्थ्य के लिये उत्तम मानते हैं। पहले और दूरदराज के गांवों में अब भी कच्ची मिट्टी की दीवारें और फूस की झोंपड़ी की छत होती है ये मकान प्राकृतिक तौर पर वातानुकूलित थे। ऐसे मकान यदि आंधी

और आग तथा अन्य सुरक्षा की दृष्टि से भले ही उपयोगी न हों मगर स्वास्थ्य और निरोगिता की दृष्टि से उत्तम होते हैं।

डा.जस्ट बहुत तंग और अधिक कपड़ों को शरीर के लिये हानिकारक मानते थे। वे स्वास्थ्य की दृष्टि से सर्दियों में ऊनी और गर्मियों में सूती कपड़ों को पहनना ठीक मानते थे। नॉयलान टैरीकाट तथा बनावटी रेशे के कपड़े वास्तव में त्वचा पर बुरा प्रभाव डालते हैं जिन का आज प्रचलन, फैशन की दुनिया में जोरों पर है। उद्योगपतियों को मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाना चाहिये। ऐसे वस्तुओं का उत्पादन न करें जो मनुष्य के स्वास्थ्य पर प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष कुप्रभाव डालती हैं। गर्मियों में तथा गर्म देशों में सूती कपड़ा और सफेद कपड़ा शरीर की सूर्य की प्रखर किरणों से बहुत रक्षा करता है जब कि अन्य कपड़ा शरीर को सुहाता तक नहीं है। मनुष्य सर्दी से बचने के लिये कई कई कपड़े अपने शरीर पर लादे रहता है। डा. जस्ट का मत है अधिक कपड़े पहनने और ओढ़ने से शरीर की सर्दी से बचने की क्षमता कम हो जाती है। कम से कम कपड़े पहनना स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छा है। लेकिन इस संबंध में आयु, स्वास्थ्य की स्थिति तथा क्षमता का अपना महत्व है।

शरीर श्रम और व्यायाम से जी चुराने वाले व्यक्ति कभी भी निरोग और दीर्घायु नहीं हो सकते। इसलिये कुछ न कुछ शरीर श्रम और व्यायाम अवश्य करना चाहिये। दोनों समय की लंबी और तेज सैर स्वच्छ वातावरण में करना सभी के लिये श्रेयस्कर है। यथा संभव शरीर श्रम से जी नहीं चुराना चाहिये वरना शरीर धीरे धीरे रोगों से घिर जाएगा।

श्री मोरार जी भाई देसाई का आहार प्रयोग

श्री देसाई प्रसिद्ध गांधीवादी नेता एवं भारत के पूर्व प्रधान मंत्री सन् १९७५ ई. से कोई अन्न, दाल, कच्ची या पक्की सब्जी नहीं खाते। उनके शरीर पर एक औंस भी फालतू चर्बी नहीं है। वे सीधे चलते हैं और सीधी कमर सीधे बैठते हैं। वे बीस वर्ष से बीमार नहीं पड़े हैं। अब (१९९१ ई.) में उनकी आयु ९५ वर्ष है। वे नमक बिल्कुल नहीं खाते। वे खाण्डसारी की बनी मिठाइयाँ ही खाते हैं। चीनी को मधुमेह रोग की प्रेरक तथा स्वास्थ्य के लिये घातक मानते हैं। वे तनावमुक्त रहते हैं और इस आयु में हर बात को सहज भाव से लेते हैं।

श्री मोरारजी भाई देसाई का भोजन क्रम निम्न प्रकार है :-

प्रातः ८ बजे - गाजर का जूस एक गिलास

१० बजे - कच्चे लहसुन की पांच तुरियां, आधा लीटर गाय के दूध के साथ।

दोपहर का भोजन - आधा लीटर दही, कुछ शहद,

५० ग्राम ताजा पनीर

मौसमी ताजा फल

५० ग्राम काजू व भुनी हुई मूंगफली

२० ग्राम बादाम

१० ग्राम पिश्ता

रसगुल्ला, रस मलाई या गाजर का हलुवा

बाद दोपहर - ३.३० बजे ताजे सेव, जूस या नारियल पानी

रात का भोजन - ७.०० बजे - लगभग दोपहर जैसा ही

१०० ग्राम छुहारे

१०० ग्राम अंजीर कुछ अन्य चीजों के स्थान पर लेते हैं।

महात्मा गांधी के पश्चात भारत में श्री मोरार जी देसाई दूसरे व्यक्ति हैं, जिन्होने आहार प्रयोग द्वारा अपने शरीर को स्वस्थ और निरोग रखा है। गांधी जी एक सौ पच्चीस वर्ष की आयु तक पहुंचना चाहते थे और निस्संदेह पहुंच सकते थे लेकिन नाथूराम गोडसे ने गोली का निशाना बनाकर उन की निर्मम हत्या की थी।

गांधी जी ने आहार पर अनेक प्रयोग किए थे और अपना काया कल्प कर लिया था। उन के भोजन में लहसुन का प्रयोग महत्वपूर्ण था। गांधी ने लिखा है कि यह मेरी समझ से बाहर है हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने लहसुन को त्याज्य क्यों किया ? यह तो गरीबों की कस्तूरी है। लहसुन का दूध के साथ वे प्रयोग करते थे। नीम के पत्तों की चटनी उन के आहार का अंग थी। शिकंजवी में नींबू के रस के उपरांत नींबू फैंका नहीं जाता था अपितु उसका साधारण मसालों से अचार तैयार किया जाता था जिसमें खटास कम होती है। गांधी जी ने दूध को शाकाहार में नहीं गिनते थे। बाद में बकरी के दूध का सेवन कस्तूरबा गांधी के सुझाव पर आरंभ किया था। चालीस वर्ष की आयु तक उन का स्वास्थ्य कमजोर रहा। चालीस वर्ष की आयु में गांधी जी ने ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया और आजीवन इस का पालन किया। वे रोजाना शरीर की मालिश कराया करते थे। तेज और नियमित दोनों समय की सैर उन का व्यायाम था। श्री मोरारजी देसाई गांधी जी के अनुयायी हैं उनका जीवन सादा और आदर्शोन्मुख है। उन्होने स्वमूत्र चिकित्सा पर भी प्रयोग किए हैं जो असाध्य रोगों के लिये रामबाण है। इस पर उन्होने एक पुस्तक भी लिखी है। गांवो में पचास वर्ष पूर्व हमें याद है शरीर में कोई चोट या घाव होने पर या खून निकलने पर पेशाब करने की प्राथमिक चिकित्सा की प्रथा थी। एक बार एक साधु ने सर्प के काटे हुए बेहोश व्यक्ति को एक गिलास अपना पेशाब पिला कर होश में ला दिया था और वह निरोग हो गया था। बहुत आग्रह करने पर साधु ने बताया था कि स्वस्थ व्यक्ति, जिसे पेशाब के रोग न हों, उस के पेशाब से सांप का विष शून्य हो जाता है और व्यक्ति का जीवन बच जाता है। इस से अधिक मुझे इस संबंध में मुझे अधिक जानकारी नहीं है। श्री मोरारजी देसाई अपने भोजन को प्राकृतिक मानते हैं। जिसमें गाय का दूध दही और दूध के उत्पाद से बनी चीजें, ताजा फल, फलों का रस, लहसुन तथा सूखे मेवों की गिरियां शामिल हैं। यदि व्यक्ति स्वस्थ और निरोग रहने के लिये अच्छा आहार लेता है तो उसे विलासिता कहना अभद्रता है। भोजन खाकर रोगी होना दवाईयों से पेट को कब्रिस्तान बनाना समझदारी नहीं है। आजकल दवाईयां भी शुद्ध नहीं मिलतीं। आहार में सुधार करके डाक्टरों की भीड़ घटानी चाहिये। एक डाक्टर एक समय में तसल्ली के साथ अधिक रोगियों का उपचार नहीं कर सकता। एक घंटे में सरकारी दवाखानों में पचासों रोगियों को निपटा देते हैं जबकि उन में कई रोगी ऐसे पाये जाते हैं जो अकेला एक घंटा में पूरी तरह देखा जा सकता है।

श्री मोरारजी देसाई दवाईयां नहीं खाते। आहार सुधार तथा उपवास और प्राकृतिक जीवन द्वारा ९५ वर्ष की आयु में स्वस्थ हैं जो एक आदर्श हैं।

दीर्घायु कुछ लोग

सोवियत संघ (सन् १९८५ में) के कुछ दीर्घायु व्यक्तियों के नाम सोवियत पत्रिका में प्रकाशित हुए थे। मैं नहीं कह सकता कि अब तक वे जीवित हैं या नहीं। यदि वे जीवित भी नहीं हैं तो भी सन् १९८५ में उन की आयु के देखते हुए यह आश्चर्य नहीं होता कि हमारे प्राचीन ऋषि मुनि साधना और तपस्या के बल पर हजारों वर्ष की आयु प्राप्त कर सकते थे और स्वेच्छा से प्राण त्यागने तक की शक्ति प्राप्त कर लेते थे।

आज़रबैजान सोवियत संघ का एक गणराज्य है। उसके एक जिले का नाम लेटिक है। यह मरूद्यान पर्वतों के द्वारा घिरा हुआ है। यहां के लोग, एक नहीं कई, एक सौ पचास वर्ष से ऊपर आयु के थे। जिनके नाम व आयु सन् १९८५ ई. के अनुसार इस प्रकार है :-

१. शिराली मिस्लीमोव १६८ वर्ष
२. कियामल खान अलीयेवा १५८ वर्ष
३. महमूद एवाज़ोव १५५ वर्ष
४. सनम हुसैनोव १५४ वर्ष
५. शिराली हसनोव १५३ वर्ष

तिकियाबान गांव के निवासी रशीद इबादोव की आयु सन् १९८५ में १२० वर्ष और रूबी मामदोवा की आयु १०९ वर्ष थी। रशीद इबानोव के पिता ने उसे शिक्षा दी थी, "बल पैरों में होता है और आलस्य तकिये में। तकिया इस्तेमाल करते रहो तो तकिये में जंग नहीं लगता" जब कोई मुस्कराता है तो वह अपनी १२ पेशियों का इस्तेमाल करता है, लेकिन जो व्यक्ति भौं चढ़ाता है उसे अपने चेहरे की चालीस पेशियों का इस्तेमाल करना पड़ता है। उपरोक्त दीर्घजीवी लोगों के अनुसार शरीर श्रम करते रहने से शरीर की मशीन स्वस्थ और टिकाऊ रहती है। ये सभी अधिकतर पैदल चलते थे। अपने खेतों और खलियानों में खूब मेहनत करते थे। निठल्ले रहना वे जानते तक नहीं थे।

इनका भोजन ताजा और सादा था। वे ताजा मांस खाते थे। अपने खेत की ताजा शाक सब्जियां पेट भर के खाते थे। अपने मवेशियों का दूध, दही, मक्खन घी, खूब खाते थे। चश्मे का पानी पीते थे और ताजा पर्वतीय हवा में सांस लेते थे जिस के कारण वे निरोग और दीर्घायु को प्राप्त हुए।

सन् १९८९ में वियतनाम में २४३२ व्यक्तियों की आयु सौ वर्ष से अधिक थी। पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं की आयु अधिक थी। शतायु महिलाओं की संख्या १७२८ और पुरूषों की संख्या ७०४ थी। सब से लंबे समय तक जीवित रहने वाले व्यक्ति की आयु १३० बताई गई जबकि सब से अधिक आयु की महिला की उम्र १४२ वर्ष की थी।

वियतनाम के राष्ट्रीय जनगणना मंडल के अनुसार यहां सब से अधिक उम्र थाई

अल्पसंख्यक समुदाय की एक महिला न्गान थी क्वोग की है जिस की आयु १४२ वर्ष की है। पुरूषों में सबसे अधिक आयु १३० वर्ष की है जिस का नाम हांग ऐ गियांग है।

यूरोपियन वेल्यूज ग्रुप ने कुछ समय पहले यूरोप के बीस देशों का सर्वेक्षण किया था। इस सर्वेक्षण का निष्कर्ष है कि ब्रिटेन के निवासी सर्वाधिक स्वस्थ एवं प्रसन्न रहते हैं। उनके उत्तम स्वास्थ्य का रहस्य है कि वे हंसने हंसाने में दूसरे लोगों से अधिक समय लगाते हैं। ब्रिटिश चिकित्सा संस्थान के शोध विभाग की एक रिर्पोट का निष्कर्ष है कि "मनुष्य के स्वभाव व भावनाओं से सर्दी-जुकाम का गहरा संबंध है। मानसिक तनाव की स्थिति में शरीर में 'स्टेराइड' नामक तत्व बनने लगता है, जो शरीर में विद्यमान संक्रमण तत्वों को कमजोर बनाता है। फलतः मनुष्य में जीवनी शक्ति नष्ट होने लगती है और शरीर पर रोगाणु आसानी से आक्रमण करने लगते हैं।"

इसी संस्थान के विशेषज्ञों का परामर्श है कि जो व्यक्ति नजला सर्दी-जुकाम व दमे से बचना चाहते हैं, वे तनाव से बचें। अपनी भावनाओं को दबाने का प्रयास न करें। अभिव्यक्ति के लिये दिल खोल कर हंसे। हंसी से वे इन रोगों से बच सकते हैं और स्वस्थ रह सकते हैं।

स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी ऑफ मेडीकल स्कूल के डा.विलियम फ्रे का मत है कि जो लोग हंसते हंसाते नहीं है, वह कहीं अधिक शीघ्र और गंभीर रूप से बीमार पड़ जाते हैं। डा. फ्रे के मुताबिक हंसने से शरीर के अंदर के समूचे तन्त्र में ऐसी हलचल होती है, जो एंडोक्राइन प्रक्रिया को सुचारू कर देती है। इस से रोग पास नहीं फटकते। हंसने से मानसिक तनाव बहुत आसानी से दूर हो जाता है। मन की गांठे सहज ही खुल जाती हैं और चेहरे पर कान्ति आ जाती है। उदासी से मानसिक व शारीरिक शक्तियां निर्बल पड़ जाती हैं। मुस्कराहट या हंसी से शरीर व मन की सोई हुई शक्तियां मानों जाग उठती हैं। वैसे भी सोचिए, मायूसी या निराशा, भला इन्सान को क्या प्रदान करती हैं ?

डा. प्रोफेसर नार्मन का कथन है - हंसना एक उत्तम व्यायाम है। प्रतिदिन चार या पांच किलोमीटर दौड़ने से जो व्यायाम होता है व उससे जो शारीरिक क्षमता बढ़ती है, उतनी पांच मिनट हंसने से बढ़ती है। हंसने से शरीर के स्नायुओं को स्वतः व्यायाम करने का मौका मिलता है। इससे शारीरिक व मानसिक तनाव दूर होते हैं और शारीरिक एवं मानसिक वेदनाओं से छुटकारा मिल जाता है। संसार में केवल आदमी ही अकेला प्राणी है जो हंसने की क्षमता रखता है। मनुष्य के लिये हंसी प्रकृति का अनूठा तोहफा है।

वास्तव में हंसना स्वास्थ्य के लिए एक उत्तम व्यायाम है जिससे, फेफड़ें, हृदय डायफ्राम, वक्ष, पेट और यहां तक कि जिगर (यकृत) भी प्रभावित होकर अपना काम भली-भांति करने लगता है। दिल खोलकर हंसने से फेंफड़ों और श्वास नलिका में से विजातीय तत्व बाहर निकल आते हैं। दिल की धड़कनें बढ़ जाती हैं, जिससे रक्त प्रवाह तेज हो जाता है। ठहाके लगाकर हंसने से तो चेहरे व हाथ पांव की मांसपेशियां तक सक्रिय हो जाती हैं। ऊब, उदासी, तनाव, पीठदर्द, अपराधबोध और सिरदर्द हंसी से पल भर में दूर हो जाता है। विशेषज्ञों ने विभिन्न अनुसंधानों के बाद निष्कर्ष निकाला है कि हंसने से मस्तिष्क को उत्प्रेरणा मिलती है जिससे वहां एपीनेफ्रेन, नोरेपाइनफ्रीन, और डोपामाइन सरीखे

हारमोन्स पैदा होते हैं। ये हारमोन्स शरीर के लिए लाभकारी है और दर्दो को कम कर गठिया जैसे वात-रोगों से और एलर्जी से मुक्ति दिलाते हैं।

दीर्घजीवी लोगों के स्वास्थ्य का रहस्य, शरीर श्रम शुद्ध ताजा जलवायु, सादा और पौष्टिक भोजन, तनाव मुक्त जीवन, खिलखिलाकर अट्ठहास के साथ हंसना हंसाना, मन में किसी के लिये बदले की भावना न रखना तथा दीर्घजीवी होने की इच्छाशक्ति है।

सोवियत रूस के शिराली मुस्लिनोव (१६८ वर्ष) अपनी दीर्घायु के निम्न कारण बताते थे :- शारीरिक श्रम, पहाड़ी की ताजा हवा, थोड़ा कम खाना। उन के भोजन में दूध, सब्जी व फल मुख्य था। वे शराब बीड़ी, सिगरेट नहीं पीते, तंबाखू नहीं खाते, उन की दिनचर्या है, सूर्योदय से पहले उठना, सेब के बगीचे में रहना, दिन भर भेड़ें चराना, टहलना और घुड़सवारी करना, उन का संदेश था, "जीवन में भाग-दौड़ ठीक नहीं, मुझे जीवन में कभी जल्दी नहीं रही, मनुष्य का अकेलापन दुखदायी है। दूसरों के श्रम पर जीने वाले दीर्घजीवी नहीं होते।" वे अपनी पूर्ण उम्र में तीन बार पहाड़ी से नीचे उतरे थे। अंतिम विवाह उन्होने एक सौ ग्यारह वर्ष की महिला से किया था। उसके परिवार में पांच सौ नाती पोते थे जो सभी बाबा के साथ पहाड़ी पर रहते थे।

तुर्की के एक सौ साठ वर्ष की उम्र के झारो आगा की वार्ता दीर्घायु के विषय में दैनिक केसरी में प्रकाशित हुई थी। वह डेढ़ सौ वर्ष पूर्व नैपोलियन से लड़ा था। मृत्यु के समय उसकी ९० वर्षकी बेटी, ग्यारह पत्नियाँ उस की शैया के पास थीं। वह धूम्रपान व मद्यपान नहीं करता था। खेत में खुली हवा में खूब परिश्रम करता था। भूख लगने पर ही भोजन करता था। वह पैदल बहुत चलता था। नौ दस घंटे रात को गहरी नींद सोता था। वह जीवन में कभी बीमार नहीं पड़ा।

भगवान श्री कृष्ण की आयु निधन के समय एक सौ पच्चीस वर्ष थी। उन की मृत्यु किसी शिकारी के बाण से हुई थी उसने हरिण समझ कर उन को तीर मारा था। महाभारत युद्ध के समय धर्मराज युधिष्ठिर की आयु सत्तर वर्ष, भीम की उनहत्तर वर्ष, अर्जुन की अड़सठ वर्ष, नकुल की सड़सठ वर्ष,सहदेव की छहसठ वर्ष थी। द्रोणाचार्य की आयु नब्बे, विदुर की एक सौ पांच वर्ष, धृतराष्ट्र की भी एक सौ पांच वर्ष, व्यास की एक सौ सत्तावन व भीष्माचार्य की आयु एक सौ सत्तर वर्ष की थी। ओरायन नामक ग्रीक इतिहास कार ने लिखा है कि जब ग्रीक लोग हिन्दुस्तान में आए यहां के लोग दीर्घजीवी थे। एक सौ चालीस वर्ष की आयु के लोग यहां बहुत मिले थे। बड़ौदा निवासी सिद्दी वस्ताद नामक व्यक्ति की मृत्यु एक सौ तिरेसठ वर्ष की उम्र में हुई थी, उसके दांत एक सौ तिरेपन वर्ष तक नहीं टूटे थे। उसने अपनी इतनी लंबी उम्र में कभी दवाई का सेवन नहीं किया था।

इसी वर्ष ठाकुर संग्राम सिंह स्वाधीनता सेनानी का, जो लखनऊ विधान सभा के पूर्व सदस्य भी थे, एक सौ पांच वर्ष की आयु में देहान्त हुआ है। मकावी असकरी मिश्र देश की सबसे लंबी उम्र की औरत थी जो १३० वर्ष की आयु पाकर मरी। उसका जन्म १८६० ई. और मृत्यु १९९० ई. में हुई। उसका गांव कॉसी मिश्र के ऊपरी हिस्से में है। वह शाकाहारी थी। उसके परिवार में ३०० व्यक्ति हैं। अमेरिका की कोरा मीक १०१ वर्ष की है और उत्तम

वस्त्र कलाकार है जो अब भी सिलाई करतीहै। कोरा कहती है मैं तो जानती नहीं थी कि मैं एक कलाकार हूँ किन्तु मेरी इस मान्यता ने मुझे सजीव कर दिया है और मैं अपने आप को युवा अनुभव करने लगी है जितने अधिक लोग मेरे कार्य को पसंद करते हैं उतना ही अधिक मैं अपने को जवान अनुभव करती हूँ। वह सन् १९२० से सिलाई का कार्य कर रही है। ९२ वर्ष की आयु तक उसे अपने अन्दर छिपे कलाकार का ज्ञान नहीं था।

व्यायाम की आवश्यकता

प्राकृतिक तौर पर जिस प्रकार हमारे शरीर को भोजन जल, वायु, अग्नि और आवास की आवश्यकता है, उसी प्रकार व्यायाम की भी आवश्यकता है। प्रकृति ने मानव शरीर जैसी अदभुत कोई अन्य मशीन नहीं बनाई। मशीन को सुचारू रूप से चालू रखने के लिये उसके रख-रखाव, सफाई, मरम्मत आदि की आवश्यकता होती है। उसी प्रकार मनुष्य शरीर को स्वस्थ, निरोग रखने और दीर्घता प्राप्त करने के लिये शरीर के सभी अंगो का व्यायाम करना बहुत जरूरी है।

मनुष्य की कर्म योनि है उसे हर काम सीखना पड़ता है। पशु पक्षियों की भोग योनि है उन्हें प्राकृतिक तौर पर सभी काम बिना सिखाये आते हैं। मनुष्य को अपने शरीर को निरोग रखने तथा लंबी उम्र प्राप्त करने के लिये व्यायाम सीखना पड़ता है। संक्षेप में, व्यायाम मनुष्य की बुनियादी आवश्यकता है और वह उसे सीखना पड़ेगा।

मानव शिशु जो न चल सकता है, न दौड़ सकता है, न तैर सकता है, न उसे व्यायाम सिखाया गया है। वह भी प्राकृतिक तौर पर व्यायाम करता रहता है। पालने में पड़ा हुआ शिशु अपने दोनों पैर आगे पीछे करता रहता है। हाथ भी चलाता रहता है। किलकारी मार कर हंसता है, चिल्लाकर रोता है। ये सब शिशु के प्राकृतिक व्यायाम हैं हाथ पैर चला कर वह अपनी पाचन क्रिया ठीक रखता है। हंसने से उसके फेफड़ें और समस्त शरीर के अवयवों का व्यायाम हो जाता है, रोने से भी उसके शरीर का व्यायाम होता है। जिस शिशु की ये क्रियाएं नहीं हैं, वह रोगग्रस्त है।

शिशु जब बैठना शुरू कर देता है तब उसे धरती पर छोड़ देना ठीक रहता है वह पेट और घुटने के बल चलने लगता है यह भी उसका व्यायाम है। साल भर का स्वस्थ बच्चा सहारा लेकर खड़ा होना और थोड़ा - २ चलने लगता है, ये सब उसके व्यायाम हैं जो शिशु ऐसा नहीं करते वे किसी न किसी रोग से पीड़ित हैं।

बचपन में बच्चे घर से बाहर खेलना अधिक पसन्द करते हैं। गली मोहल्ले के बच्चों के साथ सामूहिक खेल खेलना एक दूसरे से सीख जाते हैं और प्राकृतिक तौर पर स्वस्थ और निरोग रहते हैं जो बच्चे बचपन में खेलकूद, भाग दौड़ नहीं करते वे प्राय: किसी न किसी रोग से ग्रस्त हैं। उनके शरीर का विकास भी समुचित नहीं होता। यह कहावत आदिकाल से प्रचलित है स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन व मस्तिष्क निवास करता है। इसलिये शरीर को स्वस्थ रखना बचपन से ही बहुत जरूरी है।

नर्सरी स्कूल, शिशुशाला, शिशु विहार आदि सभी स्थानों पर शिशु तथा तीन वर्ष की आयु के बच्चों के ऐसे खेल और खिलौने की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे छोटे-२ बच्चों के शरीर और कोमल मस्तिष्क का विकास बिना किसी भय और दबाव के प्राकृतिक तौर पर होता रहे। यदि बच्चा खेलते समय किसी भी प्रकार के भय से भयभीत रहेगा इससे वह डरपोक बन जायेगा। इसलिये नर्सरी स्कूल तथा शिशुशाला में ऐसे खेल और खिलौने नहीं रहने चाहिये, जिनसे बच्चे के मन मस्तिष्क पर भय का वातावरण छाया रहे। झूले आदि के पास शिक्षक रहे ताकि बच्चा डरे नहीं, गिरे नहीं और उसमें आत्मविश्वास पैदा हो।

रूस के मार्शल स्टालिन एक दिन किसी किंडर गार्डन स्कूल के समीप से गुजर रहे थे। वे अकस्मात रूके और छोटे-२ बच्चों को आशा भरी निगाहों से देखने लगे। एक बच्चे ने अपने पैर के पंजे को मिट्टी से ढक कर घर (घरौंदा) बनाया। बच्चा घर बनाकर बहुत प्रसन्न हुआ और कहा, "मेरा घर कितना अच्छा"। मार्शल स्टालिन ये सुन कर सकते में आ गए। इस बच्चे ने मेरा घर ही क्यों कहा, 'हमारा घर' क्यों नहीं कहा ? बात बहुत छोटी सी है लेकिन मार्शल स्टालिन के लिये बहुत बड़ी थी। उन्होने राजधानी में आकर, शिक्षाविशेषज्ञों, योजनाकारों, मनोवैज्ञानिकों, वैज्ञानिकों तथा राजनीतिज्ञों की बैठक बुलाकर अपनी समस्या रखी।बच्चे ने 'मेरा घर', कहकर हमारा घर क्यों नहीं कहा ? मेरा 'व्यक्तिवाद' और हमारा 'समाजवाद' की विचारधारा का द्योतक है। अन्त में फैसला यह हुआ कि शिक्षा पद्धति में ऐसा सुधार लाया जाये जिससे व्यक्तिवाद के स्थान पर 'समाजवाद' की विचारधारा का बोलबाला हो। बच्चों के सामूहिक खेलों की ओर अधिक ध्यान दिया जाये ताकि उन में सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास हो। इसलिये मेरा निश्चित मत है कि शिशु और बच्चों में प्रारंभ से ही अच्छे और उदार विचार, संस्कार भरने चाहियें।

व्यायाम वि (विविध)+आ (पूर्ण)+याम (गति) विविध और विशेष प्रकार से शरीर के सभी अंगो प्रत्यंगो को सब ओर विशेष रीति से गति देना शारीरिक व्यायाम कहलाता है जो स्वास्थ्य और सौन्दर्य की प्राप्ति तथा दीर्घता एवं स्थायित्व के लिए परमावश्यक है। यह सोचना सर्वथा असंगत है कि शरीर श्रम करने वालों को व्यायाम की उतनी आवश्यकता नहीं है जितनी बुद्धिजीवियों को होती है। व्यायाम के विषय में आहार की भांति वैज्ञानिक दृष्टिकोण की आवश्यकता है। शारीरिक व्यायाम के तीन प्रमुख विभाग हैं - १. स्नायु व्यायाम २. संधि व्यायाम ३. सुषुम्णा व्यायाम

हमारे शरीर में तीन लाख नस नाड़ियाँ हैं जिन में बहत्तर हजार नाड़ियां सक्रिय रहती हैं जिन से हमारा स्नायुमंडल कार्य करता है। हमारे शरीर में २०६ हड्डियां और उनके १६०० जोड़ हैं।

शरीर के सभी जोड़ों के व्यायाम संधि व्यायाम के अन्तर्गत आते हैं। सभी नाड़ियों में सुषुम्णा प्रमुख हैं इसलिये उसके लिये पृथक व्यायाम दिये गए हैं। शारीरिक व्यायामों के साथ-२ प्राणायाम याने प्राण के सब प्रकार केव्यायाम के लिये प्राणायाम शब्द का प्रचलन है जो इन सब व्यायामों का आधार व प्राण है।

मनुष्य का शरीर दैनिक कार्यों में इधर उधर हरकत करता रहता है। फलतः उसका

स्नायुमंडल शिथिल और ढीला पड़ जाता है। स्नायु संस्थान को स्वस्थ और सुंदर सुगठित रखने के लिये स्नायु व्यायाम परमावश्यक है। इसी प्रकार अस्थि संस्थान तथा स्नायु संस्थान दोनों के सभी जोड़ों को खोलना सन्धि व्यायामों द्वारा हो जाता है। पानी के नलों के जोड़ों में जब काई जम जातीहै तो पानी की धार का वेग कम हो जाता है। जोड़ों को साफ करने पर पानी की धार का वेग पूरा हो जाता है यही बात मानव शरीर के जोड़ों के बारे में है। नियमित संधि व्यायाम करने से शरीर की तमाम हड्डियों, नसों, नाड़ियों, धमनियों और शिराओं के सब जोड़ खुले रहते हैं। फलतः प्राण, रक्त,रस आदि का प्रवाह बिना रूकावट चलता रहता है।

सुषुम्णा एक अति सूक्ष्म नाड़ी है जो गुदामूल और मेरूदंडमूल के बीच से आरंभ हो कर मेरूदंड के भीतर से गुजरती हुई ब्रह्मरंध्र तक पहुंचती है। मनुष्य का जब मेरूदंड टेढ़ा हो जाता है तो सुषुम्णा में भी बल पड़ जाने स्वाभाविक है जिस के कारण समस्त शरीर संस्थान अस्त व्यस्त हो जाता है और अनेक रोग घेरा डाल लेते हैं मन खिन्न रहने लगता है। सुषुम्णा नाम स्वयं सार्थक है सु (सुंदर) सु (सुप्रसन्न) म्ना (मनवाली) अर्थात तन को सुन्दर और मन को प्रसन्न रखने वाली। सुषुम्णा के सीधा और स्वस्थ रखने से मनुष्य सदैव नीरोग, स्वस्थ, सुन्दर और सुप्रसन्न रहता है।

शरीर की संरचनाऔर आवश्यकता के अनुसार व्यायाम करना कराना चाहिये। स्नायु मंडल, अस्थि संस्थान, सुषुम्ना तथा प्राण आदि को स्वस्थ रखने के लिये ऐसे व्यायाम करने चाहिये जो समस्त शरीर को पुष्ट करते हों, शरीर में लचक पैदा करते हों। साधारण शब्दों में हम इस प्रकार कह सकते हैं कि शरीर के सभी अंगों का व्यायाम हो जाये ऐसे व्यायाम करना निहायत जरूरी है।

वास्तव्र में व्यायाम का मूल सिद्धांत शरीर का नित्य प्रति विविध प्रकार के कार्यों में व्यस्त रहने के कारण जो थकावट,शिथिलता, तथा आलस्य आता है उसे दूर करके नई शक्ति, स्फूर्ति और उत्साह पैदा करना ही व्यायाम का कार्य है। जिस प्रकार निवाड़ अथवा चारपाई की रस्सियां नित्य प्रति प्रयोग होने से ढीली पड़ जाती हैं.और पुनः चारपाई को उपयुक्त बनाने के लिये उस की ढीली रस्सियों को खींच तान कर सही कर दिया जाता है उसी प्रकार योगासन अथवा अन्य वैज्ञानिक व्यायामों द्वारा संपूर्ण शरीर संस्थान को चुस्त दुरूस्त कर लिया जाना चाहिये। जो व्यायाम शरीर को नई शक्ति, स्फूर्ति तथा उत्साह प्रदान नहीं करते वे व्यायाम स्वास्थ्य के लिये लाभप्रद कम और हानिकारक अधिक होते हैं जिनका अनुभव मनुष्य को बुढ़ापे में होता है। इसलिए व्यायाम शरीर की शक्ति से अधिक कभी न करें और सारे शरीर के अंग प्रत्यंगों के व्यायाम नित्य प्रति क्रिया करें तभी आप स्वस्थ, सुन्दर तथा दीर्घजीवी हो सकेंगे, अन्यथा नहीं।

व्यायाम का समय

कोई भी कार्य उचित समय पर ही किया जाना उचित होता है। व्यायाम के लिये भी प्रातःकाल का समय सर्वोत्तम है। प्रातः चार बजे जागकर शौचादि से निवृत होकर स्नान करके खुली स्वच्छ वायु में व्यायाम करना चाहिये। कई व्यायाम विशारद व्यायाम के पश्चात स्नान करने का परामर्श देते हैं। स्नान और व्यायाम के मध्य भी कम से कम सर्दियों में आधा घंटे का अंतराल होना चाहिये। अर्थात व्यायाम के उपरान्त आधा घंटा बाद स्नान करना चाहिये जबकि गर्मियों में कम से कम एक घंटे पश्चात् स्नान करना चाहिये क्योंकि गर्मियों में शरीर में पसीने का अधिक जोर रहता है। व्यायाम के पश्चात तुरंत या शीघ्रता से स्नान करने से गर्म सर्द होकर स्वास्थ्य लड़खड़ा सकता है। हमारे अपने अनुभव के आधार पर स्नान सदैव व्यायाम से पूर्व करना ही अधिक वैज्ञानिक है। व्यायाम से पूर्व स्नान करने से शरीर के तमाम छिद्र साफ हो जाते हैं रक्त संचार ठीक हो जाता है, आलस्य दूर हो जाता है और फुर्ती आ जाती है। व्यायाम करने से जो पसीना आता है उससे शरीर का मल साफ हो जाता है बिना स्नान किये छिद्र साफ नहीं रहते। गर्मियों के मौसम में व्यायाम के बाद भी स्नान किया जाये तो कोई हर्ज नहीं क्योंकि पसीने साफ करना भी जरूरी है। जहां पानी की कमी हो वहां गीले तौलियों से पसीने साफ कर लेने चाहिये लेकिन गर्म सर्द होने से सदैव बचना चाहिये।

प्रातःकाल का समय व्यायाम के लिये सर्वोत्तम इसलिये है कि वायुमंडल प्रातः धूल व धुआं तथा प्रदूषण रहित होता है। स्वच्छ वायु में ही व्यायाम का पूरा लाभ मिलता है जबकि गंदी बदबूदार तथा प्रदूषण की वायु में व्यायाम करना अधिक हानिकारक है। प्रातः चार बजे वायु में आक्सीजन की मात्रा अधिक रहती है जो जीवनदायिनी होती है।

प्रातःकाल जंगल में या किसी खुले पार्क या मैदान में जाकर व्यायाम करना चाहिये। नदी, नहर, बड़ी झील के तट पर या पहाड़ी मैदान में व्यायाम करने में अधिक आनन्द मिलता है। प्राकृतिक दृश्य व्यायाम के लिये मनुष्य के मन में उत्साह व प्रेरणा पैदा करते हैं। हरियाली से ओतप्रोत खेतों के मध्य भी व्यायाम करने का अपना ही आनन्द है। प्रत्येक बड़े या छोटे शहर या कस्बे में पार्क अवश्य होने चाहिये ये नगर या शहर के फेफड़े होते हैं। ये पार्क व्यायाम करने तथा सैर करने के लिये बहुत उपयोगी हो सकते हैं यदि नगरपालिकाएं इन की देखभाल और रखरखाव की समुचित व्यवस्था रखें। इनमें मौसम के खिले हुए सुमन, उदास मन के भी स्वस्थ बना देते हैं। संक्षेप में प्रकृति के जितने समीप जा कर व्यायाम किया जायेगा, उतना ही लाभ अधिक होगा अर्थात जहां जल, फल-फूल,हरियाली, खुलापन, पर्वत, नदी, नहर, झील, हरेभरे खेत, बाग बगीचे हों, वहाँ व्यायाम करना अपने शरीर को स्वस्थ, निरोग रहनेतथा दीर्घायु होने के लिये सर्वोत्तम है।

व्यायाम के साथ मालिश का गहरा संबंध है। यदि पन्द्रह मिनट प्रतिदिन अपने हाथ से मालिश की जाये तो शरीर को बहुत लाभ पहुंचता है। त्वचा हमारे शरीर का बहुत महत्वपूर्ण और सब से बड़ा एवं विस्तृत भाग है। त्वचा का व्यायाम मालिश और रगड कर स्नान करने से ही होता है। मालिश के द्वारा त्वचा की चिकनाहट तथा लावण्य बना रहता है। त्वचा पर

झुर्रियां पड़ना, रूखापन आना त्वचा का बुढ़ापा है। मालिश द्वारा त्वचा को स्वस्थ और युवा रखा जा सकता है। रूग्ण और अपंग अवस्था को छोड़ कर सदैव अपने हाथ से ही शरीर की मालिश करनी चाहिये। यदि प्रतिदिन मालिश करना समयाभाव या अन्य कारणों से संभव नहीं है तो सप्ताह में दो बार या एक बार अवश्य करनी चाहिये।

मालिश बादाम रोगन, जैतून का तेल, नारियल का तेल, सरसों आदि के तेलों से करनी चाहिये। बादाम रोगन इतना मंहगा है कि साधारण व्यक्ति उसे खरीदते समय हजार बार सोचेगा। जैतून तेल भी कम मंहगा नहीं है। नारियल और सरसों का तेल ही मालिश के लिये उपलब्ध हैं। सरसों तरा आदि का तेल कड़वे तेल होते हैं जो शरीर को मालिश के लिये अधिक उपयोगी हैं। इन में थोड़ी झलझलाहट है मगर शरीर को चर्म रोगों से मुक्त रखने के लिये इनकी मालिश कहीं अधिक लाभप्रद है। नारियल का तेल मीठा है उससे सभी मालिश कर सकते हैं। इसकी मालिश के पश्चात शरीर के तापमान के समान गर्म जल से नहाने से चमड़ी का रंग निखर जाता है और मैल सारा उतर जाताहै। मालिश करते समय उतना ही तेल आप शरीर पर लगायें, जितना आप मालिश करते करते शरीर में जज्ब कर सकते हैं। तेल को पोतना नहीं है शरीर में जज्ब करना है। तेल अधिक लगाने से एक तो तेल का अपव्यय होता है दूसरे उसका शरीर को लाभ नहीं मिलता है। प्रतिदिन मालिश करने वाले को अधिक तेल चोपड़ने की आवश्यकता भी नहीं रहती।

मालिश करने के लिये जहां शुद्ध तेल की आवश्यकता है वहां मालिश करने का भी वैज्ञानिक तरीका सीखना चाहिये। मालिश करने के उपरान्त यदि आप को अपना शरीर हल्का, फुर्तीला तथा लचकीला महसूस हो तो समझना चाहिये आपने शरीर की मालिश वैज्ञानिक तरीके से की है, यदि आप का शरीर भारी, सख्त और अकड़ा हुआ अनुभव हो तो आप का मालिश करने का तरीका गलत था। मालिश सदैव हल्के हाथ से शरीर की बनावट के मुताबिक करनी चाहिये। यह ध्यान रखना परम आवश्यक है कि रक्त संचार में बाधा न पड़े और उस पर विपरीत प्रभाव न पड़े। शरीर के एक एक अंग की मालिश विधि पूर्वक करने से ही लाभ होगा अन्यथा हानि की सम्भावना अधिक है। हमारा निश्चित मत है मालिश करने की विधि किसी अनुभवी और विशेषज्ञ से सीखनी चाहिये। हमने मालिश करने की विधि विश्वविख्यात व्यायाम और प्राणायाम विशेषज्ञ प्रो. राममूर्ति सैंडो से सीखी थी वे एक बार चार पांच रोज हमारे आश्रम में ठहरे थे। उन दिनों हम विद्यार्थी जीवन व्यतीत कर रहे थे। सिर की मालिश, गर्दन की मालिश, वक्ष की मालिश, पेट और पीठ की मालिश, हाथ पैरों की मालिश करने की विधि सीखनी चाहिये। एक दिन में एक बार अच्छे अनुभवी विशेषज्ञ से मालिश करनी सीखी जा सकती हैं।

मालिश के उपरान्त गर्मियों में जांघिया या जांघियानुमा कच्छा या लंगोट पहन कर खुले बदन, व्यायाम करना चाहिये। सर्दियों में व्यायाम छत के नीचे जहां वायु का आवागमन निर्बाध हो करना चाहिये। शरीर पर हल्की जर्सी तथा निकर या पेंट रहना चाहिये। व्यायाम करते समय गर्म सर्द होने से सदैव बचाव रखना चाहिये। पसीने में एकदम बाहर नहीं निकलना चाहिये। व्यायाम कभी भी अपनी शारीरिक शक्ति तथा क्षमता से अधिक नहीं करना चाहिये।

व्यायाम का अभ्यास धीरे धीरे बढ़ाना चाहिये। व्यायाम करके अधिक थकना अच्छा नहीं है। व्यायाम करने के पश्चात्, यदि आप फुर्ती और उत्साह अनुभव करें तो आप का व्यायाम शरीर की क्षमता और शक्ति के अनुसार हुआ है, यदि आप थका हुआ अनुभव करेंतो आप ने अपने शरीर के साथ ज्यादती की है।

व्यायाम करते समय एक महत्वपूर्ण बात याद रखनी चाहिये की शरीर के प्रत्येक अंग का व्यायाम करना शरीर को स्वस्थ, सुडौल तथा निरोग बनाना है। कई लोग बैठकों के द्वारा अपने जांघ और पैरों को सबल और सुडौल बना लेते हैं लेकिन उन का वक्षस्थल पिचका हुआ गाल धंसे हुए और पेट ढोलक सा नजर आता है इसलिये व्यायाम ऐसा होना चाहिये जो सारे शरीर को सुडौल, स्वस्थ और सुंदर बनाये।

कई लोग दोनों समय व्यायाम करने के पक्षधर हैं। यदि किसी के पास इतना समय और शारीरिक क्षमता है तो बेशक वह दोनों समय व्यायाम करे। सूर्य अस्त से आधा घंटा पूर्व और आधा घंटा बाद तक व्यायाम किया जा सकता है। लेकिन दोपहर का भोजन अच्छी तरह पच जाना चाहिये और यदि शाम को शौच जाने की आदत है तो उससे निवृत होकर ही व्यायाम करना श्रेयस्कर रहेगा। सर्वोत्तम यह रहेगा कि दिन भर के काम काज से निपट कर सांयकाल की सैर तेज रफ्तार से की जाए। गर्मी का मौसम है तो ठंडा होकर स्नान कर लिया जाये और उसके पश्चात रात्रि का भोजन कर लिया जाये। भोजन के तुरन्त बाद सोना स्वास्थ्य के लिये बहुत घातक आदत है। भोजन के उपरान्त कम से कम सौ कदम अवश्य धीरे -धीरे चहलकदमी करनी चाहिये, ऐसा आयुर्वेद का मत है। रात के भोजन और सोने में तीन घंटे का अन्तर रहना चाहिये इस से पेट के रोगों से छुटकारा मिलेगा और नींद भी अच्छी और गहरी आयेगी।

प्रो. राममूर्ति सैण्डों के व्यायाम

विश्वविख्यात प्रो. राममूर्ति सैण्डो के व्यायाम के विषय में क्या विचार थे, यदि उन का इस पुस्तक में वर्णन न करूं तो पुस्तक अधूरी रह जायेगी। मैं उन दिनों पूज्य पं. शिवलाल जी के आश्रम में विद्यार्थी था। प्रो. राममूर्ति चार-पांच रोज पंडित जी के बदरपुर (दिल्ली) आश्रम में ठहरे थे। यह हमारा सौभाग्य था कि हमें उन से भोजन, व्यायाम और उत्तम स्वास्थ्य पर निसंकोच बातें करने का शुभ अवसर मिला था। वे परम्परागत व्यायाम के अधिक पक्षधर नहीं थे। भारत में परम्परागत व्यायामों में कुश्ती, मल्लयुद्ध, मुग्दर उठाना, मोगरी घुमाना, डण्ड बैठकें करना आदि का अधिक प्रचलन था। राजा-रजवाड़े, रईस, नवाब, जमींदार पहलवानों का भरण पोषण, उत्साह वर्धन किया करते थे। एक तरह से ये उन का मनोरंजन भी था और व्यायाम कला का शौक भी। चाहे कितना ही बलशाली, प्रसिद्ध पहलवान क्यों न हो वह पूंजीपतियों और सेठ साहूकारों के आश्रित ही रहता था। बुढ़ापे में जो उन की दुर्दशा होती थी वह बूढ़े साण्ड से भी बदतर थी। पराश्रित जीवन जीना राममूर्ति सैण्डों को पसन्द नहीं था इसलिये उसने परम्परागत व्यायाम को नहीं अपनाया और एक नई व्यायाम

पद्धति जो परंपरागत व्यायाम पद्धति से अधिक जीवनदायिनी तथा वैज्ञानिक थी उसका प्रचार प्रसार जीवन भर किया।

प्रो. राममूर्ति सैण्डों के व्यायामों का आधार शरीर की मांसपेशियां तथा प्राणायाम की क्रियाएं थी। यदि शरीर और प्राणायाम दोनों की संयुक्त क्रियाओं द्वारा व्यायाम प्रणाली, इस का नाम दिया जाये तो साधारण आदमी शीघ्र समझ सकता है। उन के व्यायामों के साथ ब्रह्मचर्य का पालन और रक्षा भी अनिवार्य था। साथ ही सात्विक भोजन जिसमें पौष्टिक और शक्तिवर्धक पदार्थों का होना आवश्यक था।

हमने उन से प्रश्न किया कि आप अपने वक्षस्थल पर हाथी के बोझ को कैसे सहन कर लेते है तो उन्होंने सहज और सरल उत्तर दिया - साइकिल की ट्यूब में हवा भर जाने से वह चार पांच मन बोझ तक सहार लेती है। इसी प्रकार प्राणायाम के अभ्यास से मैं हाथी जैसे बोझिल जानवर को अपने वक्षस्थल पर झेल लेता हूँ। यह सारी करामात प्राणायाम के अभ्यास की है। यह कोई जादू या चमत्कार नहीं है, यह प्राणायाम की शक्ति की सत्यता है।

उन की प्रत्येक व्यायाम क्रिया में प्राणायाम और मसल्स् (मांसपेशियों) का अभ्यास शामिल था। अपने हाथ की पहली और दूसरी अंगुलियों के बीच जोड़ पर एक मसल का इतना अभ्यास उन को था कि दो पहलवान उन अंगुलियों को पूरी ताकत से चीर नहीं सकते थे। यह क्रिया उन्होने बच्चों को समझाने के लिये सिखाई थी। हमारे आश्रम के बच्चों ने कई दिन तक कौतूहलवश इस क्रिया का अभ्यास किया और एक दिन एक किशोर की दोनों अंगुलियाँ दूसरे किशोर ने कपड़े की तरह चीर दीं जो श्री गांधी हस्पताल बदरपुर के डा. सुखदेव ने उपचार करके जोड़ी थीं क्योंकि संबंधित मसल का अभ्यास पूरा नहीं हुआ था। प्रो. सैण्डों गुरूकुल कांगड़ी व गुरूकुल इन्द्रप्रस्थ के वार्षिकोत्सव पर अपने पराक्रम दिखाया करते थे। दो दो कारों को वे बीच में खड़े हो कर रोक दिया करते थे। कारें पूरी ताकत से भी उन्हें टस से मस नहीं कर सकती थीं। पीतल की थाली बीच में से ऐसे चीर देते थे जैसे कपड़े को दर्जी फाड़ देता है और उत्सव में बैठे परम्परागत पहलवानों को आह्वान करते कि वे ऐसा करके दिखायें तो पुरस्कार भी देते थे।

एक बार वे अपने शिष्यों के साथ आए थे जिन में गुरूकुल कांगड़ी, हरिद्वार के ब्रह्मचारी सुधाकर भी थे, जिन का नाम शक्ति प्रदर्शन के कारण सुधाकर भीम पड़ गया था। उन्होंने सुधाकर भीम को अपनी व्यायाम कला की बहुत सारी क्रियाएं सिखा दी थीं और ब्रह्मचारी सुधाकर उनका सफल प्रदर्शन किया करते थे।

प्रो.सैण्डों की मान्यता थी कि दण्ड बैठकों के व्यायाम से केवल पैर हाथ व वक्ष का ही व्यायाम होता है। बैठकों से कद भी छोटा रह जाता है और सुस्ती भी बढ़ जाती है। दंड बैठकों की अपेक्षा वे एक स्थान पर खड़े होकर पंजे के बल दौड़ को अधिक उपयोगी व्यायाम मानते थे। प्रत्येक व्यायाम के साथ गहरे श्वास को बहुत लाभदायक मानते थे। प्रायः पहलवान कई हजार बैठकें और हजारों दंड निकाल निकाल कर थक लेते हैं अपनी शक्ति से अधिक व्यायाम करना शरीर के लिये कभी उपयोगी नहीं होता। प्रो.सैण्डो का कथन है कि उन्होंने इन सब व्यायामों पर स्वयं तजुर्बा किया है ये व्यायाम उर्जा पैदा नहीं करते अपितु

उर्जा समाप्त करके सुस्ती और थकावट पैदा करते हैं। वे बैठक के व्यायाम के पश्चात दौड़ तथा जॉगिंग को उचित मानते थे। इससे बैठक करने से जो सुस्ती आई वह दूर हो जायेगी। पहलवान लोग ब्रह्मचर्य के पालन और संरक्षण को मुख्य नहीं मानते। खान पान में भी वे तामसी और मांसाहारी भोजन को अधिक महत्व देते हैं।

परंपरागत कुश्ती करनेवाले पहलवान खुराक की मात्रा पर भी बहुत जोर देते हैं उन की खुराक किसी दानव से कम नहीं होती। मांस, मुर्गे, मछली, अंडे, घी, बादाम वे इतना खाते हैं जितना एक आदमी खा नहीं सकता। प्रो.सैण्डों का मत है कि पहलवान की खुराक साधारण व्यक्ति से ड्यौढ़ी हो सकती है। वे वीर्य की रक्षा और आत्म संयम तथा सदाचार को सब से बड़ी खुराक मानते थे। वे प्रारंभ में ग्यारह सेर दूध पिया करते थे लेकिन तजुर्बे के पश्चात् घटाकर सवा सेर दूध कर दिया था। जिससे उन की शारीरिक शक्ति और क्षमता में कोई अन्तर नहीं पड़ा था। अधिक खुराक को खाकर उसे शरीर में रचा पचाने के लिये अधिक व्यायाम करना पड़ेगा। शरीर पर अधिक बोझ पड़ेगा तो उसे अधिक आराम और नींद लेनी होगी। अधिक खाने के भ्रम को उन्होने अज्ञान और अवैज्ञानिक कहा है।

प्रो. राममूर्ति सैंडो से सम्बन्धित संस्मरण लिखने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूँ। वे हमारे अतिथि थे। एक दिन उन्होंने अपने सेवक को भेज कर बदरपुर के हलवाई के यहां से मावा और बताशे प्रात:राश में खाने के लिये मंगाए। उन्होंने स्वयं प्रात:राश किया और सुधाकर भीम तथा अन्य कई शिष्यों को खिलाया। मावा ताजा नहीं था। एक एक करके सभी को उल्टियां और दस्त लग गये। सब से बाद में सैंडों जी को टट्टियां लगीं। हम लोग हतप्रभ से रह गए। विश्वविख्यात प्रो.सैंडों को यदि कुछ हो गया तो बड़ा अनर्थ होगा हम उन्हें श्री गांधी हस्पताल बदरपुर ले गए। वहां के इन्चार्ज डाक्टर मनोचा थे, जो सेना के सेवानिवृत योग्य तथा अनुभवी डाक्टर थे। हमने प्रो. सैंडो का पूरा परिचय उन को दिया। उन्होने कहा, चिन्ता न कीजिए अभी ठीक हो जायेंगे और उन्होने दवा स्वयं बनाकर सब को पिलाई। एक घण्टे के अन्दर फूड प्वाजन (विषाक्त भोजन) का प्रभाव शून्य हो गया और प्रो.सैंडो तथा उनके शिष्य भले चंगे हो गए। तब हम चिन्तामुक्त हुए। हालांकि वह मावा उन्होंने स्वयं मंगाया और खाया था, हम को पता तब चला जब उन्होंने डाक्टरी सहायता के लिये कहा। प्रभु कृपा से वे सब डा. मनोचा की औषधि ने स्वस्थ कर दिये।

एक बार प्रो. राममूर्ति सैण्डो शेर के शिकार के लिये गए। शाम को जब अपने डेरे में पहुंचे तो आराम कुर्सी पर बैठ गए। उन की माता जी भी साथ थीं। उन्होने एक कुर्सी अपने बैठने के लिये चाही और उस के साथ रखी जर्मन गन का बटन दब गया, गोली चली और उनके बांये पैर की मुख्य अस्थि को तोड़ कर पार निकल गई। प्रो. सैंडो ने प्राणायाम के अभ्यास से पैर का रक्त नहीं निकलने दिया और तुरन्त अपने दल को उन्हें लखनऊ के बलरामपुर हस्पताल में पहुंचाने का आदेश दिया। जीप द्वारा हस्पताल पहुंच गए। मेडीकल बोर्ड ने फैसला किया घुटने से नीचे पैर काटा जायेगा। इस फैसले को प्रो. सैण्डों ने ये कहकर अस्वीकार कर दिया कि, "मैं एक पैर से चलने की अपेक्षा मर जाना स्वीकार करूंगा" पुन: डाक्टरों का बोर्ड बैठा और तय हुआ, अफ्रीका से श्वेत सोने की छड़ मंगा कर टूटी हड्डी की

जगह डाली जाए, ऐसा ही हुआ और वे चलने लगे। ये व्यथा कथा हमें स्वयं उन्होने सुनाई थी जिस का मैने यहां सार मात्र दिया है। मेरा इस दुर्घटना का जिक्र करने का तात्पर्य यह है कि उन्होने शरीर विज्ञान को इतना समझ लिया था कि रक्त को पैर के तरफ जाने से रोके रखा वरना हस्पताल तक उनका पर्याप्त रक्त निकल जाता और शायद वे पुनः धरती पर नहीं चल पाते।

व्यायाम का चयन

आज संसार में अनेक व्यायाम पद्धतियाँ प्रचलित हैं। सब से पहले व्यक्ति को यह तय करना है कि व्यायाम का उद्देश्य क्या है। यदि वह किसी विशेष क्षेत्र का व्यायाम विशेषज्ञ बनना चाहता है तो उसे उसी व्यायाम का प्रशिक्षण तथा निरंतर अभ्यास करना चाहिये। जैसे कोई व्यक्ति पहलवान बनना चाहता है तो उसे अच्छे, योग्य, अनुभवी खलीफ़ा या गुरू से पहलवानी के दांव, पेंच सीखना और उनका सतत अभ्यास करना चाहिये। यदि सरकस का कलाकार बनना चाहता है तो उसी प्रकार की कला का प्रशिक्षण लेना चाहिये। यदि कोई व्यक्ति स्वस्थ, निरोग, सुडौल, सुन्दर, दीर्घायु बनने के लिये व्यायाम करना चाहता है तो उसे ऐसे व्यायाम सीखने चाहियें जो शरीर के प्रत्येक अंग अथवा मुख्य शरीर के संस्थानों के व्यायाम हों जैसे-स्नायुमंडल के व्यायाम, सुषुम्णानाड़ी के व्यायाम, पाचन क्रिया के व्यायाम, समस्त जोड़ों के व्यायाम, श्वासक्रिया के व्यायाम आदि।

इस पुस्तक में हम केवल उन्ही व्यायाम क्रियाओं का जिक्र करना चाहते हैं जो व्यक्ति को पहलवान, सरकस का कलाकार या किसी विशेष खेल या स्पोर्टस का विशेषज्ञ न बना कर स्वस्थ, निरोग, दीर्घायु तथा सुडौल सुन्दर शरीर रखने का में मदद करें। हम यहां केवल पुरूषों के व्यायामों का ही वर्णन नहीं करना चाहते वरना महिलाओं के भी व्यायामों का जहां विशेष आवश्यकता है जिक्र करेंगे वरना स्त्री पुरूषों के समान व्यायाम का साधारण तौर पर जिक्र करेंगे। आज संसार के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाएं पुरूषों के समान सभी कार्य कर रही हैं और वह इसलिए पुरूषों से पीछे नहीं रहना चाहतीं कि वे महिला हैं। लेकिन प्रकृति ने उन के शरीर की संरचना पुरूष से कुछ भिन्न की हैं इसलिये कुछ अपवाद भी व्यायाम के क्षेत्र के लिये अवश्य हैं जिनका वर्णन उचित स्थान पर कर दिया जायेगा। इसे प्रकृति की देन या विशेषता ही समझना चाहिये स्त्री-पुरुष की समानता अथवा भेद नहीं अर्थात यह प्राकृतिक है, मानव कृत नहीं।

पुरूष, प्राकृतिक तौर पर बहादुर, कठोर, संघर्षशील तथा निडर होता है। वह देर से जवान होता है। महिला कुदरती तौर पर लावण्यमयी, कोमल, शान्तिप्रिय तथा शर्मीली होती है और पुरूष की अपेक्षा यौवन की देहली पर शीघ्र कदम रखती हैं उसी प्रकार शीघ्र ही बुढ़ापे को प्राप्त होती हैं। स्त्री रजोनिवृत अवस्था के पश्चात सन्तान उत्पन्न नहीं कर सकती जबकि पुरूष में सन्तान उत्पत्ति का बीज वीर्य अन्तिम समय तक रहता है, सम्भव है इसीलिये उसे पुरूष कहा गया है। क्योंकि उसका पौरूष, जब तक दम है, और वह चल फिर सकता है, कायम रहता है। महिला के शरीर में पुरूष की भांति अण्डकोष नहीं हैं, न कुण्डलिनी

शक्ति उसके शरीर में होती है यह अन्तर भी मामूली नहीं है। जितनी लचक लोच स्त्री के शरीर में है वह पुरूष के शरीर में नहीं प्राय: सरकस के स्त्री कलाकार जो पराक्रम शरीर की लचक के दिखा पाते हैं,वे पुरूष नहीं कर पाते। वे साहस और शक्ति के पराक्रम अधिक कर सकते हैं। महिला का शरीर युवावस्था में प्राकृतिक तौर पर मांसल और सुडौल हो जाता है जबकि पुरूष को व्यायाम द्वारा सुडौलता और शरीर सौष्ठव तैयार करना पड़ता है। इसलिए व्यायाम चयन और व्यायाम प्रक्रिया भी विशेष परिस्थिति में पुरूष और महिला की पृथक हो सकती है। जिस का व्यायाम प्रशिक्षकों को अवश्य ध्यान रखना चाहिये।

पुरूषों के लिये पेड़ों पर चढ़ना उतरना, घोड़े की सवारी, तैरना, दौड़ना और दिल खोलकर हंसना ऐसे व्यायाम हैं जिनसे पूरे शरीर का व्यायाम हो जाता है। दौड़ने और खिलखिलाकर हंसने के अतिरिक्त प्रत्येक व्यक्ति न पेड़ पर चढ़ सकता है न घोड़े की सवारी उपलब्ध कर सकता है। तैरने के लिये जहां नदी, नहर, नाले नहीं हैं, वह स्वीमिंग पूल की सदस्यता प्राप्त करने में संकोच करेगा चाहे कारण आर्थिक ही क्यों न हों। संक्षेप में कुछ व्यायाम निहायत खर्चीले हैं जो सर्वसाधारण के लिए उपलब्ध नहीं हैं

महिलाओं के लिए चक्की चलाना, दूध बिलोना, झाडू देना, चौका लगाना, कुंए से पानी खींचना, आटा गूंदना आदि घरेलू कार्य ऐसे हैं जो महिलाओं के शरीर के विशेष अंगों के व्यायाम कुदरती तौर पर हो सकते हैं लेकिन ये सब कार्य नगर की महिलाओं और धनी परिवार की ग्रामीण महिलाओं ने छोड़ दिये हैं जिन के कारण वे अधिकतर रोगी रहती हैं। जो महिलाएं इन कार्यों को प्रतिदिन अपने घर करती हैं उन्हें प्रसव क्रिया सहज और पीड़ा रहित होती है और वे कम रोगी होती हैं। यदि वे रोगी होती भी हैं तो कुपोषण के कारण और कार्य आधिक्य के कारण, व्यायाम के अभाव में नहीं। महिलाएं घुड़सवारी भी कर सकती हैं, ग्रीष्म ॠतु में तैरना भी उन के लिये उपयोगी व्यायाम है, कद बढ़ाने के लिए रस्सियों पर कूदना अच्छा सस्ता तथा सुलभ व्यायाम है। उन्हें वे व्यायाम भूल कर भी नहीं करने चाहिये जो गर्भवस्था में डाक्टर ने वर्जित किये हों।

किशोर और किशोरियों के लिये विद्यालयों में खेले जाने वाले सामूहिक खेल-कूद और पी.टी. व्यायाम बहुत उपयोगी हैं। आजकल तो योगासनों का व्यायाम भी उन्हें सिखाया जाने लगा है। जूडो-कराटे का प्रचार- प्रसार भी खूब हो रहा है। सर्व साधारण के लिये हम योगासन के व्यायामों को सर्वश्रेष्ठ व्यायाम मानते हैं। यौगिक व्यायामों की निम्न विशेषताएं हैं :

प्रथम - योगासन ही ऐसे व्यायाम हैं जिनसे शरीर में ऊर्जा अथवा शक्ति का अर्जन होता है जबकि अन्य व्यायामों से शक्ति उत्पन्न न होकर खर्च होती है। योगासन शक्ति और क्षमता से अधिक होते भी नहीं हैं। नित्य अभ्यास द्वारा अवश्य समय और मात्रा बढ़ाई जा सकती है। परम्परागत व्यायाम् शक्ति उत्पन्न नहींकरते अपितु खर्च करते हैं।

दूसरा-योगासनों से शरीर, मस्तिष्क तथा आत्मा तीनों पर बराबर प्रभाव पड़ता है। शरीर सुन्दर सुडौल, स्वस्थ तथा निरोग रहता है। मन-मस्तिष्क शान्त और स्थिर रहते हैं। आत्मिक उन्नति बराबर होती हैं जबकि अन्य व्यायामों द्वारा केवल शरीर के भी सभी अंगों का व्यायाम नहीं होता, विशेष अंगों का ही व्यायाम होता है।

तीसरा-योगासन बिना खर्च के व्यायाम हैं। इस के लिये धरती और फर्श जो परमात्मा ने सभी को प्रदान किया है, चाहिये। सोने के तख्त पर भी आप योगासन कर सकते हैं जब कि अन्य व्यायामों के लिये आपको कुछ न कुछ खर्च करना ही पड़ता है अर्थात योगासन बिना खर्च बालानशीन व्यायाम हैं।

चौथा - प्रत्येक आयु का व्यक्ति, स्त्री-पुरूष योगासन कर सकता है। इसमें इतनी सावधानी तो बर्तनी चाहिये कि किस स्थिति व परिस्थिति में कौन सा योगासन किया जाये अथवा नहीं। जैसे गर्भवती के लिये कुछ आसन वर्जित हैं। बूढ़ा व्यक्ति प्रत्येक आसन नहीं कर सकता। लेकिन साधारण योगासन सभी कर सकते हैं।

पांचवा-योगासनों की प्रमुख विशेषता यह है कि इनके द्वारा शरीर के सभी अवयवों का व्यायाम हो जाता है। प्रत्येक आसन के साथ प्राणायाम का अभ्यास स्वतः चलता रहता है। तभी तो ऋषि मुनियों ने योगासनों और प्राणायाम के व्यायामों को अपनाया था।

योगासन के व्यायामों की विशेषता आज सारा संसार मान गया है। एक जमाना था केवल भारत में ही योगासनों का प्रचार- प्रसार था। योगासन योग का तीसरा अंग हैं जो योग के आठ अंगों का आधार है। अकेला एक योगासन सारे शरीर के व्यायाम करा सकता है, शरीर के प्रत्येक अवयव व भाग का व्यायाम अकेले सर्वांग पुष्टि आसन द्वारा हो जाता है। योगाचार्यों का निश्चित मत है यदि आप के पास समय अभाव है तो आप केवल पांच मिनट प्रतिदिन सर्वांग पुष्टि आसन का अभ्यास करके स्वस्थ, सुडौल, सुन्दर और निरोग रह सकते हैं। हमारा निजी अनुभव भी इस सत्य की पुष्टि करता है। इस के लिये तख्त की भी जरूरत नहीं है यह योगासन खड़े खड़े ही किया जाता है।

योगासन के व्यायाम किसी अनुभवी योग्य योगाचार्य से सीखने चाहियें। बाबा परमहंस अद्वैतानंद जी कहा करते थे :- देखा देखी कीजे योग, छीजे काया, बाढ़े रोग।

जो लोग योगाभ्यास या योगासन व क्रिया बिना योग्य गुरू के करने लगते हैं उनका शरीर क्षीण होने लगता है तथा शरीर में रोगों की वृद्धि भी होती है। योगासनों में क्रम का ध्यान भी रखना परमावश्यक है। साथ ही एक दूसरे आसन के पूरक आसनों का क्रम भी बहुत जरूरी है योगासनों में धीरे धीरे अभ्यास करना चाहिये, जोर जब्र नहीं करना चाहिये। भोजन सात्विक तथा पौष्टिक करना चाहिये। मिर्च, मसाले, मांस, मछली, अंडे, मदिरा सेवन तथा धूम्रपान का परहेज है।

योगी आर्य द्वारा योग चिकित्सा

योगी आर्य योग द्वारा चिकित्सा करते हैं। वे किसी औषधि का बिल्कुल सहारा नहीं लेते। भोजन भी उन के उपचार में शामिल है। लेकिन योग आसन और योग क्रियाएं मुख्य हैं। योगी आर्य का पूरा नाम श्री रामपाल सिंह आर्य हैं। वे विज्ञान स्नातक हैं। इनके पितामह ने स्वामी दयानन्द सरस्वती से योग विज्ञान सीखा था। योगी आर्य के पिता ने अपने पिता से योग विज्ञान की दीक्षा ली थी। योगी आर्य ने अपने पिताश्री से योग विज्ञान का ज्ञान प्राप्त

किया था। मेरा योगी आर्य से सम्पर्क १९७८ ई. में हुआ था। मैंने वे पहले योगी देखे थे जो योगासन और योग विद्या में पारंगत थे। वे मेरे एक मित्र का उपचार कर रहे थे उसी दौरान मेरा उन से गहरा परिचय हो गया था। मेरा उन से योग विद्या पर पर्याप्त विचार विमर्श हुआ था। मैंने एक दिन उन्हें वे सब योगासन करके दिखाये थे जिन्हें मैं प्रतिदिन किया करता हूँ और उन्होने क्रम तथा विधि में जरा सा सुधार भी किया था।

जैन मत के विश्वविख्यात आध्यात्मिक महान विभूति स्वामी विद्यानंदजी महाराज की आंतों में विकार पैदा हो गया था उन के पेट में इतनी पीड़ा थी कि वे बहुत व्याकुल थे। उन के एक अनुयायी जिनका कारखाना लोनी (गाजियाबाद)में स्थित है वे योगीआर्य से परिचित थे। उन्होंने स्वामी विद्यानन्द जी महाराज से निवेदन किया यदि आप आज्ञा दें तो योगी आर्य को बुलाकर आप की पेट पीड़ा का उपचार करा लिया जाये। स्वामी जी महाराज ने श्री जैन की प्रार्थना स्वीकार कर ली। योगी आर्य ने स्वामी जी के पेट का अपनी हाथ की अंगुलियों द्वारा निरीक्षण किया। आन्तें सूख गईं थीं, उन में उलझन पैदा हो गई थी। किसी दुष्टात्मा ने स्वामी जी को द्वेष भाव से भोजन में फिटकरी का पाउडर मिला कर खिला दिया था स्वामी जी को पीड़ा असह्य थी उन की जान निकली जा रही थी। योगी आर्य ने उन के पेट की धीरे-२ मालिश की। बात की बात में पेट पीड़ा काफूर हो गई। स्वामी जी की जान में जान आ गई और बड़े प्रसन्न हुए।

योगी आर्य की पहली मालिश ने आंतों की उलझन को खोल दिया था, दूसरी मालिश से उन्होंने कार्य करना प्रारंभ कर दिया था और तीसरी बार वे नॉर्मल होगए। योगी आर्य की इस चिकित्सा का स्वामी विद्यानन्द जी महाराज पर गहरा प्रभाव पड़ा और वे इस चिकित्सा के समर्थक हो गए।

योगी आर्य ने उपरोक्त वृतान्त मुझे स्वयं सुनाया था मैं भी सुन कर बहुत प्रभावित हुआ। यही वृतान्त श्री जैन मुझे इन से पूर्व सुना चुके थे। श्री जैन ही योगी आर्य को मेरे मित्र के उपचार के लिये लाये थे। योगी आर्य उस समय पच्चीस वर्ष के युवा थे और अविवाहित थे। वे अमेरिकी दूतावास के स्टाफ का योग द्वारा उपचार किया करते थे। उन्होंने मुझे अपनी उपचार पद्धति के अनेक चमत्कार पूर्ण संस्मरण सुनाये थे। उन सब का वर्णन करना यहाँ जरूरी नहीं।

प्राय: सभी लोग योगासनों में शीर्ष आसन को बहुत श्रेष्ठ और उपयोगी मानते हैं। इस आसन के संबंध में योगीआर्य ने अपना निजी अनुभव तथा संस्मरण सुनाया। योग आसनों के विषय में योगाचार्यों में एक धारणा बनी हुई है कि किसी विशेष योगासन के निरन्तर तीन घंटे १८ मिनट १६ सैकेंड के अभ्यास से उस योग आसन विशेष में सिद्धि प्राप्त हो जाती है। अर्थात उस विशेष योगासन से संपूर्ण लाभ साधक को प्राप्त होजाते हैं। योगी आर्य ने शीर्ष आसन में सिद्धि प्राप्त करने के लिये तीन घंटे तक अभ्यास किया। फलत: योगी आर्य की आंखों की रोशनी बहुत कम हो गई वे अंधापन के समीप पहुंच गए। अंधापन से घबरा कर वे अपने पिताश्री के पास पहुंचे और अपनी व्यथा कथा उन्हें सुनाई। उनके पिताजी ने उन्हें समझाया कि जितनी देर शीर्षासन में सिर के बल पैर ऊपर ले जाकर खड़ा रहना चाहिये,

उतनी ही देर पैरों पर खड़े रहना चाहिये। अब इसी तरह अभ्यास करो, तुम्हारी आंखों की ज्योति पहिले जितनी ही हो जायेगी। योगीआर्य ने वही किया और उन की आंखों की ज्योति ठीक हो गई। यदि वे ऐसा नहीं करते तो निश्चित रूप से अंधे हो जाते।

योगासनों में क्रम और पूरक आसन का अभ्यास अनिवार्य है। सर्वांग आसन के विषय में भी योगी आर्य ने एक संस्मरण सुनाया। उन के पास एक व्यक्ति आया जिसे गर्दन इधर उधर करने उठने बैठने और चलने फिरने में चक्कर आने लगे थे। योगीआर्य ने चक्कर आने के कारण जानने चाहे तो पता चला वह व्यक्ति सर्वांग आसन का अभ्यासी है और इस आसन के पश्चात इस के पूरक आसन का अभ्यास नहीं करता, जिस के कारण उस की रक्त संचार व्यवस्था गड़बड़ा गई है। योगी आर्य ने मुझे परामर्श दिया कि चालीस वर्ष की अवस्था के पश्चात् सर्वांगासन बन्द ही कर दिया जाये तो अच्छा है यदि करना भी है तो इसके बाद मत्स्य आसन अवश्य करना चाहिये और थोड़ी देर ही इनका अभ्यास किया जाये।

मैं स्वयं इस सर्वांगासन का भुक्त भोगी हूँ। मैने एक दिन तख्त के बजाय निवाड़ के पलंग पर भूल से सर्वांगासन का अभ्यास किया। फलत: सारा कमरा और तख्त चक्कर काटने लगा। मैंने पुन: वही अभ्यास दोहराया, वही हाल हुआ। मुझे विश्वास हो गया कि इस आसन से ही गड़बड़ी हुई है और वह भी पलंग पर करने से रंक्त संचार में बाधा पड़ गई है। मैंने कई योग्य अनुभवी और अपने हितैषी डाक्टरों सें अपनी परीक्षा कराई। लेकिन किसी की समझ में कुछ कारण नहीं या। रक्तचाप ठीक, ई.सी.जी. ठीक, नाड़ी गति ठीक, फिर चक्कर क्यों ? मेरे एक अन्य मित्र पति पत्नि दोनों डाक्टर थे लेडी डाक्टर ने मुझ से मेरा दिनचर्या जानना चाहा और जब मैंने योगासनों की विधि की चर्चा की तो उसने फौरन समझ लिया कि योगासन की विधि में कहीं गलती रह गई है और मुझे सर्वांगासन कुछ समय तक न करने का परामर्श दिया मैंने भूलकर भी इस घटना के पश्चात कभी भी पलंग पर लेट कर योगासन करने की भूल नहीं की

मैने अपना अनुभव योगी आर्य को सुनाया तो उन्होंने मुझे इस आसन को बिना मत्स्य आसन करने के मना कर दिया। उन की मान्यता है चालीस साल की अवस्था के पश्चात गर्दन को आगे झुकाने तथा कमर को आगे की तरफ झुकाने के व्यायाम अथवा योगासन बिना पूरक योगासनों के नहीं करना चाहिये।

योगी आर्य शीर्षासान के अभ्यासियों के लिये कहते हैं कि जिन्हें रक्तचाप का रोग हो, नेत्र व कर्ण रोग हो, पेट के रोग हों, हृदय रोग हो उन्हें नहीं करना चाहिये। यदि वे शीर्षासन करेंगे तो उन्हें लाभ के बजाय हानि ही हानि होगी। प्राणायाम के तुरन्त पश्चात भी शीर्ष आसन नहीं करना चाहिये।

प्राय: आसनों के नाम पशु पक्षियों के नाम पर हैं जैसे अश्वासन, गोमुखासन, सिंहासन, गरूड़ासन, मयूरासन, मयूरी आसन, भुजंगासन, शलभासन, पद्मासन, वृक्षासन, ताड़ासन, मकरासन, मत्स्यासन, कागासन, मण्डूकासन, उष्ट्रासन, वक्रासन पक्षी आसन।

पशु और पक्षियों के नाम पर आसनों का नामकरण इसलिये किया गया है कि इन पशु पक्षियों का जीवन प्राकृतिक होता है।ये रूग्ण होने पर अपना उपचार स्वयं कर लेते हैं। इन

की पोज (स्थिति) सब अपनी अपनी विशेषता लिए हुए होती हैं। ये बीमार भी कम ही होते हैं और यदि होते हैं तो खाना छोड़ देते हैं और स्वस्थ होने पर ही खाते हैं। जो पशु और पक्षी मनुष्य के सम्पर्क में आ गए हैं वे प्राय: मनुष्य की तरह रोगी हो जाते हैं क्योंकि मनुष्य ने, उन का प्राकृतिक जीवन छुटा कर अपना बन्धुआ बना लिया है। जंगल के राजा शेर को सरकस के कर्त्तव्य दिखाने के लिये पकड़ लिया न उसे भरपूर खाना मिलता है, न स्वच्छ जलवायु, न स्वच्छन्द जंगल-विहार। शेर सर्कस के पिंजरे में बन्द होने के बाद धीरे - २ अपने मास्टर का पूर्णत: दास बन जाता है। भालू या रीछ को मदारी अपने जीवनयापन का आधार बनाने के लिये नकेल डालकर तमाशे दिखाता है। ये दो उदाहरण समझने के लिए पर्याप्त हैं। अकेले शेर के भय से सारे जंगल के प्राणी कांपते थे । उस समय वह प्राकृतिक जीवन जीता था। मनुष्य ने उस की स्वाधीनता छीन कर उसे बन्धुआ बनाकर छोड़ दिया और वह जंगल का राजा न रह कर पिंजरे का बन्दी रह गया है।

कुछ योगासनों के नाम प्राचीन योगाचार्यों के नाम पर भी हैं जैसे गुरू मत्स्येन्द्रनाथ के नाम पर मत्स्येन्द्रासन है। इस आसन का आविष्कार गुरू मत्स्येन्द्रनाथ ने किया था और इस आसन की सिद्धि प्राप्ति की थी। इसी प्रकार गुरू गोरखनाथ के नाम पर आसन भी है।

बज्रासन ही अकेला आसन है जो भोजन के उपरान्त किया जा सकता है। दूसरे सभी योगासन शौचादि से निवृत होकर भोजन से पूर्व किए जाते हैं। भोजन के पश्चात बज्रासन में बैठने से खाया हुआ भोजन पेट में जाकर ठीक तरह से पच जाता है उससे रस ठीक बनते हैं। एसीडिटी नहीं बनती। आमाश्य में भोजन अपच नहीं रहता। पेट में जलन नहीं होती। सौ वर्ष की आयु तक चेहरे पर पक्षाघात नहीं होता। शरीर वज्र के समान मजबूत और स्वस्थ रहता है। धीरे धीरे अभ्यास करके पन्द्रह सोलह मिनट बज्रासन पर बैठने से पूरा लाभ मिलता है। यह आसन इतना सरल नहीं है जितना लोग इसे समझते हैं। जिस प्रकार ऊंट बैठता है वही स्थिति बज्रासन करने वाले अभ्यासी की होती है। समझाने के लिए जिस प्रकार एक नमाजी नमाज अदा करने के लिये घुटनों के बल बैठ कर अपनी दोनों पैरों की कैंची सी बनाकर अपने पुट्ठों को उन पैरों की गद्दी जैसी सीट पर बैठता है। अंगूठे पर अंगूठा चढ़ा रहता है। थकने पर अंगूठे बदल लेने चाहिये। दोनों हाथ घुटनों पर रखने चाहिये कमर सीधी रहे और सामने देखा जाये। यह आसन तख्त पर बैठ कर या पृथ्वी पर आसन बिछा कर करना चाहिये। चारपाई या निवाड़ के पलंग पर नहीं। सख्त और समतल स्थान पर बज्रासन करने से ही इसका लाभ होगा वरना हानि भी हो सकती है। हमारा निश्चित मत है योगासन बिना गुरू के सिखाये नहीं करने चाहिये अन्यथा लाभ के बदले हानि की सम्भावना अधिक रहती हैं।

योगी आर्य पेट के विकारों के लिये बज्रासन को रामबाण औषधि मानते हैं। भोजन उपचार भी योगी आर्य की योग चिकित्सा का आवश्यक अंग है। वे कब्ज, मन्दाग्नि, गैस, अफारा, अपच आदि अनेक पेट विकारों के लिये चोकर की रोटी बहुत लाभदायक मानते हैं। चोकर की रोटी आन्तों में मल को टिकने नहीं देती और पाचन क्रिया को चुस्त दुरूस्त रखती हैं। यदि कोई चोकर की रोटी नहीं खा सके तो गेहूं जौ और चना तीनों अनाज समान

मात्रा में मिलाकर तिनाजे की रोटी खायी जाये तो पेट के विकारों से मुक्ति मिल जायेगी और निरंतर सेवन से व्यक्ति स्वस्थ और निरोग रहेगा। चाय, चावल, चीनी, आलू, मिठाईयां तथा तली हुई चीजें आमाश्य के विकारों में बहुत हानिकारक है। पहाड़ी आलू जो सोलन (शिमला) में पैदा होता है वह उबालकर अथवा भून कर खाया जाये तो लाभप्रद है। हमें याद है बचपन में भुने हुए आलू की चटनी का बड़ा प्रचलन था और हमें वह बहुत प्रिय थी। भूनने से आलू का दोष समाप्त हो जाता है। बैंगन की सब्जी से बैंगन का भड़था कहीं अधिक लाभप्रद है।

पेट की सफाई के लिये ताजा अमरूद बहुत उपयोगी है। अमरूद आन्तों से चिपके मल को भी साफ कर देता है। आड़ू भी आन्तों की सफाई के लिये अच्छा फल है। आलूबुखारा आन्तों की गर्मी तथा सफाई के लिये उत्तम फल है। गर्मी के कारण चढ़े बुखार को भी भगा देता है। कश्मीर का नाक भी आमाश्य के विकारों के लिये लाभप्रद फल है। खरबूजा व तरबूज के प्रयोग से पेशाब साफ़ आता है। शरीर की गर्मी पेशाब के द्वारा शान्त हो जाती है। प्रकृति ने ये सभी फल मनुष्य को स्वस्थ और निरोग रखने के लिये उपहार स्वरूप प्रदान किए हैं।

जहां तक सम्भव हो साबुत दालें छिलके सहित खानी चाहिए। साबुत दालें सुपाच्य, पौष्टिक और स्वादिष्ट होती हैं। गरम मसाले और लाल मिर्चें पेट केदुश्मन हैं ये आमाश्य के रोगों को आमंत्रित करते हैं। धनिया, जीरा, हल्दी, काला नमक, सौंफ, सौंठ इत्यादि का मसाला घर पर तैयार कर लिया जाये तो उत्तम है। जरा सी हरी मिर्च का प्रयोग वर्षा ऋतु में लाभ प्रद रहता है। हरी पत्ती के सागों में मेथी, बथुवा, चौलाई, पालक तथा देशी सरसों का साग स्वास्थ्य के लिये उत्तम है। बग्गा सरसों का साग पेट में वायु का प्रकोप बढ़ाता है जबकि देशी सरसों का साग पेट की सफाई करता है। आजकल देशी सरसों का प्रचलन समाप्तप्राय है। योगी आर्य मौसम के फल, मौसम के साग सब्जी, मौसम के अन्न और उसी क्षेत्र के गिरी वाले फल आदि स्वास्थ्यप्रद आहार मानते हैं। प्रकृति की मानव को ये अनुपम देन है। नमक हमारे भोजन का आवश्यक अंश है। प्राकृतिक तौर पर सब्जी और फलों में नमक की मात्रा मौजूद रहती है। लेकिन मनुष्य स्वाद के लिये नमक का प्रयोग जरूरत से अधिक करता है। अधिक नमक के प्रयोग से उच्च रक्तचाप का रोग लग जाता है। रक्त अधिक दबाव से धमनियों में प्रवाहित होता है। जिससे रक्तवाहिनी नाड़ियां हृदय और मस्तिष्क को हानि पहुंचाती है। लाखों लोगों की मौतें अधिक रक्तचाप से होती हैं। नार्मल रक्तचाप अच्छे स्वास्थ्य की पहचान है। उच्च और नीचा रक्तचाप दोनों ही अस्वस्थता के लक्षण हैं।

डा. शुसलर ने १२ लवणों से सारे रोगों के उपचार का सफल प्रयोग किया था। बायोकैमिक उपचार पद्धति डा. शुसलर के १२ लवणों के आधार पर प्रचलित है। उन की मान्यता है हमारा शरीर १२ लवणों से बना है। जिस लवण की कमी हो जाती है वह रोग को जन्म दे देतीहै वही लवण देने से रोग का उपचार हो जाता है। इन्हीं बारह लवणों को मिलाकर २८ मिश्रित टेबलेट तैयार किए गए हैं जिन से शरीर के तमाम साधारण और असाधारण रोगों का उपचार हो जाता है। डा. शुसलर तथा हेरिंग का कहना था कि बायोकैमिस्ट्री के १२

लवणों की कमी से शरीर में अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं और भोजन द्वारा अथवा बायोकैमिक साल्टस लेने से वे रोग दूर हो जाते हैं। बारह साल्टस ये हैं :-मैगनेशिया फॉस, कैलिफॉस, कैलकेरिया फॉस, कैलकेरिया फ्लोर, नेट्रम म्यूर, काली म्यूर, कैलकेरिया सल्फ,कैलि सल्फ, नैट्रफ फॉस, नैट्रम सल्फ, फैरम फोस, साइलीशिया।

कुछ अनोखे अनुभूत प्रयोग

मैंने प्राकृतिक जीवन को अपनाने और समझने की जरा सी कोशिश की है। फलत: कुछ अनोखे चमत्कार सामने आए। मैं प्राय: गर्मी के दिनों में योगासन व्यायाम जंगल में किया करता हूँ। एक रोज, नीम के वृक्ष के पास एक कुंए के चबूतरे पर मैं प्रात:कालीन योगासन अभ्यास कर रहा था। मैं पीछे की ओर मुड़ कर देखता हूँ तो एक नवयुवक चुपचाप खड़ा मेरे योग व्यायाम अभ्यास को गौर से देख रहा है। मैंने उसे अपने पास आने के लिये संकेत किया लेकिन वह पास आने से संकोच कर रहा था। मैंने उसे बड़े विनम्र भाव से पुन: बुलाया और पास बैठने को कहा, "मेरे एक दो आसनों का क्रम अभी शेष है, मैं आप से कुछ बात करना चाहता हूँ आप निसंकोच बैठें।"

अपने योग व्यायाम से निबट कर मैंने उस युवक को गौर से देखा। वह क्षीणकाय था। उसकी आंखे अन्दर धंसी हुईं थीं। चेहरा सूखा और आभाहीन हो गया था। हाथ पैर सूखे और पतले हो गए थे। आवाज बहुत ही कमजोर हो गई थी। वह निराश, हताश और दयनीय युवक नजर आ रहा था। वह अपनी व्यथा-कथा कहना चाहता था मगर साहस बटोर रहा था। उस की सारी स्थिति भांपकर मैंने ही उसे अपनी जीवन-व्यथा सुनाने की प्रेरणा दी।

उस युवक ने कहा, अपने विवाह से पूर्व मैं भी बहुत हट्टा कट्टा जवान था। व्यायाम किया करता था। तीन साल से मैं बहुत बीमार रहता हूँ। भूख बिल्कुल नहीं लगती, नींद नहीं आती। जो कुछ खाता हूँ वह हजम नहीं होता। काम करने को मन नहीं करता। सुस्ती और आलस्य छाया रहता है। जीवन में निराशा के अलावा कुछ नहीं रह गया है। दवाईयां खा खाकर मन ऊब गया है। अपने कार्यालय का काम भी मन मार कर जीविका के लिए करता हूँ।

आप को मैंने कई बार प्रात:काल इस जंगल में सैर करते हुए और योगासन करते हुए देखा है। कई बार हिम्मत की कि आप को अपनी राम कहानी सुनाऊं मगर हिचक गया यदि आज भी आप प्रेमपूर्वक नहीं बुलाते तो चुपचाप मैं यहां से खिसक जाता।

मैने कहा, "मैं डाक्टर या वैद्य नहीं हूँ न मैं कोई योगी अथवा महात्मा हूँ। मैं आप की तरह ही एक साधारण व्यक्ति हूँ। मैं आप को विश्वास दिलाता हूँ यदि आप मेरी पांच बातें अपने जीवन के लिए आज से ही अपना लोगे तो पन्द्रह दिन में ही अपने को स्वस्थ अनुभव करने लगोगे और अपने आप मेरे पास दौड़कर आओगे। जो दवाई इस समय आप ले रहे हैं उसे बेशक समाप्त होने तक लें उसके बाद बेशक दवाई भी खाना छोड़ दें"। मेरी बात, सुन कर उसे प्रसन्नता हुई और मुझे उसने पांच नियमों का पालन करने का विश्वास दिलाया।

पहला नियम-प्रातःकाल चार बजे जागकर जितना जल आप आराम से पी सकते हैं पी लीजिए और घर से जंगल की ओर निकल जायें। आप इतनी सैर करें कि आराम से घर लौट सकें। शौच के लिए जोर न लगाएं जब आये तभी सही। धीरे धीरे आप को प्रातःकाल शौचनिवृत होने लगेगी।

दूसरा नियम - चाय, चावल, चीनी, आलू, तली हुई चीजें, मिठाईयां खटाई तथा बासी चीजें बिल्कुल न खायें। जो चीजें आप आराम से हजम कर सकते हैं केवल उन्हीं का प्रयोग करें। चोकर की रोटी, दलिया खिचड़ी, गाय का दूध, मौसम की सब्जियां तथा फल अवश्य खायें। थोड़ा खायें मगर खूब चबाकर खायें। खाने और रात को सोने में कम से कम तीन घंटे का अन्तर अवश्य रखें। शाम के खाने के बाद भी धीरे धीरे सैर अवश्य करें।

अगर नींबू माफिक है तो प्रातःकाल पानी में एक नींबू का रस निचोड़ कर जरा सा सेंधा नमक डालकर चाय की तरह पीया करें। खिचड़ी में चावल से दुगुनी छिलके समेत साबुत दाल डालें। मूंग और मसूर की दाल दोनों भी डाल सकते हैं। कभी खिचड़ी, कभी दलिया, कभी चोकर अथवा गेहूं, जौ, चना तीनों अनाज समान की रोटी या चपाती, फल और सब्जी का सलाद खूब खायें। खाना खाने के एक घंटे बाद पानी पीएं। खाना खाने से पूर्व पानी पीने से भूख बढ़ेगी और खाने के एक घंटे बाद पानी पीने से खाना हजम होएगा। बिना भूख के खाना जहर है। बिना आमाश्य साफ़ हुए भी भोजन खाना विषाक्त होता है। समय पर भोजन करना पेट को ठीक रखना है। अन्न दिन में केवल दो बार ही लें। फल और सब्जी का सलाद और दूध तथा दूध की चीजें जब भूख लगे उचित मात्रा में ले सकते हैं। जब तक आप को खूब भूख न लगने लगे घी बिल्कुल न खायें। दही, पनीर, थोड़ा सा ताज़ा मक्खन ले सकते हैं। गर्म मसाले, मिर्च, मांस, मछली, अंडे, नशीले पदार्थों से सर्वथा परहेज़ करें। चीनी की जगह बिना मसाले का गुड़ तथा शक्कर खांड तथा मिश्री का प्रयोग कर सकते हैं। यदि आपने आहार के विषय में उपरोक्त बातों का पालन किया तो आप की पाचन क्रिया चुस्त और दुरूस्त हो जायेगी।

तीसरा नियम-जब तक आप पूर्ण स्वस्थ न हो जायें ब्रह्मचर्य का पालन करें बेशक अपनी पत्नि को भी हमारा यह निवेदन कर दें अन्यथा आप शीघ्र स्वस्थ नहीं हो सकेंगे। यदि आप को और आप की पत्नि को आप के जीवन से प्यार है तो इस नियम का पालन अवश्य करें। साधारण तौर पर भी भोजन और स्त्री संसर्ग में तीन घंटे का अन्तर अवश्य रहना चाहिये। ऐसा न करने से पाचन शक्ति का ह्रास हो जाता है। मेरा अनुमान है आप के स्वास्थ्य के बिगड़ने का सम्भवतः यही कारण रहा हो। युवक मुझ से सहमत था।

चौथा नियम-जिस प्रकार खाने और सोने, खाने और स्त्री संभोग में तीन घंटे का अन्तर रहना चाहिए उसी प्रकार स्नान सदैव भोजन से पूर्व करना चाहिए और गर्मी के कारण यदि पुनः स्नान करना पड़े तो भोजन के तीन घंटे उपरान्त स्नान करना चाहिये। भोजन के बाद तुरन्त स्नान करने से पाचन क्रिया क्षीण हो जाती है। पीलिया का रोग भी लग सकता है। ग्रामीण अनपढ़ लोग प्रायः गर्मी के मौसम में दोपहर का खाना खाकर स्नान कर लेते हैं और चादर तान कर सो जाते हैं यह प्रकृति के नियम के विपरीत है।

पांचवा नियम- ईश्वर में विश्वास रखो और इन प्राकृतिक नियमों का पालन करो। ईश्वर में आस्था रखने वाला व्यक्ति कभी भी जीवन में निराश नहीं होता और वह इच्छा शक्ति के बल से असंभव को संभव बना देता है। आप आशावादीं बनें। आप का स्वास्थ्य जैसा विवाह से पूर्व आप कहते हैं उससे अच्छा हो जायेगा। ऐसा विश्वास मन में रखें। पन्द्रह दिन बाद आप मुझे मिलें तब आप को योग- व्यायाम के एक दो आसन सिखाऊंगा।

वह युवक दो सप्ताह बाद मुझे मिला। उसके स्वास्थ्य को देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। उसके चेहरे पर गुलाबी लालिमा थी। आंखों में तेज था। दो चपाती वह खाने लगा था। भूख और नींद सामान्य थी। काम करने में उसका मन लगने लगा था,वह स्वयं इस प्राकृतिक उपचार से सन्तुष्ट एवं प्रसन्न था। वह मेरी ओर कृतज्ञता भरी दृष्टि से देख रहा था उसने प्रार्थना की कि उसे कुछ आवश्यक योगासन सिखाये जायें।

मैंने उसका उत्साह और इच्छा देखकर उसे सर्वांग पुष्टि, तानासन, बज्रासन, कुर्सी आसन तथा मकर आसन सिखाये और हिदायत दी कि वह अपनी शक्ति से अधिक न व्यायाम करे न काम करे। धीरे धीरे उस के शरीर में शक्ति का संचार हो जायेगा। तदानुसार वह व्यायाम तथा दैनिक कार्य कर सकेगा। वह युवक पुनः पन्द्रह दिन बाद मिला, बहुत प्रसन्न एवं स्वस्थ था। अब वह पूर्ण स्वस्थ है और योगासनों का प्रचार तथा प्रसार अपने पड़ोसियों में करता है। मुझे स्वयं आत्मसंतोष है कि एक युवक जो निराशा के गर्त्त में पड़ा था वह उससे बाहर निकल कर आशावादी बन गया है और सुखी जीवन व्यतीत कर रहा है।

दूसरा उदाहरण भी कम दिलचस्प नहीं है। मुझे एक प्रातःकालीन सैर के समय एक सेना निवृत मानद लैफ्टीनेंट जंगल में मिला। उसने अभिवादन के पश्चात कहा, "मैं आप को काफ़ी दिनों से सैर करते हुए और आसन व्यायाम करते हुए इस जंगल में देखता रहा हूँ, मैं आप से अपनी कुछ परेशानी का निवारण चाहता हूँ। मेरे दोनों घुटनों में पीड़ा रहती है। मेरा पेट न साफ़ रहता है न शौच खुल कर आता है। खूब सब्जी, फल सलाद आदि का सेवन करता हूँ। दूध दही की घर पर कमी नहीं है। व्यायाम सैर भी प्रतिदिन करता हूँ। कृपया मुझे योगासन अथवा ऐसी क्रिया सिखायें कि मेरा आमाश्य ठीक रहने लगे और खुल कर भूख लगने लगे।" मैंने कहा, आप चिन्ता न करें आप एक सप्ताह बाद स्वयं स्वस्थ अनुभव करने लगेंगे। यह अच्छी बात है आप सैर और व्यायाम के शौकीन हैं और भोजन भी अच्छा लेते हैं।

मैंने उसे घुटनों के दर्द के लिए कुर्सी आसन, बज्रासन तथा पंजो और एड़ी के सहारे कम से कम सौ कदम चलने के लिये कहा। खाना खाने के उपरान्त बज्रासन करने को कहा जिस से पाचन क्रिया ठीक रहे और गैस न बने। प्रातःकाल पानी पी कर कागासन पर बैठने का अभ्यास कराया। जिससे शौच काफी खुल कर और साफ आए। मिर्च, मसाले, खटाई, मिठाई, तली हुई चीजें, मांस मदिरा, मछली अंडे का परहेज तथा नशीले पदार्थों का त्याग आवश्यक बताया। बिना भूख भोजन कदापि न करें। प्रातः दूध अकेले न लेकर उसके साथ थोड़ा फल, मेवा या गिरी या अंकुरित दाल लिया करे और रोटी चोकर तथा आटा के मिश्रण की खाया करें। गेहूं, जौ, चना समान मात्रा में मिलाकर उसकी रोटी खाया करें वह रोटी

सुपाच्य, पौष्टिक तथा बहुत गुणकारी रहेगी। पेट का आकार सीमित रहेगा, मल आन्तों में नहीं चिपकेगा और शौच एकदम साफ होगा।

वह व्यक्ति मुझे तीसरे दिन सैर के समय उसी जंगल में मिला और उसने कहा, "मेरे घुटनों का दर्द न मालूम कहां चला गया, मैं डाक्टरों की दवाईयां खा खा कर उकता गया था पंजों के बल चलने, कुर्सी आसन करने, बज्रासन के अभ्यास से घुटनों का दर्द दूर हो गया है। भूख में भी सुधार हुआ है।"मैंने कहा, आप प्राकृतिक जीवन का अभ्यास करते रहें आप की सब तकलीफें दूर हो जायेंगी। वे एक सप्ताह बाद मुझे फिर मिले और उन्होंने अपने पेट की सफ़ाई तथा शौच निवृति पर राहत की चर्चा की। वह व्यक्ति कई वर्ष से प्राकृतिक जीवन दिनचर्या का अभ्यास कर रहा हैं और बिल्कुल स्वस्थ और युवा लगता है। पेट साफ न रहने के कारण उसके चेहरे पर झुर्रियां पड़ने लगी थीं अब चेहरे पर झुर्रियाँ या सिलवटों का खोज नहीं है जबकि उसका शरीर प्रौढ़ता से आगे बढ़ चुका है।

तीसरा उदाहरण भी एक सेवानिवृत आजाद हिन्द फौज के अफसर का है। स्वभाव से वह व्यक्ति सत्संगी, स्वाध्यायशील और खोजी प्रवृति का है। जब भी मिलने वे आते है, अपने अध्ययन तथा अनुभव की चर्चा किया करते हैं। बातों बातों में उन्होंने बताया कि वे इन दिनों बहुत परेशान हैं। रात को उन के आधे शरीर पर बहुत पसीना आता है। और आधा शरीर सूखा रहता है। डाक्टरों की दवाईयां काम नहीं कर रहीं। यह हाल तो सर्दी के मौसम में है गर्मियों में तो पसीने के कारण सोना दुर्भर हो जायेगा। मैंने उनसे पूछा, "क्या आप एक करवट सोने के आदी तो नहीं बन गए हैं"। उन्होंने कहा, "हां जब से मुझे एक करवट सोने की आदत पड़ी है तभी से यह पसीने का रोग लगा है।" मैंने कहा आप निश्चित रूप से करवट बदल बदल कर सोने का अभ्यास प्रारंभ कर दें और तख्त पर सोयें, फोम के गद्दों व तकियों को तिलांजलि दे दें। आप की यह शिकायत एक सप्ताह में दूर हो जायेगी।

वे सज्जन पन्द्रह रोज बाद मिलने आए और उन्होंने उपरोक्त सलाह के लिये आभार प्रगट किया। अब वे बहुत प्रसन्न थे। वे करवट बदल कर सोते थे और पसीना आना बन्द हो गया था। बिना दवाई के स्वस्थ हो गए। डाक्टरों की समझ में यह रोग आ ही नहीं रहा था। वास्तव में हमारा शरीर परमेश्वर की अनोखी रचना है। शरीर की संरचना और उसकी कार्यप्रणाली को समझे बिना व्यक्ति आलस्य और प्रमाद के कारण अप्राकृतिक जीवन जीने लगता है ता उसे रोग लगे बिना नहीं रहता। शरीर के जिस अंग से आप काम नहीं करेंगे वह अंग निकम्मा और रोग ग्रस्त हो जायेगा जिस अंग से अधिक काम लेंगे वह क्षीण अथवा शीघ्र वृद्ध अवस्था को प्राप्त हो जायेगा।

वह व्यक्ति दांई करवट अधिक सोया करता था। जिस से उसके जिगर, गुर्दे आदि शरीर के महत्वपूर्ण अंगों पर भोजन और मल का दबाव पड़ता था और उसका आधा शरीर आराम नहीं कर पाता था जिसके कारण उसी करवट पसीना आने लगा था। यह आदत छोड़ने से उसे पसीना आना बन्द हो गया और स्वस्थ हो गया। यही प्राकृतिक जीवन है। प्रकृति के विपरीत चलना रोगों को बुलावा देना है।

इसी प्रकार एक प्रधानाध्यापक महोदय ने अपना कष्ट सुनाया। उन के घुटनों में दर्द

रहता था और पंजो के नीचे एक बीचों बीच नस खिंच जाया करती थी जिससे वे बड़े दुखी और उदास रहते थे। मैंने पहले केवल पंजों और एड़ी के बल सौ कदम चलने का परामर्श दिया। ऐसा करने से उन्हें पहले दिन ही में पचास प्रतिशत राहत महसूस हुई और तीन दिन के बाद उनके घुटनों और पंजों के दर्द तथा नसों का खिंचाव ठीक होगया। इसके बाद मैंने वज्रासन तथा कुर्सीआसन और पगताल का व्यायाम शुरू करने की सलाह दी। अब उन की आयु ५५ वर्ष हो गई है परंतु उन्हें घुटनों की कोई तकलीफ नहीं है।

मैंने प्रकृति के नियमानुसार जीवन व्यतीत करने का अध्ययन व अनुभव महात्मा गांधी और डा. जस्ट की पुस्तकों से प्राप्त किया है। अनेक रोचक संस्मरण व विवरण मुझे इस संबंध में ज्ञात हैं लेकिन उन सब का वर्णन न करके केवल चार उदाहरण पाठकों व साधकों की रूचि और उपयोगिता के लिए यहां मैंने लिखे हैं ताकि अन्य पीड़ित लोग भी प्राकृतिक जीवन का सहारा लेकर अपनी पीड़ा से छुटकारा पा सकें।

हम विषैले पदार्थ खाते हैं

विज्ञान के वरदान और अभिशाप दोनों मानव जाति ही नहीं प्राणीमात्र और प्रकृति प्रेमियों के लिये सुख और दुःख के कारण बने हुए हैं। विकास के नाम पर विनाश हो रहा है। प्रकृति के पांचों तत्त्व, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश, जहरीले और विषाक्त पदार्थों से प्रदूषित हो रहे हैं। अब हमें न साफ वायु मिलती है, न स्वच्छ पानी पीने के लिए मिलता है। नदी, नाले, नहरें सब का पानी शहर के गंदे पानी के नालों ने जहरीला कर दिया है। अग्नि में भी हम गंदी चीजें डाल कर उसे सोलह गुणा विषाक्त बना देते हैं। गरीब, बेसहारा लोग रबड़ के टायर, कूड़ेदानों से एकत्र किए कपड़े और चीथड़ों को आग लगाकर सर्दी की रात गुजारते हैं। उन्हें ये ज्ञान नहीं है जो पदार्थ वे अग्नि में डालते हैं अग्नि उसे जला कर सोलह गुणा फैला देती है। वायु प्रदूषण के रोकने लिए तभी हवन-यज्ञ आदि का आर्य संस्कृति और सभ्यता में प्रचलन था। हमारा सीमाहीन आकाश भी धूल, धुआं तथा कल-कारखानों की चिमनियाँ की विषैली गैसों से प्रदूषित होता जा रहा है। धरती माता जिस के वक्षस्थल पर आधे से अधिक वन और प्राकृतिक जंगल थे वे सब उजाड़ दिये गए हैं। यह समस्या अब केवल अकेले भारत देश की नहीं सारा विश्व संपूर्ण प्रदूषणों से पीड़ित है। मानवता कराह रही है। इस प्रदूषण के लिये प्रकृति नहीं संपूर्ण मानव जाति उत्तरदायी है, फलतः सभी को इसके कड़वे फल का परिणाम भुगतना होगा।

जब मनुष्य प्रकृति का पड़ोसी और प्रेमी था तब प्रकृति के पांचो तत्व पृथ्वी, जल, वायु,अग्नि और आकाश प्रदूषण रहित साफ सुथरे और मनुष्य को दीर्घायु और स्वस्थता का वरदान थे। जंगल के मीठे फल और मेवे, मनुष्य का सर्वोत्तम आहार, आज वनों के अभाव में सर्व साधारण के लिए कितना दुर्लभ और दूभर हो गया है।

प्राकृतिक चश्मों का बहता मीठा पानी अब अतीत की कहानी बन कर रह गई है। उस के स्थान पर किलोरीन युक्त टंकी का गर्मियों में गर्म पानी और सर्दियों में दान्तों को भी काटने

वाला ठंडा पानी हमें पीने और स्नान करने के लिये शहरों और विकसित गांवो में भी मिल रहा है। टंकियों की सफाई कब और कैसे होती है, ईश्वर ही जानता है।

यमुना नदी जहां से दिल्ली शहर के लिये पानी साफ करके लाया जाता है यदि आप वहां जा कर गंद को देख लें तो दिल्ली का पानी नहीं पिया जा सकता। पानी द्वारा हम अनेक रोगों को अपने शरीर में प्रतिदिन शरण देते जा रहेहैं। नगरपालिकाएं जितना जलकर वसूल करने में तत्पर रहती हैं उतना उत्साह ताजा, स्वच्छ तथा निरोग जल वितरण में नहीं दिखातीं। अकेला नागरिक स्वच्छ व निरोग जल कहां से प्राप्त करेगा। प्रदूषित जल पीने के कारण विशेष कर गर्मी और बरसात के मौसम में कितने लोग बीमार होते हैं और वे मौत के घाट उतर जाते हैं। गर्मियों में पानी की वितरण व्यवस्था भी सीमित हो जाती है। कुंए और हाथ के नलों को शहरों में भुला दिया गया है जो पानी के संकटकालीन स्रोत व साधन थे।

शहरों और उन के समीपस्थ गांव भी जहरीली हवा में सांस लेकर अपना जीवन प्रतिदिन कम करते जा रहे हैं। कल कारखानों के जहरीले धुएं से भी अधिक बस, ट्रक, मोटर वाहनों से निकलता हुआ विषाक्त धुआं वायु को प्रदूषित कर रहा है। जिस में मनुष्य को मजबूरन सांस लेना पड़ता है। सरकार कितना भी प्रबंध व सहयोग करे, नागरिकों के सक्रिय सहयोग के बिना इस वायु प्रदूषण समस्या पर नियंत्रण असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। कार के पैट्रोल इंजन से निकलने वाली कार्बन मोनोआक्साइड गैस से सिरदर्द हो सकता है,मतली आ सकती है। आंखों के सामने अंधेरा छा सकता है और रक्त में प्राणवायु की कमी हो सकती है। मोटर कारों के अधजले या न जले ईंधन के अवशेष अर्थात हाइड्रोकार्बन भी धुएं में निकलते हैं जिनसे कैंसर का खतरा रहता है। अनुमान है एक कार एक साल में एक किलोग्राम सीसा हवा में छोड़ती है। सीसा जहर है। इससे हड्डियां गलने लगती हैं। एक अनुमान यह भी लगाया गया है कि एक कार को ९६० किलोमीटर चलने के लिए जितनी आक्सीजन चाहिये, मनुष्य को एक वर्ष तक सांस लेने के लिए उतनी आक्सीजन की जरूरत पड़ती है।

कल कारखानों के आस पास वातावरण में सल्फरडाईआक्साइड गैस की मात्रा काफी होती है। फाउन्ड्रियों में आर्सेनिक खनिजों के प्रयोग से उनके आसपास जहरीली आर्सेनिक वाष्प, अल्मोनियम और सुपर फास्फेट बनानेवाले कारखानों के पास जहरीला फलुओराइड धुआं और जहां पायराइट का उपयोग किया जाता है वहां सल्फरडाईड आक्साइड जैसी विषैली गैसें हवा में घुलमिल जाती हैं। फलस्वरूप आज दिल्ली, कानपुर, पूना, बैंगलूर, मद्रास, कलकत्ता, बंबई जैसी महानगरियों में हवा प्रदूषण के कारण यक्ष्मा, फेफड़ों का कैन्सर, खांसी, दमा, अंधापन और बहरापन जैसी बीमारियों का प्रकोप बढ़ता जा रहा है। मनुष्य ही नहीं, वृक्षों का भी दम घुट रहा है। विषैले धुएं के कारण, विषैले कण पत्तियों पर जम कर उनके नन्हें छिद्रों को बन्द कर देते हैं इसलिए पेड़ पौधे न तो सूरज की रोशनी से खुराक ले पाते हैं न रात को सांस ले पाते हैं अन्ततः पेड़ पौधे मुरझाकर कमजोर पड़ जाते हैं।

धरती माता का विस्तार तो सृष्टिकर्ता ब्रह्मा ही प्रलय के उपरान्त करेंगे। लेकिन मनुष्य ने वसुन्धरा को गंदा और मैला किया है। जहां पर पचास वर्ष पूर्व साफ पानी, नदी, नालों

और नहरों में बहता था वहां अब गंदा जहरीला पानी बह रहा है। जैसे जैसे जनसंख्या बढ़ी वैसे ही गंदगी भी बढ़ी। अनेक नये गंदे नाले पृथ्वी का पेट खोदकर बनाये गए हैं। नई नई सड़कों का जाल पृथ्वी पर फैला दिया गया है, नई रेलवे लाइनों का विस्तार व विकास हुआ है। अनेक नये नगर और कॉलोनियां वजूद में आ गई है जिनके कारण पृथ्वी पर भी प्रदूषण का जोर बढ़ा है। पृथ्वी का आकार भी कम हुआ है। प्रकृति का सन्तुलन ठीक रखने के लिये पृथ्वी के एक तिहाई भूखण्ड पर वन और जंगल होने चाहिये जो अब नहीं रहे हैं। आदिवासी और वनवासी लोग भी वन और जंगलों के कटाव के कारण बहुत पीड़ित हैं। बड़े बड़े बांधों के निर्माण के कारण भी हजारों हेक्टर जंगल काट दिए गए हैं या डूब क्षेत्र में आ गए हैं।

विकास के नाम पर प्रकृति सन्तुलन का विनाश हुआ है। मानव जाति का खान पान, रहन सहन, वस्त्र आदि सभ्यता के नाम पर हानिप्रद अधिक और लाभप्रद कम है। हरित क्रांति के नाम पर सरकारी प्रचार साधनों ने अधिक अन्न उत्पादन के लिये फर्टिलाइजर, कैमीकल रसायन खादों के प्रयोग के लिये किसानों को प्रेरित किया है। यह ठीक है भारत ने हरित क्रान्ति के द्वारा अपनी खाद्य समस्या पर काबू पा लिया। लेकिन इस अप्राकृतिक खाद के निरंतर प्रयोग के कारण एक तो भूमि की उर्वरता का ह्रास होने का खतरा पैदा होता जा रहा है, दूसरे रासायनिक खादों से उत्पन्न अनाजों में परोक्ष रूप से जहरीला तत्व मिल रहा है। उदाहरण के तौर पर गेहूं की रोटी खाने वाले पिचानवें प्रतिशत लोगों के आमाश्य क्षीण हो गए हैं। उनकी पाचकाग्नि तथा पाचनशक्ति क्षीण हो गई है और पेट के अनेक रोगों के शिकार होते जा रहे। पेट में वायु विकार तो आम बात है। पेट के आकार भी बढ़ गए हैं। हरित क्रान्ति से पूर्व मानव जाति पेट के रोगों से इतनी पीड़ित नहीं थी।

कृषि वैज्ञानिकों के मतानुसार भी कृषि भूमि के लिए पशुओं का गोबर खाद तथा गली सड़ी घास फूस व पत्तियों का कम्पोस्ट खाद उत्तम होता है। इससे पृथ्वी की उर्वरता सदैव बनी रहती है। रासायनिक खाद का प्रयोग न्यूनतम करना चाहिये। लेकिन पूंजीपतियों ने अपने कल कारखाने लगा कर किसान को रासायनिक खादों का मौहताज बना दिया है। पहले किसान इस अप्राकृतिक खाद को खुशी से खेत में डालने को राजी नहीं था अब इसे छोड़ने को तैयार नहीं है। इसके लिये सरकारी मशीनरी भी कम दोषी नहीं है। अब कृषि विश्वविद्यालयों के खोज-अनुसन्धान विभाग चेतावनी देने लगे हैं कि किसान को अपने प्राकृतिक व परंपरागत गोबर और कम्पोस्ट खाद तथा हरे खाद का प्रयोग करना चाहिये ताकि कृषि भूमि की उपजाऊ शक्ति अर्थात उर्वरता बनी रहेगी और मानव जाति अनाज के जरिये पेट में पहुंचने वाले, जहर से बच जायेगी।

जो बात अन्न व अनाजों पर सही उतरती है वहीं फल और सब्जियों के उत्पादन पर भी सही है। दिल्ली शहर का गंदा पानी (मल-मूत्र) ओखला के पास सीवेज टैंक में यंत्रों द्वारा मल अर्थात खाद एक तरफ और पानी एक तरफ निकाल दिया जाता है। यह खाद किसानों को बेच दिया जाता है और पानी भी सिंचाई के लिए किसानों को दे दिया जाता है। इस खाद पानी से जो फसल पैदा होती है वह अन्य खेतों से कहीं अधिक ही होती है मगर सब्जी यदि शाम को बच गई और प्रातः आप ने उसे खाना चाहा तो उसमें बदबू आने लगेगी, उस का

खाना कठिन हो जायेगा। यह बात वहां आम सुनी जा सकती है कि गंदे नाले के पानी की सब्जी न खाने में स्वादिष्ट है न आरोग्य वर्द्धक है। साफ़ पानी से सिंचित खेतों की सब्जी स्वादिष्ट तथा स्वास्थ्यप्रद होती है।

फलों के द्वारा भी हम विषैले पदार्थ पेट में पहुंचा रहे हैं। केलों को रसायनों द्वारा पकाया जाता है। यह ठीक है केला शीघ्र पक कर तैयार हो जाता है। क्या रसायनों का कुप्रभाव केले के गूदे पर नहीं होता होगा ? जरा सा अधिक रसायन केलों पर छिड़कने से सारा केला खराब हो सकता है। जो केले कागज या पत्तों में लपेट कर पकाये जाते थे, वे बहुत मीठे और सुपाच्य होते थे। लेकिन अब इतनी मेहनत और सब्र कौन करे ? सेब कई वर्ष से ऐसे मिल रहे हैं जिन में न स्वाद है न रस है। अमरी सेब सबसे बढ़िया सेब होता है उसका स्वाद व सुगंध मुंह में पानी भर लाता है। अब तो बाजार में अमरी सेब के दर्शन ही नहीं होते। कहते हैं उसका निर्यात हो रहा है। फलदार वृक्षों को भी अब किसान प्राकृतिक खाद न देकर कृत्रिम रासायनिक खाद देने लगा है। जिससे फसल का उत्पादन तो बढ़ गया है मगर उस में गुणात्मकता कम हो गई है। आम का भी यही हाल है। पचास वर्ष पूर्व देशी चूसने वाला आम पर्याप्त पैदा होता था वह प्राय: पेड़ पर पकता था पककर टपक पड़ता था इसलिये उसे टपका कहा जाता था। आंधी अथवा तेज हवा से जो आम टूट कर गिर जाते थे, उन्हें 'पाल' में दबाकर पकाया जाता था। टपका और 'पाल' के आमों का स्वाद एकदम भिन्न होता था। टपका बहुत मीठा और स्वादिष्ट जबकि 'पाल' वाला आम जरा सा तुर्स अथवा खट्टा तथा स्वाद में भी कम होता था।

नागपुर के सन्तरे विश्वविख्यात हैं। वहां की जलवायु और भूमि की विशेषता के कारण सन्तरा चाहे छोटे से छोटा हो मगर स्वादिष्ट और मीठा होगा। अब व्यापारी लोग धन कमाने के लालच में सन्तरों को कोल्ड स्टोर में रख देते हैं जो बाजार में सन्तरे की फसल के पूर्व और बाद तक बिकते रहतेहै। उस संतरे में ताजा संतरे जैसा न रस रहता है न वास्तविक स्वाद रह पाता है। आजकल आप जो संतरे खाते हैं वे प्राय: कोल्ड स्टोर के हैं, ताजे और मौसम के संतरे नहीं। प्राकृतिक तौर पर फल, जो खाद्य पदार्थ उच्च कोटि के हैं, वे ताजे और मौसमानुसार ही खाये जायें तो व्यक्ति को निरोग तथा दीर्घायु बनाते हैं अन्यथा लाभदायक कम और हानिकारक ज्यादा हो सकते हैं। कोल्डस्टोर में फलादि अल्प समय के लिये रखे जाने चाहियें लेकिन व्यापारी को धन चाहिये वह मानव जाति के स्वास्थ्य का संरक्षक नहीं है। अल्प समय के बजाय वह फलों को अधिक समय रख कर अधिक मुनाफे के लालच में फल खाने वालों के स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ करता है जो एक गंभीर अपराध होना चाहिये, लेकिन, न सरकारों का ध्यान इस तरफ है न जागरूक संगठनों का।

देश की स्वाधीनता से पूर्व हमें अच्छी तरह याद है सफाई दरोगा या फूड निरीक्षक बाजार में प्राय: सुबह तथा शाम को बिकने वाले फल व सब्जियों का निरीक्षण किया करता था और खराब फलों और सब्जियों को आवारा पशुओं के सामने फिकवा देता या कूड़ेदान की भेंट चढ़वा देता था। अंग्रेज अधिकारी महामारी, अथवा संक्रामक रोग तथा गले-सड़े फल व सब्जियों से फैलने वाली बीमारी की रोक थाम के लिये कड़ी निगरानी रखवाते थे।

उन्हें इन बीमारियों की चपेट में आने का भय सताता रहता था। राजधानी के आसपास तथा बड़े नगरों में ये लोग स्वयं के लिये स्वास्थ्य के नियमों का पालन करते थे और उनकी देखा देखी अन्य शिक्षित तथा साधन सम्पन्न लोग भी उन की नकल करते थे। वे मक्खी मच्छर से बहुत डरते थे। मिठाईयाँ जालीदार कपड़े से या शीशे के ढक्कन से ढकी मिलती थी। गर्मी और बरसात के मौसम में तो वे बहुत ही सावधानी बरतते थे।

पहले घरों में सारा काम काज महिलाएं अपने हाथ से करतीं थीं। इसलिये वे खूब हट्टी कट्टी और निरोग रहतीं थी। चक्की चलाना, आटा गूंदना, चौका लगाना, घर की सफाई, कुएं से पानी लाना, दूध बिलोना, मसाले घर पर कूटना, दालों की सफाई तथा बच्चों का पालन पोषण, बड़े बूढ़ों की सेवा तथा देख रेख सभी काम उन की दिनचर्या के अंग थे। साधन संपन्न घरानों की महिलाएं तो अब काम को हाथ लगा कर राजी नहीं है। उनके बच्चों को आया या धाय पालती हैं। घर का सारा काम काज नौकर और नौकरानी करती हैं। उनका केवल घर में एक ही काम है सब पर हुक्म चलाना। साधारण परिवारों की महिलाएं भी अब उतनी कर्मठ नहीं रहीं जितनी हुआ करती थीं। वे भी अब चक्की से आटा नहीं पीसती, मसाले बाजार से कुटे हुए लाती हैं, जितना काम से बचा जा सकता है, बचती है। बाजार से कुटे हुए या मशीन से तैयार शुदा मसालों में काफ़ी मिलावट रहती है जो स्वास्थ्य के लिये बहुत हानिकर है। उचित यही है पहले सब मसाले साबुत खरीद लिए जाएं और उन्हें मोमदस्ता में कूट लें । प्राय: आलसी और बुद्धिहीन ग्रामीण महिलाएं दालों को पकाने से पूर्व साफ नहीं करती। उन में कंकर तथा मिट्टी के मजबूत कण जैसे बजरी आदि रहते हैं। किसान खलिहान से उठाकर बाजार में आढ़ती या व्यापारी को बेच देता है। सफाई का काम रह जाता है। इसलिये दाल को पहले साफ करो उस के कंकर कण आदि बाहर फेंक दो और पानी से भली भांति धोकर पकने के लिये बर्तन में रख दो। दाल में या भोजन द्वारा सख्त चीजें जो हमारे पेट में चली जातीं है, वे पथरिया जैसी चीज आमाश्य या मसाने में बना देती हैं, जो बहुत दु:खदायक तथा पीड़ा जनक होती है। कई बार तो औषधि से ही वह साफ़ हो जाती है अन्यथा शल्य क्रिया का ही सहारा लेना पड़ता है। खाद्य पदार्थों की सफाई और पकाने की विधि से ऐसे भयंकर पीड़ाजनक रोग से बचा जा सकता है।

दालों में मिलावट भी प्राय: व्यापारी द्वारा दी हुई बीमारी हैं। दालों से मिलती जुलती जंगली खाद्य पदार्थ दाल में मिला दिये जाते हैं जिससे भयंकर रोग लग जाता है। हरी पत्ती वाली सब्जियाँ अर्थात शाक को काटने से पूर्व खूब धोना चाहिये और काटने चीरने के पश्चात् भी धोना चाहिए। जिस चाकू, छुरी तथा दरांत से शाक को काटा गया है उसे भी पहले और बाद में धोकर रखना चाहिये। रसोई में पकती हुई चीजों को ढक कर रखना चाहिये कई बार छिपकली अथवा अन्य कीटाणु खुले बर्तन में गिर सकते हैं जिस से सारा भोजन विषाक्त बन कर जान लेवा बन जाता है। विवाह अथवा दावतों के लिये खाने वाला भोजन भी बड़ी सावधानी से तैयार कराना चाहिये। पाचक व हलवाई की जरा सी लापरवाही बारात व आगन्तुकों की जान लेवा हो सकती है।

प्राकृतिक जीवन

प्राकृतिक जीवन शब्द पढ़ कर कुछ लोगों को भ्रम हो सकता है कि कहीं व्यक्ति को आदिम अवस्था अथवा जंगली जीवन की ओर तो नहीं धकेला जा रहा है। इस लिये यह आवश्यक है कि प्राकृतिक जीवन से हमारा क्या अभिप्राय है, यह स्पष्ट होना चाहिये। प्राकृतिक जीवन से हमारा अभिप्राय है कि हम अपने जीवन को वैज्ञानिक तरीके से जीएं। मैं प्राकृतिक जीवन को वैज्ञानिक जीवन कह सकता हूँ। प्रकृति जैसा विज्ञान और वैज्ञानिक संसार में दूसरा नहीं है। जितना व्यक्ति प्रकृति के समीप और उसके नियमों के अनुसार जीवन व्यतीत करेगा वह सदैव सुखी, निरोग और दीर्घायु होगा। प्रकृति के पांच तत्व पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश हैं। हमारा शरीर इन्हीं तत्वों से बना है और इन से ही जीवित रहता है। इन तत्वों का सन्तुलन बिगड़ने पर हम रोगी बन जाते हैं। विज्ञान ने बहुत उन्नति की है। डा. राधाकृष्णन (भूतपूर्व राष्ट्रपति व विश्व विख्यात विद्वान व दार्शनिक) कहा करते थे, "मनुष्य ने पक्षी की भांति असीम आसमान में उड़ना सीख लिया,समुद्र की छाती पर मछली की तरह तैरना सीख लिया .... लेकिन इन्सान बनना नहीं सीखा।" ये सब विज्ञान के चमत्कार हैं। लेकिन इन्सान बनाना या बनना तभी संभव है जब इन्सान प्रकृति को समझे और प्रकृति के रचयिता, परमात्मा पर विश्वास रखे और इन्सानियत से जीवन यापन करे। जैसा बर्ताव हम अपने साथ चाहते हैं वैसा ही बर्ताव दूसरों के साथ करें, यहीं से इन्सानियत प्रारंभ होती है और इसके विपरीत आचरण करने से इन्सानियत समाप्त होती है। संसार में सुखी रहने का यह बुनियादी नियम है। इन्सान का सही आचरण, बर्ताव प्राकृतिक जीवन का आधार स्तम्भ तथा प्राण है।

मानव जाति ने इसी लिए उन्नति की कि मानव अन्य प्राणियों की अपेक्षा कहीं अधिक बुद्धिमान, विचारवान तथा संवेदनशील है। उसने ग्राम पंचायत से लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ जैसे विश्वस्तरीय संगठन मानव जाति को सुख और शान्ति से रहना सीखने और सिखाने के लिए बनाए। इन संगठनों का आधार भी मानवता अर्थात इन्सानियत है। मनुष्य के अन्तरतम में आत्मा विद्यमान है, जो परमात्मा का अंश है। आत्मा, परमात्मा से मिलने के लिए तड़प रही है, वह मन व मायामंडल के कारागार की बंदी है। इन्सान जब इस सत्य को समझ लेता है तो वह मानवता की ओर तेजी से कदम बढ़ाता है और धीरे-धीरे उस का स्वार्थ परमार्थ में बदलता चला जाता है।

प्राकृतिक जीवन गृहस्थाश्रम में सफलतापूर्वक चल सकता है। इसके लिए उसे घर बार त्याग करने की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। इस पुस्तक के प्रथम अध्याय "स्वस्थ माता पिता" में पर्याप्त चर्चा गृहस्थ जीवन की कर चुके हैं इसलिये उन्हीं बातों की पुनरावृत्ति उचित नहीं है केवल सरसरी जिक्र ही पर्याप्त है। लड़का व लड़की का विवाह संबंध पूर्ण युवा होने पर ही करना चाहिये। युवा होने से पूर्व और युवावस्था समाप्त होने के पश्चात विवाह प्रकृति के नियम के विरूद्ध है। वैज्ञानिक भी अठारह वर्ष से कम आयु की कन्या का विवाह उत्तम सन्तानोत्पत्ति तथा पत्नि के स्वास्थ्य के लिये अनुचित मानते हैं। उसी प्रकार

लड़के की भी आयु कम से कम २२ से २५ वर्ष तक होनी चाहिये। तभी विवाह करना उचित है। बाल विवाह और वृद्ध विवाह अभी भी राजस्थान प्रदेश में प्रचलित हैं। इससे अनेक सामाजिक कुरीतियाँ फैलती हैं जिन से राष्ट्र निर्बल और निर्धन हो जाता है। प्रतिवर्ष राजस्थान में बैसाख मास के अक्षय तीज के अवसर पर हजारों बाल विवाह संपन्न होते हैं। राजस्थान सरकार को इस कुप्रथा का डट कर विरोध करना चाहिए, जिस के लिये जनजागरण व जनशिक्षण कार्यक्रम चलाना आवश्यक है। शिक्षा के प्रचार प्रसार से सामाजिक कुरीतियों पर नियंत्रण किया जा सकता है। बंगाल में राजा राम मोहन राय व पं. ईश्वर चन्द्र विद्यासागर ने सती प्रथा व बालविवाह की प्रथा को बंद कराया था।

आर्य समाज के संस्थापक व विश्वविख्यात समाज सुधारक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने बाल विवाह, अनमेल विवाह तथा वृद्ध विवाह जैसी सामाजिक कुरीतियों के निवारण के लिये आर्य समाज जैसे संगठन की स्थापना की और अपने ग्रंथों द्वारा तथा भाषणों द्वारा समाज सुधार अभियान चलाया था। लड़कों की तरह, लड़कियों की शिक्षा के लिये भी कन्या गुरूकुलों की स्थापना तथा कन्या शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया था। अब आर्यसमाज भी कुछ शिथिल हो गया है उसे पुनः स्वामी दयानन्द और स्वामी श्रद्धानन्द जैसे नेतृत्व की आवश्यकता है।

प्राकृतिक जीवन का पालन करने के लिये सन्तानोत्पत्ति और उन का लालन पालन तथा शिक्षा, गृहस्थ का परम धर्म है। एक गृहस्थ को कितनी सन्तान उत्पन्न करनी चाहिये यह एक राष्ट्रीय प्रश्न है। भारत वर्ष की वर्तमान सामाजिक, आर्थिक तथा जनसंख्या की वृद्धि को ध्यान में रखते हुए दो या तीन से अधिक सन्तान उत्पन्न करना राष्ट्रहित में तो है ही नहीं, व्यक्तिगत हित में भी नहीं है। लड़का लड़की का भेदभाव भी मानवीय व न्याय संगत नहीं है। लड़का पैदा हो इसी फिक्र और चक्र में सन्तान पैदा करते जाना और जनसंख्या का बढ़ाकर राष्ट्र पर भार बनाना, न देशभक्ति है, न नागरिक भावना का पालन है। पहले बच्चे के जन्म के पश्चात दूसरा बच्चा पांच वर्ष बाद पैदा हो जो दोनों के हित में है और यदि बहुत आवश्यक है तो तीसरा बच्चा भी दूसरे बच्चे के जन्म के पांच वर्ष पश्चात होना चाहिये तभी तीनों बच्चों का स्वास्थ्य, लालन पालन और मां का स्वास्थ्य व जीवन सुखी रह सकता है।

राष्ट्रों के जीवन में ऐसे समय भी आ जाते हैं जब राष्टकर्णाधार अपने देश की जनसंख्या की वृद्धि के लिये अपने नागरिकों को प्रोत्साहित करते हैं।परन्तु ऐसे भी समय आते हैं जब राष्ट्र नायक जनसंख्या को नियंत्रित करने के लिए छोटे परिवार की ओर अपनी जनता को प्रेरित करते हैं। विश्वयुद्ध, महायुद्ध, महामारी, भूकंप, तूफान आदि कारणों से ज़ब किसी देश की जनसंख्या बहुत कम हो जाती है तब बड़े परिवार अर्थात अधिक सन्तान उत्पन्न करने का आह्वान सरकारें करती हैं। इसी प्रकार जब किसी राष्ट्र की जनसंख्या उसके उपलब्ध साधनों से कहीं अधिक बढ़ जाती है तब सरकार आबादी पर कड़ा नियंत्रण रखने के लिये दो या तीन बच्चों वाले परिवार की सीमा निश्चित कर देती है। देश के स्वाधीन होने के पश्चात पहली जनगणना सन् १९५१ में हुई थी अब चालीस वर्ष पश्चात् १९९१ में भारत की जनसंख्या लगभग ८४ करोड़ हो गई है। इसलिये नागरिक भावना और देशभक्ति का तक़ाजा

है कि छोटे परिवार को अपने गृहस्थ का आधार बनायें। जहां यह छोटा परिवार नागरिक के निजी हित में सहायक है वहां राष्टराज्य की आवश्यकता है। इससे नागरिक निरोग, सुखी तथा सम्पन्न और दीर्घायु होगे तथा राष्ट्र आत्मनिर्भर और शक्ति सम्पन्न होगा।

महात्मा गांधी जी का मत है कि मनुष्य को मशीन का दास नहीं बनना चाहिये अपितु मशीन को अपनी दासी बनाना चाहिये। गांधीजी ने विशेषकर भोजन और वस्त्र के लिये मशीन का प्रयोग वर्जित किया है। इस विचारधारा के पीछे जहां व्यक्ति के स्वास्थ्य का ध्यान रखा गया है वहां बेरोजगारी की समस्या का भी निवारण सोचा गया है। स्वदेशी आन्दोलन से अंग्रेज सरकार हिल गई थी। इससे ब्रिटिश अर्थव्यवस्था को भारी धक्का लगा था। इस की यहां विस्तार से चर्चा करने की जरूरत नहीं है। घर-घर में जब आटा पीसने की चक्की चलेगी तो महिलाओं का स्वास्थ्य स्वतः ही ठीक रहेगा उन का प्राकृतिक और सहज व्यायाम हो जायेगा। मशीनों द्वारा पिसा हुआ आटा स्वास्थ्यप्रद नहीं रहता।

घर-घर जब चरखा चलेगा तो स्वदेशी कपड़े के लिये सूत तैयार हो जायेगा। हाथ का कता और बुना सूती वस्त्र वास्तव में भारत जैसे देश के लिये वायु अनुकूलित अर्थात एअरकन्डीशन वस्त्र है। सूती, ऊनी तथा रेशमी कपड़े के अतिरिक्त नायलौन, टेरीकॉट तथा अन्य फाइबर के कपड़े पहनना शरीर की त्वचा के लिये, भारत जैसे देश में अप्राकृतिक है। लेकिन फैशन के क्रेज और बिना सोचे समझे दूसरों की अंधाधुंध नकल करने की आदतों के वश हो कर निर्धन वर्ग के लोग भी अप्राकृतिक वस्त्रों के कपड़े पहनने लगे हैं, जिनसे अनेक प्रकार के चर्म रोग सर्व साधारण को लग रहे हैं। हमारे कल कारखानों के मालिक मुनाफ़ा कमाने के लिए राष्ट्र के जीवन के साथ खिलवाड़ कर रहे हैं जिस की ओर राष्ट्र व राज्य सरकारों का ध्यान भी नहीं है।

महात्मा गांधी जी ने किचन (रसोई) और लैट्रिन (शौचालय) दोनों की सफाई का स्तर एक ही बताया था हमारी पाकशाला में जितनी पवित्रता, शुचिता तथा सात्विकता होगी, भोजन उतना ही स्वास्थ्यप्रद तथा रोगमुक्त होगा। शौचालय की सफाई की ओर तो नागरिकों का ध्यान बिल्कुल नहीं है, चाहे वे निजी टट्टियां हो अथवा सामूहिक शौचालय हों। उन मे मक्खियों और बदबू का साम्राज्य होगा। शौचालय साफ़ सुथरे रहें तो अनेक रोगों से बचा जा सकता है। गुप्त अंगों के कई रोग शौचालय से हमें लग सकते हैं। कई प्रकार के पेट के रोग वहां से छूत के कारण लग जायेंगे। इसलिये शौचालयों की सफाई उतनी ही जरूरी है, जितनी भोजनशाला और भोजन भंडारण की। किचन और टायलेट में एक भी मक्खी और मच्छर न रहे और किसी प्रकार की बदबू न हो यही उन की सफाई की पहचान समझ लें।

शयनकक्ष में लगभग आठ घंटे व्यक्ति गुजारता है। शयनकक्ष हवादार हो अर्थात वायु का आवागमन होता रहे और उस में किसी भी प्रकार की सीलन अथवा बदबू न हो। आजकल निर्धन वर्ग को छोड़कर मध्यम वर्ग तक के परिवारों में फोम के गद्दों का रिवाज आम बात हो गई है। गर्मियों में कूलर भी उन के घरों में आवश्यक सामग्री बन गया है। जिस कमरे में परिवार सोता है फोम के गद्दे और कूलर की सीलन से बदबू देने लगते हैं। गर्मियों में फोम के गद्दे वैसे भी उपयोगी नहीं होते मगर फैशन और अवैज्ञानिक दृष्टि कोण के कारण शयन

कक्ष बीमारी के कारण बन गए हैं। कमर के रोग लगने पर बड़े-२ डाक्टर सख्त बैड पर सोना और फोम का त्याग की सलाह देते हैं। सर्दियों में गद्दे के लिए नमदा अथवा मोटा कम्बल सर्वोत्तम है रूई की गद्दियाँ अथवा गद्दे भी फोम से कहीं अधिक स्वास्थ्यप्रद तथा उपयोगी हैं।

शयन कक्ष में जहां तक बन पड़े बिस्तर और पलंगों के अतिरिक्त अन्य चीजें नहीं रहनी चाहिये ताकि किसी भी प्रकार का वायुप्रदूषण वहां न रहे। शयनकक्ष के साथ सटी हुई लैट्रिन बाथरूम जिसका आजकल रिवाज है, साफ सुथरा हो बदबूदार न हो। मुंह ढक कर सोने की आदत ठीक नहीं। इससे सोने वाले व्यक्ति को साफ वायु श्वास प्रक्रिया के लिए नहीं मिल पाती। यदि एक कमरे में बहुत सारे व्यक्ति सो रहे हों तो उस शयन कक्ष की सारी खिड़कियाँ और रोशनदान खुले रहने चाहिये और बन पड़े तो उस कक्ष का दरवाजा भी खुला रहे जालीदार दरवाजा बेशक बन्द कर लें। एक दूसरे व्यक्ति के श्वास की दुर्गंध व गंदी वायु में सांस लेना अप्राकृतिक है। विवाह शादी के अवसर पर जब बारात किसी धर्मशाला अथवा बारातघर में ठहरती है तब यह समस्या पैदा होती है। इसके लिए अच्छा यह रहेगा कि व्यक्तियों को सर्किल में सुलाया जाये। सब के सिर एक सर्किल में रहें। इससे अपान वायु और श्वास की वायु का बचाव हो जायेगा।

रात्रिभर एक ही करवट सोना उचित नहीं। इससे शरीर को पूर्ण आराम नहीं मिल पाता है और बल्कि कई बार शरीर को हानि होती है। मैंने कुछ अनुभूत अनोखे प्रयोग शीर्षक में एक करवट सोने वाले व्यक्ति की तकलीफ का जिक्र किया है, जिसे डाक्टर दवाईयों से और सुईयां लगाकर ठीक नहीं कर सके तो हमने उसे करवट बदल कर सोने का अभ्यास बताया तो वह बिना दवा के निरोग हो गया था, बाईं करवट सोना ठीक है। इससे पाचन क्रिया ठीक रहती है। प्रारंभ में तो काफी देर बांई करवट ही सोना चाहिये बाद में करवट बदलते रहें। खाना खाते ही सोना अपनी पाचन शक्ति को नष्ट करना है। खाने और सोने के बीच में कम से कम तीन घंटे का अंतर रहना ही चाहिये इससे पाचन क्रिया सदैव स्वस्थ रहेगी। दुनियां में केवल एक वज्रासन ही ऐसा योगासन है जो खाना खाने के उपरान्त भी किया जाता है जिससे भोजन आमाश्य में पहुंच कर भली भांति पच जाता है और भोजन से बनने वाले रस आदि ठीक बनते हैं। जो लोग वज्रासन करने में असमर्थ हैं वे खाना खाकर कमर के बल लेट कर स्वत: ही आने जाने का एक सांस मान कर आठ बार सांस गिन लें, इसी प्रकार दाईं करवट सोलह बार सांस गिन लें इसके उपरान्त इसी प्रकार बत्तीस सांस बाईं करवट लेट कर गिन लें। इस अभ्यास से भी भोजन ठीक प्रकार पच जायेगा और पेट विकारों से आप को छुटकारा मिला रहेगा। इस क्रिया का नाम आठ, सोलह बत्तीस रख दिया है।

ढीली चारपाई या पलंग पर सोना कमर और रीढ़ अर्थात मेरूदंड के रोगों को आमंत्रित करना है। तख्त पर सोना और तकिया छोड़ना विशेष कर चालीस वर्ष की आयु के पश्चात बहुत जरूरी है। जब तक आप का मेरूदंड सीधा रहेगा अर्थात कमर कमान की तरह नहीं झुकेगी और रीढ़ में लचक बनी रहेगी बुढ़ापा, पास नहीं फटकेगा।

प्राचीन काल में गुरूकुलों में छात्र छात्राओं को बचपन से ही पच्चीस वर्ष की आयुतक

तख्त पर सोने का रिवाज था। सेना में भी जवान धरती पर ही सोते हैं ताकि उन की कमर सीधी रहे। देखने में यह बात साधारण है मगर इस का प्रभाव व परिणाम असाधारण है।

गहरी नींद स्वास्थ्य के लिए भोजन की तरह जरूरी है। स्मरण शक्ति और मन- मस्तिष्क तभी निरोग रह सकते है जब व्यक्ति को गहरी और पूरी नींद रात को आती हो। पागलों को स्वस्थ करने के लिये सोने की दवा दी जाती है। यदि पागल को बिना दवा के नींद आने लगे तो वह मानसिक तौर पर स्वस्थ हो जाता है। जो लोग चिन्तित और तनाव में रहते हैं उन्हें गहरी नींद का आनन्द नहीं मिलता। विद्यार्थी को कम से कम छः घंटे की नींद अवश्य मिलनी चाहिये। छोटे बच्चों को आठ घंटे की नींद ज़रूरी है। शिशु का तो विकास ही नींद और खेल में होता है वह तो कई बार सोता जागता रहता है। बुढ़ापे में नींद कम हो जाती है। रात्रि का भोजन करने के पश्चात धीरे-२ टहलने वाले व्यक्ति को अच्छी गहरी नींद आयेगी। नींद में हमारी थकावट दूर होती और नई शक्ति का संचार शरीर में होता है। नींद को सूक्ष्म समाधि कहा जाये तो क्या हानि है ? आजकल लोग प्राकृतिक जीवन तो बिताते नहीं, दवाईयों से स्वस्थ रहना चाहते हैं। दवाईयां भी एक सीमा तक काम करती हैं और दुर्भाग्य यह है हमारे देश में तो दवाई उद्योग इतना लाभकारी धंधा बना लिया कि शुद्ध दवाई तो क्या शुद्ध विष भी मिलना दूभर हो गया है। शुद्ध सात्विक, सुपाच्य,पौष्टिक एवं संतुलित शाकाहारी भोजन करने वाला, नित्य प्रति योगासन व व्यायाम करने वाला, अपना काम धंधा मेहनत और ईमानदारी से करने वाला, किसी के प्रति ईर्ष्या द्वेष से दूर रहने वाला व्यक्ति सदैव गहरी नींद का आनन्द लिए बिना नहीं रह सकता, यह प्रकृति का नियम है।

मनुष्य मन का गुलाम है इसलिये वह मन के वश होकर सभी काम गलत और गलत तरीके से करने का अभ्यस्त हो जाता है। आत्मा की आवाज वह सुनना नहीं चाहता इसलिये वह मन और इन्द्रियों का गुलाम बन कर रह गया है। वह व्यक्ति अपने जीवन में बहुत सुखी है जिसके शरीर में कोई दुर्व्यसन एवं रोग न हो अर्थात किसी गंदी आदत का शिकार न हो। आजकल मनुष्य गर्मी के मौसम में भी मकानों के अन्दर पंखे और कूलर चलाकर सोते हैं इससे वे प्राकृतिक वायु से वंचित रह जाते हैं और दिनभर वे सुस्त और आभाहीन नजर आते हैं। खुली हवा में सोना, चन्द्रमा की रोशनी में सोना स्वास्थ्य के लिये सर्वोत्तम है। यदि गर्मी का प्रकोप है, हवा बन्द है तो आप खुले आसमान के नीचे स्टैंडिंग पंखा अथवा कूलर का प्रयोग कर सकते हैं लेकिन बन्द कमरे में सोना अत्यंत हानिकर है। पत्थर और ईंट के बने मकान दिन में सूर्य की तपिश से भभक उठते है और प्रातःकाल होने तक ठंडे होते हैं वे रात को भाप यानि भभक छोड़ते हैं जो हमारे स्वास्थ्य के लिये लाभप्रद नहीं होती। जितना व्यक्ति सुख सुविधा और विलासिता की ओर बढ़ा है प्रकृति और प्राकृतिक जीवन से दूर होकर न स्वस्थ रहा है, न दीर्घायु प्राप्त कर पाया है।

एक विनती मैं अभिभावकों से करना चाहता हूँ कि वे यदि जीवन में सुख और आनन्द का आनन्द लेना चाहते हैं तो कृपया अपने दुर्गुणों से अपने बच्चों को अवश्य बचायें। अपने बच्चों पर दया करें। गृहस्थाश्रम को इसीलिये सर्वोत्तम माना गया है कि ये आश्रम अन्य तीनों आश्रम ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ तथा सन्यास आश्रम का भरणपोषण करता है, साथ ही उत्तम

सन्तान देश के लिए पैदा करता है। वे मातापिता धन्य है जिन की सन्तान, बुद्धिमान, बलवान, रूपवान, साहसी एवं दुर्व्यसन रहित और निरोग है। इस के विपरीत सन्तानों के मातापिता, नर्कगामी है और धरती माता पर बोझ है।

प्राकृतिक जीवन में समय की पाबन्दी और नियमितता जरूरी है, प्रकृति के सारे कार्य स्वत: ही समय पर होते रहते हैं। इसलिये मनुष्य के लिये अपने सभी कार्य समय पर करने का अभ्यास करना अनिवार्य है। काम तो इन्सान करता ही है लेकिन काम को समय पर करने लग जाये तो सोने पर सुहागा है। प्रात:काल ब्रह्ममुहूर्त में चार बजे जाग कर शौचादि से निवृत होकर किसी सार्वजनिक पार्क, बाग अथवा खुले मैदान तथा खुली सड़क पर लंबी सैर, योगासन अथवा व्यायाम करना स्वास्थ्य के लिये उपयोगी है। यदि आप सूर्य निकलने के पश्चात जागेंगे और फिर उपरोक्त कामों को निपटायेंगे तो आप के अन्य दैनिक, सांसारिक कार्य पिछड़ जायेंगे।

सूर्योदय से पूर्व शौच निवृत्त होना और स्नान कर लेना प्राकृतिक जीवम का प्रथम कार्यक्रम है। सारांश यह है कि सूर्योदय से पूर्व आप अपने सभी कार्यों से निबट कर दैनिक कार्यों के लिये तैयार हो जाये। ऐसा कार्यक्रम बनाकर चलने से आप जीवन की दौड़ में कभी भी किसी से पीछे नहीं रहेंगे। आप की स्मरण शक्ति तेज और ठीक रहेगी। शरीर निरोग और स्वस्थ तथा सुन्दर रहेगा। मन कभी भी मायूस और उदास नहीं रहेगा। आप फूल की तरह सदैव खिले रहेंगे।

आप की आदतें साफ़ सुथरी और नियमित होनी चाहिये। समय पर काम करने की आदत, आलस्य और प्रमाद की दुश्मन है। समय की कद्र करना और कभी भी उसे व्यर्थ न गंवाना जीवन को महान् बनाने की सीढ़ी है। संसार में जितने भी महान् पुरूष पैदा हुए सभी ने समय को व्यर्थ नहीं गंवाया। समय अमूल्य सम्पत्ति एवं सम्पदा है जो गंवाकर कभी प्राप्त नहीं की जा सकती। बचपन शिक्षा प्राप्ति का समय है। जवानी काम करने और धन कमाने की उम्र है। प्रौढ़ अवस्था धर्म और परमार्थ में जीवन लगाने का समय है। सदैव याद रखो, मन राम में रहे और हाथ काम में रहे, यही सहज प्राकृतिक जीवन का आधार है।

स्वास्थ्य और पर्यावरण

स्वस्थ और निरोग रहने के लिये स्वच्छ पर्यावरण तथा वायुमंडल का होना नितांत आवश्यक है। पवित्र पर्यावरण, प्राकृतिक जीवन और दीर्घ जीवन के लिए प्राण वायु है। प्रकृति ने अपनी व्यवस्था बहुत सुन्दर की है लेकिन मनुष्य ने, प्रकृति की व्यवस्था में हस्तक्षेप करके, प्रकृति का सन्तुलन बिगाड़ दिया है। पर्वत, नदी, नाले, सरोवर, जंगल, वन और वनप्राणी सभी मनुष्य के इस हस्तक्षेप से दुखी हैं। पहाड़ों पर वृक्षों को काट डाला गया है। पहाड़ों के पेट को चीर कर खदान कार्य हो रहे हैं। पर्वतों पर रहने वाले पशु और पक्षी सभी के प्राकृतिक जीवन पर वृक्षों के कटने और खदान व खानें लगने से गहरा असर पड़ा है, जहां

पर ये दो कार्य हो गए हैं वहां जंगली जानवर शेर, चीते, बाघ की तो बात क्या गीदड़ और लोमड़ी तक नज़र नहीं आते हैं, पक्षी भी उड़ान भर कर कहीं अन्यत्र पलायन कर गए हैं।

पर्यावरण केवल किसी नागरिक या एक देश की ही नहीं विश्व की समस्या है। सारे संसार में प्राकृतिक वनों का समाप्त होना, प्रकृति के सन्तुलन का खतरा बन गया है। पृथ्वी जल, वायु, अग्नि और आकाश ये प्रकृति के पांच प्रमुख तत्व हैं इन का सन्तुलन वृक्ष अथवा वन बनाए रखते हैं। वनों के द्वारा भूखंड पर हरियाली और प्राणवायु प्रचुर मात्रा में सदैव पाई जाती है। वास्तव में पृथ्वी का एक तिहाई भाग वृक्ष और वनों से सदैव आच्छादित रहना चाहिए। ऐसा रहने से वर्षा का अभाव नहीं होगा। पर्वतों पर जो वर्षा होगी वह वृक्षों में धीरे-२ छन कर पृथ्वी पर आएगी और वृक्षों की जड़ें पेट भर कर पानी सोख लेंगी उसके पश्चात वह पानी धीरे-२ चल कर नदी नालों द्वारा मैदानी इलाकों में से गुजरेगा। भूक्षरण अथवा भूमि का कटाव नहीं होगा, नदी, नाले पानी के साथ मिट्टी न आने के कारण गहरे बने रहेंगे और ये बाढ़ का उग्र रूप धारण नहीं करेंगे। पहाड़ों पर प्राकृतिक वनों के कटने से नदी नालों में पानी के साथ करोड़ों टन मिट्टी बहकर समुद्र में चली जाती है। भयंकर विनाशकारी बाढ़ें प्रतिवर्ष, धन जन की बेहिसाब हानि करती है।

वृक्षों और वनों के अभाव में रेगिस्तान भी बढ़ने लगता है, वर्षा का अभाव या बहुत होना, दोनों, वनों के होने न होने के कारण होता है। इसलिए सभी नागरिकों को वृक्ष और वनों के महत्व को समझना चाहिए। प्राकृतिक वनों को किसी भी स्थिति में न काटा जाये। और पृथ्वी के एक तिहाई भाग पर वन और वृक्षों का आरोपण, संरक्षण तथा पालन पोषण अपने बच्चों की तरह किया जाए तभी मानव जाति और प्राणी मात्र का कल्याण है अन्यथा नहीं।

प्राकृतिक वन जहां प्रकृति का सन्तुलन बनाए रखते है वहां खाद्य पदार्थ, ईंधन, इमारती लकड़ी, औषधियां, चारा और इनसे बहुमूल्य प्राणवायु, मानव जाति व प्राणी मात्र को प्रदान करते हैं। पर्यावरण को शुद्ध और शान्त रखने में वनों का स्थान सर्वोपरि है। हमारे प्राचीन ऋषि, मुनि, योगी, साधक, तपस्वी आदि साधना के लिए वनों और जंगलों में अपना निवास स्थान बनाते थे। वहां उन्हें सभी प्रकार का शान्त वातावरण, शुद्ध वायुमंडल तथा स्वच्छ पर्यावरण का सहज ही सुख प्राप्त होता था। मनुष्य के जीवन के लिए सब से पहले प्राण वायु की आवश्यकता होती है जो जंगलों में प्रचुर मात्रा में प्राप्त होती है। ऋतुओं में परिवर्तन आता जा रहा है। शीत ऋतु में कभी हाड़ कंपा देने वाली शीत लहर का प्रकोप बना रहता है ग्रीष्म ऋतु में भी कभी कभी इतनी गर्म हवाओं का प्रकोप होता है कि घर से बाहर आना जाना दूभर हो जाता है यह भी वृक्ष और वनों के अभाव का ही दुष्परिणाम है।

मानव ने जंगली जीवन को तिलांजलि देकर शहरी और ग्रामीण जीवन को अपना लिया है। शहर और गांव के पर्यावरण को शुद्ध और साफ रखने के लिए सभी नागरिकों, नगरपालिकाओं, पंचायतों, प्रान्तीय व केन्द्रीय सरकारो को, विशेष प्रकार का स्कूल कॉलेजों में, पर्यावरण प्रशिक्षण तथा पर्यावरण सुरक्षा अभियान बारह महीने और हर रोज चालू रखना चाहिये।

पर्यावरण की सुरक्षा का महत्व हमारे ऋषि मुनियों और धर्म प्रर्वतकों ने भी अपने कार्यक्रम का अंग बनाया था। महात्मा बुद्ध ने प्रत्येक नागरिक को पांच वृक्ष लगाने और उन का पालन पोषण करने का उपदेश मानव जाति को दिया था। बिश्नोई जाति के महान समाज सुधारक व धर्म गुरू सन्त जाम्भोजी ने भी वृक्षों की रक्षा और पालन पोषण को परम धर्म कहा था। विश्नोई जाति खेजड़ी वृक्ष को काटना अधर्म समझती है। खेजड़ी वृक्ष रेगिस्तान का प्रमुख वृक्ष है जो प्राकृतिक तौर पर वहां पैदा होता है और रेगिस्तान में खूब फलता, फूलता है। पीपल के वृक्ष को काटना, हिन्दू अधर्म समझते हैं। इसका वैज्ञानिक कारण भी है यह वृक्ष, सदैव प्राणवायु (आक्सीजन)प्रदान करता रहता है। इसी लिए लोग इस वृक्ष की पूजा करते हैं हालांकि वे धार्मिक दृष्टि से इसकी पूजा करते हैं। महापुरूषों ने धर्म का रूप देकर इस वृक्ष का महत्व अधिक बढ़ा दिया है।

भारत के प्राचीन नगर बढ़ते बढ़ते बहुत भीड़ वाले शहर बन गए हैं। वहां शुद्ध पर्यावरण का स्वप्न लेना भी संभव नहीं रह गया है। वहां धूल, धुआं, बसों का धुआं, कल-कारखानों का जहरीला धुआं और प्रदूषित, गंदा पानी, मजदूरों की गंदी बस्तियाँ, पर्यावरण की प्रमुख समस्या बन गई है। निजी कारों का प्रचलन, सामान ढोने वाले ट्रक और किसानों के ट्रेक्टर ट्रालियां भी पर्यावरण प्रदूषण मेनिरंतर वृद्धि कर रहे हैं। सरकारों का ध्यान इस ओर काफी देर बाद गया है अब तो पर्यावरण की सुरक्षा के लिये मंत्रालय तक नियमित कर दिए गए हैं। लेकिन समस्या नियंत्रण से बाहर होती जा रही है। अफसोस तब होता है जब सरकार के प्रमुख विभाग भी पर्यावरण को प्रदूषित करने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। इस संबंध में हरियाणा बिजली बोर्ड, फरीदाबाद का प्रत्यक्ष उदाहरण नीचे देने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूँ।

देश की आजादी के बाद पश्चिमी पंजाब व सीमा प्रांत से विस्थापित आबादी को आबाद करने के लिये नया शहर फरीदाबाद टाउनशिप बसाया गया था। इस नए शहर के लिए बिजली घर भी बनाया गया था। हरियाणा बिजली बोर्ड की हिमालयी भूल यह थी कि इस पावर हाउस को इस नए शहर के साथ ही बना दिया गया और दूसरी भूल यह की कि इसकी राख और पानी के डिस्पोजल के लिए इस शहर के समीपस्थ गांव नवादा कोह की पहाड़ी और कृषि भूमि सस्ते दामों पर अधिग्रहण कर ली गई और नवादा कोह गांव के सरकारी स्कूल से १०० फुट दूर बांध बना कर, राखी पानी का भंडारण किया गया। प्रथम तो पावर हाउस की चिमनी से उड़ने वाला धुआं आस पास के गांवों के पर्यावरण को प्रदूषित करता ही रहता था, साथ ही पुराना शहर फरीदाबाद व बल्लभगढ़ तक वायु प्रदूषण होता रहता था। दूसरे नवादा कोह की पहाड़ी में जो बांध राखी पानी के भंडारण के लिए बनाया गया था उसने तबाही शुरू कर दी। कुओं का पानी खराब हो गया। मकानों में सीलन रहने लगी। गांव के वृक्ष भूमिगत पानी की अधिकता के कारण सूखने लगे। काफी लिखा पढ़ी, हरियाणा सरकार व केन्द्र सरकार के साथ, इस संबंध में की गई। दैवयोग से इसी नवादा कोह गांव के निवासी चौ. महेन्द्रप्रताप सिंह विधायक चुने गए। उन्होंने भी हरियाणा विधान सभा में इस समस्या के बारे में हरियाणा सरकार का ध्यान आकर्षित किया। माननीय विद्युत मंत्री व अध्यक्ष हरियाणा बिजली बोर्ड, मौके पर पधारे, विभाग की अदूरदर्शिता का उन्हें ज्ञान भी

हुआ मगर जबतक बांध पूरा राख से न भर जाए हटाया नहीं जा सका और इतना अवश्य हुआ विभाग ने दूसरा बांध बनाने के लिए स्थान तलाश करना शुरू कर दिया। इस संबंध में बारह वर्ष तक स्थानीय नेता व विधायक चौ. महेन्द्रप्रताप सिंह सरकार से निरंतर संघर्ष करते रहे। बांध राख से लबालब भर गया। अब क्या था, जरा से हवा के झोंके से सूखी राख उड़ती और नवादा कोह, फिरोजगांधी नगर, डबुआ गांव, भाखरी गांव आदि के लोगों को सांस लेना दूभर कर देती। अन्ततः फिरोज गांधी नगर के कुछ समाज सेवी, बुद्धिजीवियों ने सुप्रीम कोर्ट में सार्वजनिक हित के अन्तर्गत याचिका दायर कर दी। सुप्रीम कोर्ट ने बिजली विभाग को तलब किया और निश्चित समय सीमा में राख पर ८ ईंच मिट्टी डालकर दूब घास लगाने और वृक्षारोपण करने के आदेश जारी कर दिए। उधर हरियाणा विधान सभा में सरकार की खिंचाई की गई तब कहीं जाकर काली राख द्वारा वायु प्रदूषण से राहत मिली। यदि इस गांव के विधायक महोदय अब मंत्री अपना प्रभाव का प्रयोग न करते और सुप्रीम कोर्ट का हरियाणा बिजली बोर्ड को भय न होता तो इस वायु प्रदूषण का क्या दु:खद परिणाम होता कहा नहीं जा सकता।

संक्षेप में मेरा मन्तव्य यह है कि केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों को पर्यावरण की सुरक्षा के लिए स्वयं ऐसी कोई छोटी या बड़ी योजना अथवा प्रोजेक्ट नहीं बनाना चाहिये जिससे पर्यावरण प्रभावित हो जैसा कि उपरोक्त विवरण हमने दिया है। इसी प्रकार भारत की राजधानी दिल्ली के पास भी पावरहाउस का धुआं बीस मील तक वायु को प्रदूषित कर रहा है। उद्योगपतियों और पूंजीपतियों के कल कारखाने, जहरीली गैसों द्वारा और गंदे बदबूदार पानी के द्वारा, पर्यावरण को भयंकर नुकसान पहुंचा रहे हैं। तात्पर्य यह है कि योजना बनाते समय पर्यावरण सुरक्षा और प्रदूषण सुरक्षा का ध्यान रखना जरूरी है। कोयले से चलने वाले बिजली घर शहर के बीच और पास नहीं बनाने चाहिये। सुरक्षा की दृष्टि से भी यह खतरनाक है। भोपाल में गैस के कारण जो मानव विनाशकारी लीला प्रकाश में आई, फलतः ऐसे कल कारखाने भी शहरी आबादी से दूर होने चाहिये। राजधानी और राजधानी के आसपास औद्योगिक क्षेत्र नहीं होना चाहिए। प्रदूषण रहित कल कारखानों का क्षेत्र पृथक रहे। शहरों का विस्तार रूकना चाहिये। छोटे-छोटे शहर ठीक रहते हैं। जनसंख्या बढ़ने के कारण गंदी बस्तियां तथा पीने के पानी की समस्या, गंदे पानी की निकासी, सार्वजनिक शौचालय तथा स्नान घरों की समस्या, स्कूल, स्वास्थ्य, खेलकूद के मैदानों की समस्या खड़ी हो जाती है।

संभवतः चण्डीगढ सारे संसार का पहला नगर है, जिसे यह हिसाब लगाकर बसाया गया था कि चंडीगढ़ के निवासियों को वांछित प्राणवायु अवश्य मिलेगी। पर्यावरण की दृष्टि से यह शहर आदर्श है। यातायात के लिये चौड़ी-२ सड़के हैं और सड़कों के दोनों ओर लगभग एक-२ एकड़ भूमि छोड़ी गयी है जिस पर छायादार वृक्ष लगाए गए हैं। उसके बाद कोठियाँ और बंगले हैं। प्रत्येक कोठी, बंगला तथा फ्लेट के साथ वृक्ष लगाए गए हैं। बीच-२ में हरित पट्टी वृक्षों की लगाई गई हैं। जाकिर हुसैन रोज गार्डन चंडीगढ़ की शोभा है। प्रत्येक सेक्टर का बाजार पृथक है। लॉन, पार्क तथा वृक्षों की भरमार चंडीगढ़ शहर में देखने को बनती है। सरकारी और निजी सभी मकान योजनाबद्ध तरीके से बने हैं। चंडीगढ़ में अन्य

शहरों की भांति धूल, गर्द, गन्दी बदबू नहीं मिलेगी। पंजाब और हरियाणा तथा केन्द्र के मुख्यालय एवं कार्यालयों के रहते हुए भी चंडीगढ़ की देखभाल, साज संवार मुख्य प्रशासक चंडीगढ़ के द्वारा की जाती है, जो केन्द्रीय सरकार के अधीन है।

पर्यावरण की सुरक्षा के लिए जहां सरकार को जागरूक और कर्तव्य परायण होना चाहिये वहां नागरिकों के सहयोग की भी उतनी ही जरूरत है। प्रत्येक नागरिक को अपने मकान के आगे पीछे के आंगन में स्थान के अनुपात से वृक्ष, फूल और लान का प्रावधान रखना चाहिये। वृक्ष फलदार हो तो कहीं अधिक उत्तम रहेगा, ताजा फल परिवार को खाने के लिए मिलेंगे। अधिक स्थान हो तो सब्जी का भी शौक पूरा करना चाहिये। प्राय: जितने बड़े प्लॉट होते हैं उन में अधिक से अधिक खुला स्थान छोड़ने का नियम प्रचलित है। बड़े मकानों के स्वामी फल, सब्जी, फूल और लान अपने मकान की शोभा और जरूरत तथा शुद्ध पर्यावरण के लिए पैदा कर सकते हैं।

नगर के हस्पतालों, स्कूलों, कॉलेजों, विश्वविद्यालय परिसर आदि स्थानों में छायादार वृक्षों का आरोपण और संरक्षण आसानी से किया जा सकता है। सड़कों के किनारे, रेलवे लाइन के साथ-२ सघन, लंबे जाने वाले वृक्ष लगाने चाहिये। यूकलेपटिस (सफेदा) को सड़कों के दोनों और सुन्दर पंक्तियों में लगाने से सड़क पर छाया भी मिल जाती है। आंधी या तूफान में वृक्षों के टूटने से यातायात भी ठप्प नहीं हो पाता इन वृक्षों को सड़क से आसानी से हटाया जा सकता है।

कल कारखानों के मालिकों को सरकार बाध्य करे कि वे अपने अपने कारखानों में वृक्षा रोपण करें और उन का संरक्षण भी करें। कारखानों के प्रागंण में लॉन, फूल आदि भी लगाये जायें ताकि वहां का वातावरण सुरम्य रहे और मजदूरों के मन पर अच्छा प्रभाव पड़े। हरियाली तनाव और व्यर्थ चिन्तन को दूर करती है। इसीलिये लोग पर्यटक स्थलों पर अपने बाल-बच्चों को ले जाना पसन्द करते हैं ताकि वातावरण में परिवर्तन आ जाए।

भारत की लगभग अस्सी प्रतिशत जनता गांवों में निवास करती है। गांव के पर्यावरण को शुद्ध और पवित्र रखने के लिये कुछ आवश्यक झुकाव देना मैं जरूरी समझता हूँ। गांवों में प्राय: गन्दगी पशुधन से फैलती है। इस संबंध में मेरा ठोस सुझाव है कि पशुओं को गांव से बाहर खेतों पर रखना सर्वोत्तम है। ऐसा करने से गांव में पशु और गोबर गंद से जो मच्छर, मक्खी तथा बदबू होती थी वह नहीं रहेगी। खेतों को सर्वोत्तम गोबर का खाद मिलेगा। किसान अपने ट्यूबवैल की सुरक्षा के लिए खेत पर रहता ही है, वही अपने पशुधन को रख सकता है। प्राय: बड़े गांवों में खेतों पर पशु रखने और कुछ परिवार के लोगों के रहने का कहीं कहीं प्रचलन होने लगा है जो वास्तव में सराहनीय है।

गांव के पर्यावरण को गांव की कूड़ियाँ बहुत खराब करती हैं। ये प्राय: गांव के चारों ओर होती हैं जिस से गांव की शोभा भी बिगड़ती है और पर्यावरण भी अशुद्ध होता है। गांव के बच्चे और महिलाएं प्राय: शौच निवृत के लिये भी इन कूड़ियों और गांव के इर्दगिर्द छिपने के स्थान ढूंढती है। प्रात:काल गांव के आस पास आप नाक पर कपड़ा रखे बिना नहीं गुजर सकते। यह एक सामाजिक और व्यक्तिगत समस्या होते हुए भी पर्यावरण की समस्या है।

कुछ गांवों में सार्वजनिक शौचालय, विकास विभाग ने बनवाए थे लेकिन वे इसलिए सफल नहीं रहे कि उन की सफाई और जल सप्लाई की समस्या थी। इसलिये गांवो में प्रत्येक घर के साथ सुविधा शौचालय, विकास व स्वास्थ्य विभाग मिल कर बनाएं। दूसरे यदि कोई ग्रामीण शौच निवृत होने जाए तो अपने खेतों में जाए और मल पर मिट्टी अवश्य डाले। चीन के प्रसिद्ध दार्शनिक कन्फ्यूशस एवं लाओत्से ने चीन के ग्रामीण लोगों को उपदेश दिया था यदि तुम मेरी अन्य बातों को नहीं मानते तो एक बात जरूर मान लो गांव के चारों ओर शौच निवृत होने मत जाओ, इससे गांव का वातावरण बिगड़ता है। एक खुरपी साथ रखो छः इंच का गडढा खोदो और शौचादि से निवृत होकर मिट्टी से गड्ढे को ढक दो। इस तरह पर्यावरण भी शुद्ध रहेगा और खेत को खाद भी मिलेगा।

गांव के पर्यावरण को शुद्ध रखने के लिए गांव के कुएं तथा वाटर सप्लाई के टैप से फैलने वाली गंदगी की ओर ध्यान देना होगा। टैप से टूटी को प्रायः बच्चे निकाल लेते हैं अथवा तोड़ देते हैं। टैप में जब पानी आता है तो चलता ही रहता है। इससे गांव की गली कीचड़ से लथपथ रहती है। बरसात के दिनों में गांव की गली से आना जाना बीमार, बूढ़े व्यक्ति के लिए और भी कठिन हो जाता है। जहां वाटर सप्लाई नहीं है वहां हैण्डपम्प तथा परंपरागत कुएं पानी के स्त्रोत व साधन हैं। इन के चारों ओर कीचड़ और गंदा पानी भरा रहता है जो मच्छर पैदा होने का केन्द्र बन जाता है। गांव की नालियां पक्की हों, उन में कुओं और हैंडपम्पों का पानी डाला जाये। कुओं के इर्दगिर्द पक्का फर्श और चबूतरा होना चाहिये। गांवों की पंचायतों और विकास विभाग को इस ओर तुरन्त ध्यान देना चाहिये।

प्रायः प्रत्येक गांव में सरकारी स्कूल है। छोटे गांव में प्राइमरी स्तर का और बड़े गांव में माध्यमिक तथा उच्च स्तर का। स्कूल की चहार दीवारी के साथ साथ कम से कम दोहरी कतार वृक्षों की लगाई जाए। तीसरे दिन विद्यार्थी बारी-२ इन वृक्षों को पानी दें। स्कूल में शौचालय की व्यवस्था प्रायः नहीं है लेकिन होनी चाहिये। स्कूल के प्रांगण में हरी घास के लॉन तथा सुगन्धित और शोभाजनक पुष्प लगाने चाहिये। गांव में लोग गर्मी के मौसम में प्रायः वृक्षों की छाया में समय गुजारते हैं। सरकार को चाहिए कि ऑल इंडिया रेडियो तथा दूरदर्शन द्वारा पर्यावरण की सुरक्षा के लिए ग्रामीण जनता को शिक्षित करे।

अब समय आ गया है गांवों में भी खेलकूद के लिए स्टेडियम बनाए जाए। इसके लिए गांव का बड़ा जोहड़ उपयुक्त हो सकता है उसमें पानी आने का स्त्रोत बन्द करके उसे स्टेडियम का रूप दिया जा सकता है। नगरपालिकाओं की भांति ग्राम पंचायतें भी कम्पनी बाग अथवा पार्कों का विकास करें। पंचायत घर के साथ ग्रामीण पुस्तकालय व वाचनालय भी बनाए जाएं। जब तक गांव में कृषि और पशु पालन का धंधा रहेगा गांव का अस्तित्व बना रहेगा लेकिन गांव के लिए अन्य नागरिक सुविधाओं की सरकार को व्यवस्था करनी चाहिये।

पर्यावरण को सुन्दर, स्वच्छ तथा हरा भरा बनाने के लिए समस्त वृक्षविहीन नंगी पहाड़ियों पर वृक्षारोपण करना होगा। पहाड़ियों को हरा भरा बनाना असम्भव कार्य नहीं है। प्रकृति का अटल नियम है जैसी जहां भूमि पानी हो, वहां पर प्राकृतिक तौर पर वैसे ही पेड़ पैदा होते हैं। कठिनाई तब होती है जब मनुष्य प्रकृति के नियम का उल्लंघन करके, अपनी

समझ से प्रकृति के विपरीत वृक्ष लगाने का अभियान चलाता है। अरावली पर्वतमाला को मैंने स्वयं पचास वर्ष पूर्व हराभरा देखा था। यहां पर पलाश (ढाक), धौक, रांझ, कीकर, छौकर आदि जाति के वृक्ष प्राकृतिक तौर पर सारी अरावली पर्वत श्रेणी पर हरी चादर की तरह आच्छादित थे। अब भी उन के अवशेष और बीज बचे हुये हैं। मेरा निश्चित मत है कि अरावली हिल्स क्षेत्र में उपरोक्त वृक्षों के बीज वर्षा होते ही हेलीकॉप्टर द्वारा वर्षा दिए जाएं या जहां सम्भव है युद्ध स्तर पर छः इंच गहरी खाईयां खुदवा कर उन में पहली वर्षा होते ही बीजारोपण कर दिया जाए। वृक्षों के कटान पर सख्त पाबन्दी लगाई जाए। केवल पुराने, सूखे और आंधी में टूटे पेड़ों को ही सरकार कटवाए और उन की जगह अन्य पेड़ लगवाए जाएं। यदि अन्य वृक्षों का बीज या पौध अरावली पर्वत श्रंखला क्षेत्र पर उगाए या लगाए जायेंगे तो धन और परिश्रम व्यर्थ खर्च होगा और परिणाम सूखा पहाड़ ही मिलेगा।

इसी प्रकार रेतीले क्षेत्रों में भी वहां पर प्राकृतिक तौर पर उगने वाले वृक्षों का ही आरोपण करना चाहिये। रेतीले क्षेत्रों में कीकर, जांट, छौकर, रांझ, काबुली कीकर, सुबबूल, खेजड़ी, फ्रास, खजूर आदि वृक्ष बिना विशेष परिश्रम के पैदा हो जाते हैं। दलदल और पानी उपलब्ध क्षेत्र में यूक्लेपटिस के वृक्ष खूब पनप सकते हैं। काबुली कीकर तो पहाड़ी, रेतीले, बंजर, कल्लर मैदानी सभी क्षेत्रों में पैदा हो जाती है। ईंधन के लिए यह वृक्ष पर्याप्त उपयोगी हो सकता है। न इसे बकरी खाती है न इसे ऊंट खाता है। केवल इन्सान कुल्हाड़ी से बचा दे। तीन वर्ष में पेड़ तैयार हो जाता है। बार बार काटते रहिये और ये फूटता रहेगा। जहां सरकार वृक्षों की सुरक्षा और वृक्षों को खाद पानी की व्यवस्था कर सकती है वहां फलदार वृक्ष, वे भी भूमि की प्रकृति के अनुकूल, लगाने चाहिए। पंचायतों को प्रोत्साहन दिया जाए कि वे पंचायत की अकृषि भूमि पर वृक्षारोपण कराएं ताकि पर्यावरण की रक्षा भी हो और ईंधन की समस्या हल हो जाए।

पर्यावरण सुधार के लिए लकड़ी का जलाना बन्द करके अन्य उपायों की ओर शीघ्रातिशीघ्र ध्यान देना होगा। विश्व की एक तिहाई आबादी भोजन बनाने के लिए लकड़ी के ईंधन पर आश्रित है। जनसंख्या बढ़ने के कारण प्रतिवर्ष जलावन की लकड़ी की मांग ३०-४० प्रतिशत बढ़ती जा रही है। निर्धन देशों में एक सौ पचास करोड़ मीटर लकड़ी का उपयोग ईंधन के लिए होता है। हमारे देश में ७.७ करोड़ टन ईंधन में २.५० करोड़ टन लकड़ी जलाई जाती है। होली के उत्सव पर ५० हजार वृक्ष निर्दयता से जला दिए जाते हैं। बदरीनाथ के कपाट खोलने के हर्षोत्सव पर एक हजार क्विन्टल लकड़ी जलाई जाती है। पैकिंग के लिए, विशेष कर सेब की पेकिंग, २० लाख टन घन फुट लकड़ी की जरूरत पड़ती है अर्थात १० हैक्टर में फैले वन की लकड़ी प्रतिवर्ष खप जाती है। अकेले बंबई नगर में शवदाह ग्रहों में एक वर्ष में ७४ लाख टन ईंधन की खपत होती है। तीन सौ सिगरेट फूंकने पर एक सम्पूर्ण वृक्ष स्वाहा हो जाता है।

पर्यावरण की सुरक्षा के लिए वनों का विकास और उनकी सुरक्षा, मानव की महत्वपूर्ण समस्या बन गई है। लकड़ी के प्रयोग के स्थान पर अन्य साधन अपनाने होंगे। इन साधनों का संक्षेप में वर्णन करना निहायत जरूरी है। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के पर्यावरण

विभाग के डा. जी.सी. पाण्डेय ने शवदाह हेतु सौर उर्जा का सुझाव दिया। डा. के.एन.खेरगामकर ने विशेष प्रकार की शव भट्टी तैयार की है जिस से अकेले बंबई नगर में एक वर्ष में ७४ लाख टन लकड़ी के ईंधन की बचत हो सकती है। ईंधन की बचत के लिए स्वीडन तथा केलीफोर्निया में अनुसन्धान जारी हैं। केलीफोर्निया की एक पैट्रोलियम कम्पनी ने शहरी कचरे से ईंधन तेल बनाया है।

स्वीडन में कचरे से ईंधन की गोलिया तैयार की गईं हैं। ईंधन की बचत के लिए व्यर्थ पदार्थों से लकड़ी का विकल्प तैयार किया जा सकता है। शिवालिक की पहाड़ियों में बसी वास्तुकार मधु सरीन जी ने एक नया चूल्हा बनाया है, जिसमें लकड़ी कम जलती है और धुआं भी कम निकलता है। सौर ऊर्जा कूकर से भी ईंधन की बचत हो सकती है। वर्ष में ८-९ महीने सूर्य की ऊर्जा उपलब्ध है। नई किस्म के चूल्हों की डिजाइन से पन्द्रह प्रतिशत ईंधन की बचत की जा सकती है। परम्परागत चूल्हों की नब्बे प्रतिशत ऊर्जा बेकार चली जाती है। गोबर गैस संयमों के प्रयोग से भी पर्याप्त ईंधन की लकड़ी की बचत हो सकती है। इमारती लकड़ी के स्थान पर लोहा इस्तेमाल किया जाए। रेल की पटरी व डिब्बों में भी लकड़ी के बजाए लोहा प्रयोग किया जाए।

पैकिंग के लिए भी लकड़ी के स्थान पर कोरूगेटेड फाइबर बोर्ड का प्रयोग किया जाए। ये सस्ते और आसान तथा मजबूत होते हैं। जम्मू में व्यर्थ पदार्थों से पैकिंग बनाने की विधि की खोज हुई है जिससे लकड़ी की बचत हो सकती है। हिमाचल में बिलासपुर में एक पायलट प्लान्ट की स्थापना भी की गई है। रूस में पत्थर को गलाकर उसके रेशों से कागज बनाया गया है। रबर व कांच से कागज बनाने के वहां प्रयोग जारी हैं। जापान और ब्राजील में गन्ने की खेई से कागज बनाया जाता है। सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री की पैकिंग पर कागज की खपत बढ़ी है जिसमें ८०० डिब्बे रोजाना बनाए जा सकते हैं। कागज की बचत की जाए। अमेरिका में प्रति व्यक्ति कागज का खर्च २५० किलो है। तमिलनाडू विश्वविद्यालय ने व्यर्थ पदार्थों से कागज बनाने की खोज की है। पुराने अखबारी कागजों से भी कागज बनाया जा सकता है। आसाम के कागज अनुसन्धान संस्थान ने इस संबंध में खोज की है। बीड़ी, सिगरेट, कागज, रेयान आदि का उपयोग कम करके लकड़ी की बचत की जा सकती है। तम्बाकू पकाने के लिए सौर उर्जा का प्रयोग किया जाए। प्रो. राव का मत है कि जहां तम्बाकू का उत्पादन है, वहां सौर ऊर्जा की काफी उपलब्धता है।

हिमाचल प्रदेश में एक लाख हरे वृक्ष प्रति वर्ष सेब की पेटियों के लिए काटे जाते हैं। सारे उत्तर भारत का पानी का भंडार हिमालय पर्वत है। उत्तर भारत की सारी नदियां हिमालय पर्वत क्षेत्र से निकली हैं। इन नदियां में बारह महीने पानी इसलिये उपलब्ध रहता है कि हिमालय पर्वत पर सर्दी के मौसम में भारी हिमपात होता रहता है। गर्मी के मौसम में यही बर्फ पिघल कर नदियों द्वारा मैदानी क्षेत्रों को सिंचाई और विद्युत परियोजनाओं के लिये जल उपलब्ध कराता है। हिमालय पर वृक्षों के अन्धाधुन्ध कटान ने नदियों के बहाव में अस्थिरता व बहने वाली गाद ने जल विद्युत योजनाओं, बांध जलाशयों के लिये प्रश्न चिन्ह लगा दिया है।

हिमालय की समस्या क़ी गंभीरता को देखते हुए प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने ३ जून १९८३ के पत्र द्वारा, उत्तर प्रदेश सरकार को यह आदेश भिजवाया था कि, "शिवालिक की तलहटी से ऊपर के सब वनों का व्यापारिक दोहन पन्द्रह वर्षों के लिए बन्द किया जाये और इन से निकलने वाली सूखी लकड़ी स्थानीय लोगों के उपयोग के लिए दी जाये जिससे उन्हें कठिनाई न हो।"

यदि कोई व्यक्ति स्वस्थ माता पिता की स्वस्थ और निरोग सन्तान है, भोज़न और व्यायाम की भी उस की नियमित और सीमित तथा संतुलित आदत और व्यवस्था है। जीवन भी उस का संयमित है। जीवन की सभी सुख सुविधाएं उसे उपलब्ध है लेकिन उस का पर्यावरण गंदा है। उस के घर के समीप गंदे पानी का जोहड़ है जिससे गंदी बदबू आती रहती है, जिसमें सारे गांव का गंदा प्रदूषित पानी व मल आता रहता है। ऐसे पर्यावरण में वह व्यक्ति स्वस्थ नहीं रह सकता। इसी प्रकार गैसयुक्त और रबर उद्योग, कोयला उद्योग में कार्य करने वाले मजदूर कभी भी दीर्घायु और स्वस्थ नहीं रह सकते। पर्यावरण, स्वास्थ्य के लिए स्वच्छ जल, वायु, पृथ्वी, आकाश और प्राण वायु प्रदान कराता है। इस विषय में जितना भी हमने पाठकों के लिए लिखा है, वह बहुत कम है, संकेत मात्र है।

पर्यावरण और प्रशासन

पर्यावरण की सुरक्षा और सुधार में हुई उपेक्षा के लिये जहां समाज उत्तरदायी है वहां सरकार एवं प्रशासन कहीं अधिक उत्तरदायी है। प्रशासन के पास पर्यावरण की देखभाल और सुधार के लिये साधन है, सरकारी तंत्र है अर्थात विशेषज्ञों की टीम है। जिस काम को अकेला नागरिक नहीं कर सकता, उस काम को समाज बड़ी सुविधापूवक कर सकता है, और जिस काम को समाज भी करने में असमर्थ है उसे सरकार कर सकती है और वह करना चाहिये। पर्यावरण की सुरक्षा, राष्ट्रीय सुरक्षा और शान्ति की तरह सरकार को करनी चाहिये। आज नहीं तो कल वह दिन दूर नहीं जब लोकतंत्रीय सरकार पर्यावरण सुधार और सुरक्षा के सवाल को चुनावी मुद्दे का आधार मानेगी। पर्यावरण यदि शुद्ध और पवित्र है तो राष्ट्र का स्वास्थ्य और मानवी शक्ति राष्ट्र को सबल और सशक्त बना कर दुनिया की प्रगति दौड़ में भागीदार बना कर नया कीर्तिमान स्थापित करेगी।

मेरा स्पष्ट मत है कि पर्यावरण को जितनी हानि सरकार और उसकी मशीनरी ने पहुंचायी है उतनी किसी ने भी नहीं। सरकार ने विकास के नाम पर विनाश अधिक किया है। भारत सरकार ने सन् १९५२ में वन नीति ३३% तय की थी। अर्थात भूमि के ३३% भूभाग पर वन सुरक्षित रखे जायेंगे। इस प्रकार एक तिहाई भूमि, वृक्षों की हरी चादर से ढकी और सजी रहेगी। पहाड़ों पर तो कम से कम ६०% साठ प्रतिशत वृक्ष एवं वन होने चाहिए और मैदानों में कम से कम २०% बीस प्रतिशत वन होने चाहिये। सन् १९८४ के आंकड़ों के मुताबिक अब १४% वन रह गये हैं। गत ३५ वर्षों में ४२ लाख हैक्टर वन क्षेत्र लुप्त हो गया है। यह सब वनों का विनाश किसने किया है। सरकार और सरकारी मशीनरी ने विकास के नाम पर

वनों का विनाश किया है। पर्यावरण के आधार स्तम्भ वनों के इस महाविनाश में ठेकेदार और विदेशी मुद्रा के लोलुप व्यापारी भी बराबर भागीदार हैं लेकिन सब से अधिख दोषी प्रशासन और सरकार है।

वन व वृक्ष हमारे प्राण दाता तथा जीवन साथी हैं। जिन देशों ने पर्यावरण के महत्व को समझा है उन्होने अपनी वन नीति भी उसी हिसाब से तय की है। हिन्द एशिया में वन भूमि ७३% और फिनलैंड में ७१% वन भूमि है। जापान में वन भूमि ६१% और सोवियत्त रूस में वन भूमि ६४% रखी गई है। वहां की सरकारें वन नीति का राष्ट्र की सुरक्षा नीति की तरह पालन करती हैं। पर्यावरण की सुरक्षा को राष्ट्रीय महत्व दिया जाता है।

भारत के चिपको आन्दोलन के नेता पं. सुन्दरलाल बहुगुणा ने वनों की रक्षा और संरक्षण के लिये सरकार और समाज का ध्यान आकर्षित किया है। भारत सरकार ने उनकी सेवाओं की कद्र करते हुए 'पद्म श्री' की उपाधि प्रदान की थी लेकिन पं. सुन्दरलाल बहुगुणा ने टिहरी गढ़वाल जिले में भागीरथी पर एशिया के सबसे ऊंचे बांध बनाने के विरोध में वह स्वीकार नहीं की। चिपको कार्य कर्ताओं का नारा है :- क्या है जंगल के उपकार ? मिट्टी, पानी और बयार, जिन्दा रहने के आधार। पर्यावरण, वनों की सुरक्षा, प्रकृति संरक्षण और प्रदूषण की रोकथाम का संक्षिप्त में संदेश उपरोक्त तीन पंक्तियों में समेट दिया है। वास्तव में वनों के अभाव में ६०० करोड़ टन उपजाऊ मिट्टी प्रतिवर्ष बह कर समुद्र में चली जाती है। हमारी नदियों का उद्गम क्षेत्र, पर्वतीय क्षेत्र है। वर्षा होते ही हमारी नदियां बावली हो जाती हैं। बाढ़ के कारण अरबों की सम्पत्ति नष्ट हो जाती है। हजारों जानें जाती हैं और उपजाऊ मिट्टी समुद्र में चली जाती है, जो वनों के अभाव के कारण होता है।

इसी प्रकार वन विनाश से जल स्रोत सूख रहे हैं। पीने और सिंचाई के साधनों का पानी सूकने लगा है। जलस्तर बहुत नीचे चला गया है। वन नदियों की मां है। दक्षिण और मध्य भारत की नदियाँ कृष्णा, कावेरी, महानदी और गोदावरी, वनों में जन्म लेकर बहती हैं। वनों के अभाव में वे भी सूख जाएंगी अथवा सरस्वती नदी की तरह लुप्त हो जाएंगी।

शुद्ध वायु के लिए, मैदानी इलाकों में पीपल और नीम के वृक्ष बहुत आवश्यक है। भारत देश में पीपल वृक्ष की पूजा किसी अंधविश्वास के कारण नहीं अपितु उस की शुद्ध वायु की प्रचुरता और उपलब्धता के आधार पर शुरू हुई थी। नीम का वृक्ष भी शुद्ध वायु का भंडार व आधार है। प्रदूषण इस से दूर रहता है। एशियाड के दिनों में दिल्ली से राई तक राष्ट्रीय राजमार्ग की दोनों सड़कों के मध्य नीम के वृक्ष, प्रधानमंत्री इन्दिराजी के आग्रह पर लगाए गए थे। वे पर्यावरण प्रेमी और वृक्षों के प्रति बहुत संवेदनशील थीं। पर्वतीय क्षेत्र में गुलाब की झाड़ियां और बांज (ओक) का पेड़ सब से अधिक उपयोगी माना जाता है। समुद्र तट पर नारियल और पहाड़ी क्षेत्र में काष्ट फल, बादाम, अखरोट, पांगर आदि फल व मेवा के वृक्ष लगाने उपयोगी होते हैं।

जापान में पर्यावरण के प्रति कितनी सजगता एवं जागरूकता पाई जाती है, इस का ज्वलंत प्रतीक है, वहां युवकों द्वारा जन आन्दोलन। उन का उद्घोष है, "हमें स्वच्छ वायु चाहिये।" क्या हमारे देश के युवकों ने कभी ऐसा जीवन का आधार-आन्दोलन चलाने का

स्वप्न तक लिया ? कदापि नहीं। नौकरियों के लिए आत्मदाह तक करेंगे लेकिन शुद्ध वायु के लिए कभी सोचेंगे भी नहीं। जब जीवन ही नहीं रहेगा तब नौकरी को कौन करेगा ? वन आक्सीजन के भंडार हैं। वनों के अभाव में शुद्ध वायु, शुद्ध जल, शुद्ध व उपजाऊ मिट्टी मानव जाति के अस्तित्व व जीवन के लिये दुर्लभ हो जायेंगे। वनों का विनाश, मानव जाति की जीवनदायिनी शुद्ध वायु, शुद्ध जल, शुद्ध सात्विक फल व मेवा, औषधियां सभी का विनाश हो जायेगा। वन तो शंकर भगवान की तरह हैं जो स्वयं जहर पीकर मानव जाति को अमृत प्रदान करते हैं। इसलिए वनों के विनाश को रोकना और वनों का विकास व संरक्षण करना, मानव जाति का ही नहीं, प्राणी मात्र का कल्याण है।

टिहरी गढ़वाल के पुज्जयार गांव के ६१ वर्षीय किसान श्री विश्वेश्वर दत्त सकलानी ने अपने गांव में पच्चीस हजार वृक्षों का वन लगाकर सामाजिक वानिकी के लिये नया कीर्तिमान स्थापित किया। उड़ीसा के पुरी जिले के नया गढ़ क्षेत्र के केशरपुर ग्राम समूह में नंगी पहाड़ियों पर वृक्ष लगा कर हरियाली से ढक दिया है। इस तरह के किसानों द्वारा वन संरक्षण और वनारोपण के लिए किए गए कीर्तिमानों की राष्ट्रीय स्तर पर सराहना होनी चाहिये, और उन्हें भारत रत्न की सर्वश्रेष्ठ उपाधि से विभूषित करना चाहिये। वास्तव में ये किसान मानवता के संरक्षक हैं। हरियाणा प्रदेश के फरीदाबाद जिले की पाली पंचायत ने लगभग एक किलोमीटर लंबी और आधा किलोमीटर चौड़ी अरावली पहाड़ी की दो पहाड़ियों के मध्य भूभाग पर वन लगाया हुआ है जिसमें नमूने के तौर पर गूगल का वृक्ष भी है। हजारों वृक्ष इस वनखण्ड में लगे हुए हैं। पंचायत इस की देखभाल और निगरानी करती है। वृक्षों के वृद्ध हो जाने पर सार्वजनिक नीलामी द्वारा वृक्षों को विकास कार्यों के लिए वह बेचती है और उनके स्थान पर अन्य वृक्षों का आरोपण करा दिया जाता है।

हिमालय क्षेत्र में, वनों के विनाश के कारण, भूस्खलन और भूक्षरण से उपजाऊ भूमि, शीत मरूस्थल में बदल जाती है। अब धुआं फैलाने वाली सभ्यता का विकास हो रहा है। आगामी ५० वर्षों में कार्बनडाइआक्साइड का परिमाण आज से दुगुना हो जायेगा। फलतः वहां का तापमान ५-६ सेंटीग्रेड अधिक बढ़ जायेगा। तापमान के बढ़ जाने से हिमालय की बर्फ शीघ्र पिघलने से मानव जाति के जीवनदायिनी शुद्ध जल देने के स्थायी साधन कम हो जायेंगे। स्मरण रहे उत्तर भारत का पानी का भंडार हिमालय है। हिमालय पर बर्फ देर तक पड़ते रहने और देर से गर्मी शुरू होने से उत्तरभारत की सभी नदियाँ बारह महीने जल से भरी रहती हैं, बरसाती नदियों की भांति सूखती नहीं हैं।

वनों के विनाश के कारण मौसम खुश्क रहने लगा है। कभी कभी तो यह भ्रम भी होने लगता है भारत का भूखंड कहीं अपनी जगह से हट कर अन्य स्थान पर टिक गया हो जिस के कारण यहां की ऋतुएँ पहले की भांति स्थिर नहीं है। वर्षा या तो बहुत कम होने लगी है या वर्षा की भरमार होती है नदियों में भयंकर बाढ़ आती है। समुद्री तटों पर तूफान और चक्रवातों का चक्र कहीं न कहीं अपना प्रकोप अवश्य दिखाता है। पश्चिमी घाटों में पहले वर्षा साल में लगभग ६ महीने चला करती थी अब वहां वर्षा साल में तीन महीने ही हो पाती है। उत्तरी किनारा जिले के सिरसी ताल्लुके में सुपारी, काली मिर्च और इलायची की पैदावार

घटने लगी है। सुपारी के लिये हरी पत्ती का खाद (मत्ती पेड़ की) का अभाव हो गया है। कर्नाटक के सिरसी ताल्लुके के डोनों वन में गछाले के एक वृक्ष में ८०० शहद के छत्ते लगते हैं जो औषधि और सर्वोत्तम ऊर्जा का साधन है। मौसम खुश्क रहने से ये शहद कहाँ उपलब्ध होगा ? वनों के महत्व को सरकार और प्रशासन क्यों नहीं समझता। वे कागजों पर वन लगाकर कब तक देश को अंधा बना कर रख सकते हैं।

वनों पर मनुष्य का सीधा प्रहार लगभग १० हजार वर्ष पूर्व हुआ। खेती का प्रचलन हुआ। वृक्ष केवल पहाड़ी ढलानों पर रह गए थे। यातायात, रेलवेलाइन, राजमार्ग, शहरी विकास और नए शहरों का निर्माण वनों का महान शत्रु बना। अरूणाचल प्रदेश में 'बामडीला' बसाने के लिए वन काटे गए और कई जगह वन काट कर सेब के बागीचे लगाए गए। हिमाचल प्रदेश में प्रतिवर्ष एक लाख हरे पेड़, सेब की पेटियों के लिए काटे जाते हैं। चीड़ के पेड़ का लीसा से बिरोजा उद्योग उत्तराखण्ड में फैला। सोने के अंडे देने वाली मुर्गी को काट डाला गया। किसी कवि कथन यहां कितना सटीक लगता है, "रजाई को लगा आग, लगे हैं हाथ सेंकने, ऐसे अहमक भी क्या, कहीं देखे हैं जहान में ?" हाथ सेंकने के लिए रजाई को जलाना कहां की बुद्धिमत्ता है जो रजाई सारे शरीर को गर्मी पहुंचाती थी उसे नासमझी के कारण जलाकर हाथों की ठंड भगाई गई।

सरकारी भाषा में वनों को हरा सोना कहा जाता है। वास्तव में वन और वनउत्पाद सोने से कहीं अधिक उपयोगी हैं। यह अलग बात है सोना अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त प्रचलित मुद्रा व धरोहर है। लेकिन कलकत्ता में अंग्रेजी राज में जब अकाल पड़ा था तब सोने के बिस्कुट और चान्दी की सिल्लियाँ मनुष्य की भूख नहीं मिटा सकीं और इन्सान भूखा तड़प तड़प कर मर गया था। फलदार और फलियों वाले वृक्ष, अन्न समस्या का समाधान हैं। काष्टफल, बादाम, अखरोट, पांगर उत्तम मेवा हैं और इन्सान की पौष्टिक खुराक हैं। पशु और पक्षियां के वन घर हैं। उन का जीवन तभी संभव है जब वन सुरक्षित रहें। जलावन के लिये ईंधन, इमारती लकड़ी पत्तियों की खाद, चारे के लिये घास, जड़ी बूटी और जीवनदायिनी औषधियां रेशेवाले वृक्ष शहतूत जिन पर रेशमी कपड़े के लिए कीड़े पाले जाते हैं ये सब उपकार मानव जाति पर वनों के हैं। हम कितने कृतघ्न हैं, वनों के उपकार को नहीं समझते, और उन्हें छोटे लोभ और लालच के लिये निर्दयी होकर काटे चले जा रहे हैं।

अमेरिका के वन विशेषज्ञ अपने उद्योग-व्यापार प्रधान देश को पहाड़ी शंकुधारी वनों को कतई न छेड़ने की सलाह दे रहे हैं। पता नहीं हमारे देश के वन-विशेषज्ञों और सरकारी नेताओं को वनों की सुरक्षा की समझ कब आयेगी ? क्या जब हिमालय पर्वत का आखिरी वृक्ष भी काट दिया जायेगा ? कहीं कागज उद्योग के नाम पर वन-विनाश लीला हो रही है जैसे दक्षिण भारत के बांस के वनों और लीसा दोहन से पश्चिमी हिमालय के चीड़ के वनों की तबाही हो रही है। प्राकृतिक वनों को नष्ट कर के, व्यापारिक वनों का रोपण, वन सम्पदा का व्यापार, वन विकास निगम के रूप में विख्यात हो चुके हैं। वनवासी एक-२ लकड़ी के टुकड़े के लिए बदनाम हैं और वास्तविक वनप्रेमी होते हुए भी जलावन की लकड़ी तक के लिए मोहताज हैं। चिपको आन्दोलन वन प्रेमी और पर्यावरण प्रेमियों ने वन और वृक्षों की

सुरक्षा और बचाव के लिए शुरू किया था। एक-२ पुरूष और महिला कार्यकर्ता एक-२ वृक्ष के चारों ओर माला की तरह चिपक गए थे, पहले हमारा वध करो तब वृक्ष के शरीर पर कुल्हाड़ी का प्रहार होगा, इसीलिए इस जन आन्दोलन का नाम चिपको आन्दोलन पड़ा। यह आन्दोलन सरकार और व्यापारियों को रास नहीं आया लेकिन चिपको कार्यकर्ता और कार्यकर्त्ता निराश नहीं हुए। अभी भी प्रसिद्ध गांधीवादी नेता बाबा आमटे और मेधा पाटकर के नेतृत्व में लोग नर्मदा परियोजना के विनाश से बचाने के लिये जुटे हुए हैं।

वनों की विनाश लीला रूकने के आसार भी नज़र नहीं आते। मनुष्य की ललचाई हुई गिद्ध दृष्टि वनों से लोभ की इच्छा पूर्ति के लिए जुट गई है। इन्सान की इच्छाएं चौरासी लाख योनियों के भोग के पश्चात भी पूरी नहीं होती, यह कुचक्र चलता ही रहता है। दार्जिलिंग के प्राकृतिक वनों को उजाड़ कर जापानी चीड़ के वृक्ष लगाये गए, त्रिपुरा के प्राकृतिक वनों को उजाड़ कर रबर तो कहीं कहवा के वृक्षों का रोपण किया जा रहा है। यूक्लेपटिस के वृक्षों का रोपण किया जा रहा है। यूक्लेपटिस के वृक्षों का आरोपण अंधाधुंध किया जाता रहा है। आज गेहूँ के खेतों में यही वृक्ष दिखाई पड़ रहे हैं। ये वृक्ष पानी अधिक चाहता है। मद्रास के किसानों को जब यह तथ्य पता लगा तो उन्होने लाखों यूक्लेपटिस के पौधे अपने खेतों से उखाड़ कर फेंक दिये। क्या कृषि विशेषज्ञ और वन विशेषज्ञ इतना भी व्यावहारिक ज्ञान नहीं रखते कि किस क्षेत्र में कैसे वृक्ष लगाने की वहां के किसानों को प्रेरणा दी जाए। मद्रास के किसानों का क्या दोष था ? यदि दोषी हैं तो सरकार के लाड़ले कृषि व वन विशेषज्ञ जिन्होने किसानों को उचित समय पर उचित परामर्श न देकर अनुपयुक्त वृक्षों का रोपण कराया था। ये वृक्ष अधिक पानी वाले क्षेत्र अथवा दलदली भूमि में लगवाने से लाभ ही लाभ था। मद्रास के किसानों ने अपनी भूमि के जलस्तर को गिरने से बचाने के लिये न चाहते हुए भी कठोर कदम उठाया था, जिसे प्रकृति प्रेमी उचित ही ठहरायेंगे।

वनों में खनन कार्य ने भी पर्यावरण को बेहद हानि पहुंचाई है। वन के पशु पक्षी शोर शराबे और वायु प्रदूषण के कारण वहां से पलायन कर गए। खनन के लिए बेशुमार प्राकृतिक वन के वृक्ष काटे गए। वनों में खनन कार्य की किसने स्वीकृति दी ? वन प्रशासन और सरकार ने स्वीकृति दी। क्या ये पर्यावरण के साथ खिलवाड़ नहीं है ? अब और एक नया गंदा कार्य पर्यावरण को खराब करने के लिये शुरू हो गया है जिस के लिए भी सरकार आंखे मूंद कर बैठी हुई है। कल कारखानों का गंदा पानी प्राय: नालों के द्वारा नदियों और नहरों में डाला जाता रहा है। अब उद्योग नगरों का यह गंदा पानी पहाड़ों और चन्द्रनगर, गढ़ चिमरौली जैसे सघन वनक्षेत्र की ओर मोड़ दिया गया है। क्या ये वन स्वच्छ वायु, स्वच्छ जल और स्वच्छ मिट्टी के आधार रह जायेंगे ? क्या वन्य पशु पक्षियों का जीवन नारकीय नहीं बन जायेगा ? क्या ये सघन वन क्षेत्र जहरीले पानी से धीरे-२ नष्ट नहीं हो जायेंगे ? क्या उत्तर प्रदेश सरकार के वन विभाग के अधिकारी और पर्यावरण का ढोल पीटनेवाले मंत्री अंधे हैं ? यदि नहीं तो फिर ये सब क्यों ?

वन प्रबंध में वनवासियों की साझेदारी होनी चाहिये। उन की आवश्यकताओं की पूर्ति को प्राथमिकता देनी चाहिये। सरकार ने वन अधिकारियों के हाथ में बंदूक देकर इस बात

का सबूत दे दिया है कि सरकार जन विरोधी है और वनवासी चोर डाकू हैं। वनवासी तो अपने भरण पोषण तक की वस्तुयें वन से प्राप्त करते हैं जबकि सरकार के लाड़ले वन अधिकारी व्यापारियों से सांठ गाठ करके भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे रहे हैं।

वन प्रबंधकों के भ्रष्टाचार की जांच के लिये प्रत्येक प्रदेश में एक एजेंसी होनी चाहिये नहीं तो स्वच्छंद हो कर वन संपदा की लूट खसोट वन के रक्षक ही करते रहेंगे। जब बाड़ ही खेत को खा रही हो तब कोई क्या करे ?

हमारे देश में उत्तर प्रदेश के टिहरी गढ़वाल जिले में 'भागीरथी' पर एशिया का सबसे ऊंचा बांध बन रहा है। बांध निर्माण के विरोध के लिये सर्वदलीय बांध विरोधी संघर्ष समिति बनी। जन आन्दोलन बन गया। चिपको कार्यकर्ता और कार्यकर्त्री तथा समिति के नेता और आम लोग गिरफ्तार किए गए। सशस्त्र पुलिस के पहरे में निर्माण कार्य शुरू हुआ। संसद के समक्ष आन्दोलनकर्ताओं ने अपना आवेदन प्रस्तुत किया। फलस्वरूप सन् १९६० में एक समिति, पर्यावरणीय पहलुओं की जांच के लिए गठित की गई। इस समिति की रिपोर्ट लापता है। बांध की मियाद ५० वर्ष होगी। यह बांध सन् १९९३ में २०० करोड़ की लागत से बनता और अब यह १२०० करोड़ की लागत से बनेगा। वर्तमान प्रगति से स्पष्ट है इस शताब्दि में यह बांध बन ही नहीं सकता। बांध के निर्माण स्थल पर, टिहरी के संगम पर, नदी का तल गाद से ५ मीटर ऊंचा हो गया है।

इसी प्रकार महाराष्ट्र के वन प्रधान क्षेत्र गढ़ चिरौली में ९ अप्रैल १९८४ को आदिवासियों ने प्रदर्शन किया। इस क्षेत्र में इन्द्रावती और गोदावरी पर भोलापट्टनम और इंचमपल्ली पर बनने वाले दो विशाल बांधो से ४०,००० हजार आदिवासी प्रभावित होंगे। इसमें एक लाख एकड़ का सघन वन क्षेत्र भी है। पर्यावरण संबंधी समस्या का अध्ययन किये बिना जंगल काटने शुरू कर दिये गये। बाबा साहब आम्टे जैसे विश्वविख्यात गांधी वादी समाजसेवी नेता ने कहा था, "हम अपने वनों के बचाने के लिये मानव हाथों की जंजीर बनायेंगे।" श्रीमती इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री के निर्देश पर यह विनाश लीला रूकी और इन्दिरा जी ने बाबा आम्टे के सुझाव को पसंद किया कि छोटे -२ बांध बनाएं जाएं। पर्यावरण और प्रकृति, संरक्षण की योजना बनाते समय सदैव ध्यान रखा जाना चाहिये। वनवासियों की कठिनाईयें और उनकी आवश्यकताओं को प्राथमिकता दी जाए।

जहां कहीं भी विशाल बांध निर्माण योजना बनी है, उनका निर्माण कार्य शुरू हुआ है वहां इन बांधों का घोर विरोध हुआ है। पर्यावरण और प्रकृति संरक्षण के प्रति जागरूकता और संवेदनशीलता जनता जनार्दन के मस्तिष्क में घर कर रही है। इन बांधों का बेहिसाब व्यय और निर्माण में समय सीमा पार करने का समय और इन के समीपस्थ बसने वाले आदिवासी, वनवासी तथा ग्रामीण लोगों के भविष्य में पैदा होने वाली कठिनाई भी इन विशालकाय और बहुत ऊंचे बांधों के निर्माणं को उचित नहीं ठहरातीं। राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से भी ऐसे बांध बहुत खतरनाक हो सकते हैं। सरकारें बिजली उत्पादन और सिंचाई का प्रलोभन जता कर बड़े बांधों का निर्माण कराना चाहती हैं।

गुजरात और मध्यप्रदेश दोनों प्रदेशों की जीवन रेखा, नर्मदा परियोजना एवं सरदार

सरोवर बांध, का घोर विरोध बाबा आम्टे के नेतृत्व में गत वर्ष से हो रहा है। दोनों प्रादेशिक सरकारें इसे अपने सम्मान का प्रश्न बनाकर सत्याग्रहियों की बात नहीं मान रहीं। सत्याग्रही भी अड़े हुये हैं। गुजरात के पूर्व मुख्यमंत्री व वर्तमान नर्मदा प्रोजेक्ट मंत्री श्री बाबूभाई पटेल बड़े व्यावहारिक और संन्तुलित विचारधारा के धनी हैं। साथ ही गांधीजी और सरदार पटेल के अनुयायी हैं। उन्होने बाबा आम्टे से इस संबंध में मिलकर विचारविमर्श भी किया है मगर अभी तक सत्याग्रही वहां पर डेरा डाले हुये हैं। इससे पूर्व बिहार के कोमल बांध का निर्माण भी सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर रूका था।

स्विटजरलैंड जैसे देश में जनमत संग्रह का संवैधानिक अधिकार है। वहां बांसले के बिजली तापघर पर जनमत संग्रह कराया गया था, जिसका प्रजा विरोध कर रही थी। लोकतंत्र में ऐसी समस्याओं का जनमत संग्रह करा के फैसला कर देना चाहिये ताकि जनभावनाएं कुंठित न हों।

मेरा निश्चित मत है कि छोटे छोटे बांध प्रत्येक दृष्टि से बड़े बांधों की अपेक्षा कहीं अधिक उपयोगी साबित होंगे। पहली बात तो छोटे बांधों का निर्माण शीघ्र हो सकता है और उन का लाभ भी शीघ्र मिलना शुरू हो जाता है। दूसरी बात छोटे बांधों पर लागत भी कम आयेगी और धांधलेबाजी तथा भ्रष्टाचार की गुंजायिश कम होगी। तीसरे छोटे बांधों का डूब क्षेत्र सीमित होगा इसलिये सीमित भूमि और वनों का ही नुकसान होगा। इन छोटे बांधों के आस पास वृक्षारोपण करके वनों का अभाव पूरा किया जा सकेगा। चौथे, इन के टूटने और तोड़े जाने पर सीमित ही हानि होगी और शीघ्र नियंत्रण में आ सकते हैं। जब कि पंजाब के भाखड़ा बांध को यदि कोई सिरफिरा व्यक्ति उड़ा दे तो २२ फुट ऊंची पानी की दीवार दिल्ली तक टक्कर मार सकती है। छोटे बांध से राष्ट्र व राज्य सुरक्षा की भयंकर समस्या पैदा नहीं होती। अलग अलग छोटे बांध बनाने से पर्यावरण की समस्या भी पैदा नहीं होगी बल्कि पर्यावरण में सुधार होगा।

मैने नासिक (महाराष्ट्र) जिले में एक बांध को देखा जिसे गंगापुर बांध कहा जाता है। वह बांध पत्थर या ईंटों या कंकरीट से नहीं बनाया गया है अपितु वह उस क्षेत्र की स्थानीय मिट्टी से बना कर, पानी की तरफ से टक्कर को बचाने और कटाव रोकने के लिये पत्थर की पिचिंग मिट्टी के बांध के साथ लगा दी गई है। आश्चर्य की बात यह है कि इस बांध से सीपेज (रिसाव) की समस्या बिल्कुल नहीं है जब कि पक्के पत्थर के बांधों से सीपेज होता रहता है। बांध विशेषज्ञों को ऐसे बांध स्वयं जाकर देखने चाहियें और व्यावहारिक दृष्टिकोण अपना कर बांध निर्माण का बेपनाह अपव्यय रोकना चाहिये। सरकार और राष्ट्र का दुर्भाग्य है कि हमारे विशेषज्ञ व्यावहारिक ज्ञान से शून्य हैं और उन्हें जनता की कठिनाईयों से सहानुभूति भी नहीं है। देश भक्ति का तो दिवाला ही निकला पड़ा है।

दक्षिण कोरिया पर्यावरण विशेषज्ञों की रिपोर्ट के कुछ अंशों का सार नई दिल्ली से प्रकाशित नवभारत टाइम्स के दिनांक १६ जनवरी ९१ के अनुसार खाड़ी युद्ध से पर्यावरण विनाश के भावी खतरे से सचेत कराने के लिये प्रकाशित हुआ था जिसे यहां लिखने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूँ। इस रिपोर्ट के अनुसार वायुमंडल में लाखोंटन धूल कार्बन

डाईआक्साइड तथा सल्फर डॉईऑक्साइड जमा हो जायेगा। सल्फर डाई आक्साइड तो चार दिन के अंदर लुप्त हो जाता है लेकिन कार्बन डायोक्साइड वायुमंडल में १०० वर्ष तक मौजूद रह सकता है। जिससे जलवायु में व्यापक परिवर्तन होने की सम्भावना से इंकार नहीं किया जा सकता। मौसमी हवाएं १० दिन में कोरियाई प्राय:द्वीप तक प्रदूषक तत्वों को पहुंचा सकती हैं। कोरियाई प्रायद्वीप और पश्चिमी एशिया के बीच की दूरी पांच हजार किलोमीटर है। यदि लड़ाई के दौरान, अगर एक माह लड़ाई चले, (जबकि खाड़ी युद्ध डेढ़ माह चला) तो इराक, कुवैत और सऊदी अरब के ३० अरब बैरल तेल के भंडार के जल जाने पर वायुमंडल में करीब १८ लाख टन कॉर्बनडायोक्साइड, ४ करोड़ टन सल्फर डायोक्साइड तथा डेढ़ लाख टन धूल जमा हो जाएगी।

ये प्रदूषक तत्व वायुमंडल की ऊपरी सतह पर पहुंच कर सूर्य की किरणों को अवरूद्ध कर सकते हैं। जिससे तापमान ०.५ डिग्री सेल्सियस की कमी आ सकती है। खाड़ी युद्ध का तात्कालिक प्रभाव तेजाबी वर्षा के रूप में सामने आ सकता है। थाईलैंड, फिलिप्पीन और इंडोनेशिया जैसे देश सब से पहले प्रभावित होंगे। पर्यावरण सुरक्षा वास्तव में सार्वभौमिक तथा अंतर्राष्ट्रीय समस्या है। सभी राष्ट्रों, सभी प्रदेशों, सभी स्थानीय नगरपालिकों, सभी कृषि व वन विशेषज्ञ, सभी पर्यावरण सुरक्षा विशेषज्ञों और सारी दुनिया के प्रबुद्ध व प्रकृति संरक्षण प्रेमी नागरिकों को पर्यावरण सुरक्षा व सुधार के महत्व को स्वीकार करके प्रकृति संरक्षण करने में जुट जाना होगा। तभी मानव जाति का कल्याण होगा अन्यथा नहीं।

खाड़ी युद्ध समाप्त हो चुका है लेकिन इसकी बर्बादी अभी भी जारी है। कुवैत में प्राय: दिन में भी अंधेरा छाया रहता है। तापमान बहुत गिर गया है। कुवैत के ९५० तेल के कुओं में ६०० कुएं अभी भी जल रहे हैं। कुवैत जो कभी सारी दुनिया में तेल का सबसे बड़ा निर्यातक देश था, कुओं में लगी आग के कारण अब तेल का आयात करने के लिये मजबूर हो जायेगा। खाड़ी युद्ध के कारण पर्यावरण को बहुत क्षति पहुंची है। कुवैत में भरी दोपहरी में भी तापमान कभी ११ डिग्री सैल्सियस से अधिक नहीं होता जो कि लोगों को ठंड से जमा देने के लिये पर्याप्त है। विषैली गैस की गंध ३०० मील की परिधि में फैली हुई है। तेल के बहने के कारण संमुद्रका जल भी जहरीला हो गया है और समुंद्री जीव जन्तु तड़फड़ा कर मर गए हैं। पीने के पानी का अकाल पड़ गया है।

पर्यावरण विशेषज्ञों ने चेतावनी दी है कि अन्तत: यह विषैले तत्व कृषि चक्र में शामिल होकर खेत खलिहानों में एक प्रकार की पैट्रोलियम विषाक्तता के तत्वों के रूप में शामिल हो जाएंगे। विषैले धुएं के बादलों के परिणाम स्वरूप लोगों को सांसों के रोग लग गए हैं। और बुलगेरिया से लेकर अफगानिस्तान तथा पाकिस्तान तक में तेजाबी वर्षा हो सकती है। इस प्रदूषण से सर्वाधिक क्षति ८०० किलोमीटर के दायरे में ज्यादातर ईरान और इराक के ऊपर होगी।

बगदाद में पैट्रोल के लिए लाइनें लगी रहती हैं। पीने का पानी के लिये बगदाद के हस्पतालों को जोर्डन पर निर्भर रहना पड़ रहा है। संयुक्त राष्ट्र के अधिकारियों के अनुसार

ईराक में हैजा, मियादी बुखार, पेचिस तथा दिमागी झिल्लियों की सूजन के रोगों का प्रकोप होने की आशंका है।

स्वास्थ्य और सफाई

स्वास्थ्य और सफाई का घनिष्ट संबंध है। स्वच्छता के बिना न व्यक्ति स्वस्थ व निरोग रह सकता है न परिवार में सुख और शान्ति संभव है। यदि पेट के सारे रोग अच्छे भोजन और उस के पाचन के अभाव में जन्म लेते हैं तो पचास प्रतिशत रोग स्वच्छता के अभाव में बच्चों, जवान, वृद्ध और वृद्धाओं को आ घेरते हैं। छूत और संक्रमण द्वारा फैलने वाले रोगों का प्रहार तो मानव जाति पर, सफाई के अभाव में ही होता है। मलेरिया ज्वर मच्छर के द्वारा मनुष्य पर आक्रमण करता है, और मच्छर कहां और क्यों पैदा होता है ? इस पर विचार करना आवश्यक है। मच्छर रूके हुए गंदे पानी, गंदी नालियों, सीलन भरे मकानों में पाया जाता है। यदि सफाई का पूरा ध्यान रखा जाए तो मलेरिया ज्वर आने का सवाल ही पैदा नहीं होता। सरकार के सफाई विभाग द्वारा पहले दीवारों पर लिखाया जाता था मच्छर नहीं तो मलेरिया नहीं। मलेरिया मामूली रोग नहीं है। इतिहास प्रसिद्ध सुमेरियन सभ्यता का विनाश मलेरिया ज्वर के कारण हुआ था। उन दिनों इस का इलाज नहीं था। सुमेरिया में मलेरिया ज्वर फैला और इस कदर फैला कि रोगियों को संभालने वाला नहीं मिला। शहर के शहर उजड़ गए। प्लेग की महामारी भी इसी प्रकार फैलती है जिसका कारण चूहा है। प्लेग के कीटाणु चूहे द्वारा फैलते हैं। चूहा वे कीटाणु घरों में खाने पीन के पदार्थों व वस्त्रों में छोड़ जाता है। प्लेग का संक्रमण रोकना मुश्किल हो जाता है। घरों में चूहों का आवास बहुत खतरनाक है। चूहे तभी घर में पलेंगे जब उन्हें बगैर और खाने की चीजें मिलेंगी। अर्थात घर में खाद्य पदार्थों को सुरक्षित रखने की व्यवस्था नहीं है।

मच्छर और चूहों की तरह ही मक्खियां संक्रामक रोगों और घातक रोगों की जन्मदायिनी है। मक्खी को अपने अज्ञान के कारण हम कुछ नहीं समझते। वास्तव में मक्खी हमारा पास रहने वाला दुश्मन है। शहद की मक्खी सदैव फल व फूलों का रस ले कर शहद बनाती है जो मानव जाति के लिये अमृत तुल्य है। शहद उच्च कोटि का खाद्य है, उत्तम औषधि है। दूसरी मक्खी सदैव गंद पर बैठेगी और मानव जाति के लिये विष का कार्य करेगी। दक्षिण भारत में सेवारत किसी मिशनरी कार्यकर्ता ने अपना अनुभव लिखा था। एक गाँव में एक बुढ़िया को तपेदिक हो गई थी उसकी सेवा सुश्रुषा करने वाला कोई नहीं था। वह बुढ़िया अपनी चारपाई के आसपास थूकती रहती थी। मक्खियाँ भिनभिनाती रहतीं और वहां से उठकर गांव के अन्य घरों में तपेदिक के कीटाणु पहुंचाती रहतीं, जब तक वह बुढ़िया मरी मक्खियों ने उस गांव के घर घर में तपेदिक का रोग पहुंचा दिया। सारा गांव धीरे धीरे तपेदिक के रोगियों का हस्पताल बन गया, जब वह मिशनरी कार्यकर्ता उस गांव में पहुंचा और उसने खोज की, तो मूल कारण मिला तपेदिक ग्रस्त बुढ़िया के द्वारा मक्खियों ने सारे गांव को रोगी बना दिया था। भारत की स्वाधीनता के पश्चात एक सद्भावना मिशन चीन गया था इस सद्भावना मिशन के नेता पं. सुन्दरलाल ने अपने सद्भावना मिशन- संस्मरण "चाइना

-टूडे'' नामक पुस्तक में लिखे हैं। ये सब चीन में बस में सफर कर रहे थे। कहीं से एक मक्खी बस में घुस गई। कन्डक्टर ने बस रूकवा कर मक्खी को बाहर निकाल दिया। तब बस आगे बढ़ी। यह है सफाई का नमूना और गंदगी के प्रति संवेदनशीलता।

हलवाई की दुकानों पर मक्खियाँ भिनभिनाती रहती हैं। बड़े शौक से हम लोग उन्हीं दुकानों से मिठाईयां खरीद कर अपने प्रिय बच्चों को खिलाते हैं। क्या हम जानते हैं कि हम अपने बच्चों को गंदी मक्खियों के सम्पर्क में आई हुई मिठाई खिला रहे हैं। यदि हम ऐसी दुकानों से मिठाइयाँ खरीदना छोड़ दें तो वे दुकान पर सफाई रखेंगे और शीशे तथा जाली की अलमारी में मिठाईयों को रखेंगे। फूड़ प्वाजूनिंग अर्थात भोजन का जहरीला होना सफाई का अभाव मुख्य कारण है। खाने पीने की चीजों को सदैव ढक कर चूहे, छुपकली आदि से बचाकर रखना नितान्त आवश्यक है।

गर्मियों के मौसम में हैजा का प्रकोप हुए विना नहीं रहता। अस्वच्छ जल पीना, बाजार में खुले कटे फल खाना, गंदी दुकानों की मिठाईयां खाना, बासा भोजन, गर्मी के प्रकोप, से पाचन क्रिया का ठप्प हो जाना और हैजा के मरीज की उल्टी और शौच पर बैठ कर मक्खी द्वारा हैजा फैलाना, मामूली बात है। यह सब सफाई के अभाव में रोगों का प्रकोप हुए बिना नहीं रहता। इसलिए स्वास्थ्य विभाग हैजा जैसे जानलेवा रोग से बचाने के लिये हैजा की रोकथाम के टीके लगाने का अभियान चलाता है और बाजार में गली सड़ी सब्जियों और फलों को कूड़ी पर फिक्रवा देता है। सफाई अभियान तेज कर दिया जाता है। कुछ ठोस उदाहरण सफाई और स्वास्थ्य का घनिष्ठ संबंध समझाने के लिए हमने यहां उद्धृत किए।

हमारे शास्त्रकारों ने स्वच्छता को ईश्वर के बाद दूसरा स्थान दिया है। महात्मा गांधी ने गंद की नई व्याख्या समाज को दी। उन्होंने कहा, "जो वस्तु अपने स्थान पर नहीं है वह गंद है।" कूड़ा कचरा खेत के लिये उत्तम खाद है अर्थात सोना है और गांव की गली में वह गंदगी का ढेर है। भारत देश में स्नान को भी धार्मिक क्रिया का रूप दे दिया गया। बिना स्नान के भोजन करना पाप कह दिया ताकि धर्मभीरू इन्सान प्रतिदिन भोजन से पूर्व स्नान ध्यान अवश्य करें। स्वच्छता के बारे में धर्मोपदेश दिए गए हैं "जल से स्नान करने से शरीर की शुद्धि हो जाती है। सत्य बोलने और सत्य का पालन करने से मन की शुद्धि होती है। विद्या और तप से आत्मा की शुद्धि होती है। ज्ञान द्वारा बुद्धि की शुद्धि होती है।" शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा चारों की शुद्धि किस प्रकार होती है इन पंक्तियों में सारा सार समेट दिया गया है। पातंजलि के योगदर्शन महात्मा बुद्ध और महावीर भगवान ने भी आन्तरिक और बाह्य शुद्धि के बिना मोक्ष की प्राप्ति कठिन बताई है। यम, नियमों में शौच अर्थात शुद्धि को पर्याप्त महत्व दिया गया है।

पहले हम शरीर शुद्धि के विषय में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने का आग्रह करेंगे। हमारे शरीर में सबसे बड़ा भाग त्वचा अथवा चर्म का है। हमारी त्वचा रोमछिद्रों और सिर बालों से ढका हुआ है। हमारे शरीर पर अरबों रोमछिद्र हैं। त्वचा इन रोम छिद्रों के द्वारा वायु से पोषण लेती है और शरीर की गंद पसीना को बाहर निकालती है। मल, मूत्र, पसीना, थूक, बलगम ये सब हमारे शरीर से निकलने वाले गंदे तत्व हैं। त्वचा, रक्त संचार में बहुत

सहायक है। आप साफ कपड़ा पहनते हैं ऊपर से तो वह धूल गर्द से गंदा होता है लेकिन भीतर से वह कपड़ा शरीर के गंद से मैला होता है। आप देखते हैं सर्दियों में तो पसीना भी नहीं आता फिर भी कपड़ा मैला अन्दर से होता है। बगलों से जांघों के जोड़ोंकी सफाई के अभाव में चर्म रोग लग सकते हैं और पसीने से बदबू भी आने लगती हैं यह शरीर की आन्तरिक अस्वच्छता की पहचान है।

त्वचा के गुणों में संवेदनशीलता, स्पर्श और स्निग्धता मुख्य हैं। स्वस्थ त्वचा बहुत संवेदनशील होती हैं। जरा सी गंद उसे सहन नहीं हो सकती, चर्म रोग पकड़ लेती हैं अंधे स्पर्श द्वारा आंख का काम लेते हैं। स्वस्थ त्वचा में प्राकृतिक तौर पर चिकनाहट रहती है। बच्चे और वृद्ध की त्वचा का आप स्पर्श करके इस सत्य का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। बुढ़ापे में त्वचा पर झुर्रियां अथवा सलवटें पड़ जाती हैं। खाल खुश्क हो जाती है। त्वचा की कान्ति लुप्त हो जाती है। त्वचा का स्वस्थ रखना शरीर के बहुत बड़े भाग को स्वस्थ एवं सुन्दर रखना है। गांधी जी प्रतिदिन अपने शरीर की बादाम रोगन से मालिश कराते थे। वे रोम छिद्रों को साफ रखने के लिए प्रतिदिन हाथ पैरों के बालों को साफ कराते थे। ये वह फैशन के लिये नहीं अपितु त्वचा स्वच्छता स्वस्थता और स्निग्धता के लिए किया करते थे।

त्वचा की सफाई के महत्व और स्नान के वैज्ञानिक आधार को स्पष्ट करने के लिये एक विशेषज्ञ ने लिखा था कि एक स्वस्थ व्यक्ति के सारे शरीर पर गौंद के गाढ़े घोल का लेप कर दें वह व्यक्ति जितना संवेदनशील और कुशाग्र बुद्धि का होगा, उतने ही शीघ्र उस की हृदय की गतिबंद होकरउसकी मृत्यु हो जाएगी। जैसे हम नाक या मुंह द्वारा श्वास लेते हैं यदि ये दोनों मार्ग हमारे बंद कर लिए जाए और श्वास न ले पायें तो मिनटों में मृत्यु हो जायेगी। इसी प्रकार रोम छिद्रों के बन्द होने से शरीर की त्वचा पोषण नहीं लेगी। पसीना निकलेगा नहीं, रक्त संचार पर भी प्रभाव पड़ेगा और मृत्यु होना स्वाभाविक है। संक्षेप में वैज्ञानिक सार यह है जैसे श्वास क्रिया रूकने से मृत्यु हो जाती है उसी प्रकार त्वचा के सभी छिद्र बन्द कर देने से भी मृत्यु अवश्यम्भावी है। इसलिये त्वचा की सफाई सर्वप्रथम है क्योंकि यह संपूर्ण शरीर को घेरे हुए हैं।

मैं अपना एक अनुभव यहाँ लिखने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूँ। ११ फरवरी १९८४ की बात है। मेरे बांये घुटने की कटोरी (नी कैप) संगमरमर के नये फर्श पर अचानक पैर फिसल जाने से टूट गई। यह हिलेजुले नहीं और ठंड के कारण मैं स्नान नहीं कर सकता था। मैं पहनने के कपड़े दो दिन में अवश्य बदल लेता था। बीस दिन तक मैं स्नान नहीं कर सका। केवल मुंह और हाथ ही धो पाता था। बीसवे दिन मैने ऐसा अनुभव किया कि मेरा सारा शरीर पत्थर की तरह कठोर हो रहा है और मुझे जीवन बोझल सा लग रहा है। मुझे त्वचा की संवेदनशीलता की ऊपर वर्णित बात याद आ गई। मैंने डाक्टर की देख रेख में स्नान की तैयारी की। शरीर पर से मैल उतरता जाता और शरीर हल्का फूल जैसा होता जाता मन प्रसन्न हो गया वह खुशी कलम से नहीं लिखी जा सकती। उस दिन से मैने स्पंज स्नान, तीसरे दिन पूर्ण स्नान करना प्रारंभ कर दिया। वास्तव में त्वचा की सफाई का महत्व शरीर की स्वस्थता और निरोगिता के लिये कम नहीं है।

त्वचा की सफाई के लिये प्रतिदिन स्नान करना नितान्त आवश्यक है। गर्मियों में दो बार और सर्दियों में एक बार स्नान अवश्य करना चाहिये। स्नान के लिये पानी साफ शुद्ध और ताजा सर्वोत्तम है। पानी का बर्तन और स्नानघर की सफाई स्नान से पूर्व अवश्य करनी चाहिये। स्नान सदैव भोजन से पूर्व ही करना स्वास्थ्यकर है। ताजा पानी से स्नान करने के लिए सब से पहले सिर पर पानी डालना ठीक है। उस के पश्चात छाती को पानी से स्पर्श करायें। सर्दियों में हवा से बच कर और गर्मियों में खुली हवा में स्नान करना स्वास्थ्यप्रद होता है। त्वचा की सफाई के लिये उत्तम साबुन का प्रयोग करें। उत्तम साबुन की पहचान जिससे त्वचा खुश्क न हो चिकनी बनी रहे और साबुन घिसते घिसते समाप्त हो बीच में टूटे नहीं। जो साबुन टूट जाते हैं उन में साबुन बनाने के तत्वों का समिश्रण उचित अनुपात में नहीं किया गया है। मैने लगभग बीस वर्ष मैसूर सरकार का सन्दल साबुन प्रयोग किया वह मुझे ठीक लगा लेकिन सन् १९८० के पश्चात उस की गुणवत्ता कम होती गई। मैंने कर्नाटक सरकार और साबुन फैक्टरी को शिकायत लिखी लेकिन सुधार नहीं हुआ, अब मैंने इसे तिलांजलि दे दी।

सर्दियों में साबुन का प्रयोग न किया जाये तो अच्छा है इससे त्वचा में खुश्की आती है। बाजार में अच्छे साबुनों का अभाव है। गर्मियों में पसीना अधिक आता है, धूल गर्दा के कारण मैल भी शरीर पर जमता है इसलिये साबुन का प्रयोग करना ही पड़ता है। शुद्ध सरसों के तेल का हल्का सा स्पर्श करने से साबुन की खुश्की से बचा जा सकता है। कभी कभी दही से सिर धोना और स्नान करना त्वचा की स्निग्धता के लिये अच्छा है। महिलाएं रीठा, शिकाकाई, बेरी के पत्ते, बथुए का पानी, त्रिफला व आंवले के पानी से सिर के बालों को धोएं तो लाभ ही लाभ है।

बाजार में मिलने वाले शैम्पू लाभप्रद कम और हानिकर अधिक हैं। मंहगे इतने हैं कि साधारण परिवार की महिला खरीद नहीं सकती। ग्रामीण महिलाएं अब भी प्राचीन परंपरागत जड़ी बूटियों से अपने सिर के केशों को साफ और स्वस्थ रखती हैं जबकि शहरी महिलाओं का खर्चीला शैम्पू व साबुन उन के बालों को स्वस्थता प्रदान नहीं कर पाता।

हाथ पैर के नाखूनों की सफाई की उपेक्षा कभी नहीं करनी चाहिये। नेलकटर द्वारा जरा सा नाखून बढ़ते हैं साफ कर देने चाहिये। नाखूनों के द्वारा हमारी अपनी गंदगी ही हमारे भोजन द्वारा हमारे शरीर में जाती है। हम हाथ से खाना खाते हैं हाथ से खाना बनाते हैं। हाथ से शौच साफ करते हैं। इसलिए नाखूनों की सफाई सभी को रखनी चाहिये। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने रसोई के नौकरों के सिर के बाल और नाखून आदि का सफाई का विशेष उल्लेख किया है। उन के वस्त्र भी गंदे नहीं होने चाहिये। महिलाएं प्राय: बांये हाथ की अंगुली में सोने या चांदी की अंगूठी पहनती हैं। इस संबंध में हमारा सुझाव है दांये हाथ में अंगूठी पहने या शौच साफ करते समय उतार कर रख लें परन्तु अंगूठी उतारना व्यावहारिक नहीं है। अंगूठी के गुम होने की सम्भावना अधिक है। बांये में अंगूठी में गंद रह सकता है जो आटा गूंथते समय आटे में लग जायेगा। बांये हाथ से शौच साफ किया जाता है। इस सुझाव को गंभीरता से लिया जाना स्वास्थ्य के लिये निहायत जरूरी है।

आंखों को स्वस्थ और सुन्दर रखने के लिए आंखों की सफाई व देखभाल जरूरी है। मुंह में पानी भर कर प्रात: ताजा या ठण्डे जल से आंखों को छींटे मारें। स्नान करते समय मुंह में पानी भर कर सिर पर कम से कम पांच लोटा पानी डाला जाय तो इस से गले की सफाई स्वत: हो जाती है। स्नान करते समय पानी में आंखों के खोलने और दांए बांए चलाने से आंखों की सफाई भली भांति हो जाती है। आंखों में गुलाब जल की जरा सी गुलाबी फिटकरी की चास देकर, दवाई बना लो और उसे डाल लिया करो।

रात को चन्द्रमा को निहारना, आंखों का व्यायाम करना, आंखों की ज्योति के लिये लाभप्रद है। त्राटक का अभ्यास किसी योग्य योग शिक्षक से सीखें। लेट कर या चलते चलते न पढ़े। पढ़ते समय रोशनी बांयी ओर से आने दें। लाल वस्तुओं को अधिक न देखें। हरियाली व हरी वस्तुएं आंखों को प्रिय हैं। सदैव अंधेरे में गहरी नींद आती है। जिस रोगी को अनिद्रा रोग है उस की आंखों पर काली पट्टी बांधी जाती है तब उसे नींद आती है। आंखों की परीक्षा योग्य नेत्र विशेषज्ञ से कराते रहना चाहिए। कच्ची गाजर पेंडे सहित या गाजर का रस सेवन करना, आंखों के लिये बहुत लाभप्रद है। इसमें विटामिन 'ए' है। पीले रंग के सभी फल व हरी सब्जियां आंखों की ज्योति के लिये खाना लाभप्रद है। गाय का धारोष्ण दूध, दही, मक्खन, घी, पनीर सभी आंखों की ज्योति के लिए रामबाण खाद्य हैं।

प्रसिद्ध कहावत है नाक में अंगुली, कान में अंगुली मत कर, मत कर। दांत में मंजन, आंख में अंजन नित कर, नित कर। नाक भी बहुत नाजुक है। जरा सी गंद के स्पर्श से नाक में फुंसी निकल आती है। प्रकृति ने स्वच्छ वायु और वातानुकूल वायु, नाक द्वारा फेफड़ों में जाये, इसीलिए नाक में बाल उगाए हैं। ये बाल नाक में गर्द व गंद को अंदर नहीं जाने देते अधिक ठंडी व अधिक वायु को भी सम करके अन्दर प्रवेश देते हैं। कई लोग नाक के बालों को खींच कर उखाड़ते हैं यह गंदी आदत है। इससे नाक की घ्राण शक्ति (सूंघने की क्षमता) कम हो जाती है। शरीर के गोपनीय अंगों की सफाई की उपेक्षा नहीं की जा सकती। स्नान करते समय अवश्य इन की सफाई कर ही लेनी चाहिये। महिलाएं ऋतुकाल में साफ नेपकिन का प्रयोग करें अन्यथा वे श्वेत प्रदर व लाल प्रदर के रोग की शिकार हो सकती हैं, जो नारी के स्वास्थ्य का छिपा शत्रु है। इस पर भी विडम्बना यह है कि ऋतुकाल में महिलाएं इस छोटी सी सावधानी को जरूरी नहीं समझतीं। यह उनका अज्ञान नहीं तो क्या है ?

तौलिया, रूमाल, अंडरवियर, बनियान कभी भी किसी अन्य व्यक्ति का, दूसरे व्यक्ति को प्रयोग नहीं करना चाहिये। परिवार में बच्चों के तौलिये भी पृथक-२ होने चाहिये। पहचान के लिये पृथक-२ रंग अथवा डिजाइन हो सकती है, नाम भी लिखाया जा सकता है। गरीब परिवारों में तौलियों का प्रयोग प्रथम तो होता नहीं यदि है भी तो एक तौलिये से ही सब काम चला लेते हैं, यह ठीक नहीं है। बिस्तर साफ सुथरा होना चाहिये। प्रत्येक व्यक्ति का पृथक-२ बिस्तर होना चाहिये। बिछाने की चादर प्रतिदिन नहीं तो दूसरे दिन अवश्य धुलनी चाहिये। मैले कपड़े पहनने और मैले बिस्तर में सोने वाले व्यक्ति का मन भी उदास पाया जाता है। हम जब पांचवी श्रेणी में छात्रावास में रहते थे तो गुरूकुल कांगड़ी के एक डाक्टर वेदरत्न जी कुछ समय हमारे साथ छात्रावास में रहे थे। वे सदा फूल की तरह खिले रहते थे और स्वस्थ

और सुडौल थे। हमने एक दिन पूछ लिया डाक्टर साहब आप इतने प्रसन्न और स्वस्थ कैसे रहते हैं ? उन्होने मुस्करा कर कहा, "तुम भी ऐसे ही रह सकते हो।" मैं अपने सब काम स्वयं करता हूँ। प्रतिदिन अपने कपड़े धोता हूँ। रोजाना अपने हाथ के धुले खादी के कपड़े पहनता हूँ। स्वच्छ कपड़े पहनने और सफाई के नियमों के पालन से प्रत्येक व्यक्ति प्रसन्नवदन और स्वस्थ रह सकता है। छात्रावास के विद्यार्थियों ने प्रतिदिन अपने हाथ से धुले कपड़े पहनने शुरू कर दिए, वास्तव में इस अच्छी और स्वच्छ आदत का मन पर बहुत अच्छा प्रभाव रहता था।

मैंने अपने जीवन में एक ऐसा व्यक्ति देखा जो दिन में पांच छः बार कपड़े बदलता था और एक बार पहने हुए कपड़े को पुन: धुले बिना नहीं पहनता था। सप्ताह में सौ कपड़े धोबी के यहां धुलने जाया करते थे। वह अपने हाथ से कभी रूमाल भी नहीं धोते थे। ठीक इसके विपरीत एक गांधी वादी व्यक्ति देखा जो प्रतिदिन एक ही बार अपने हाथ के धुले कपड़े पहनते थे और दूसरे दिन उसे धो देते थे। मुझे सर्वसाधारण के लिये यह नियम व्यावहारिक लगा। वे वर्ष में चार पांच कुर्ते, चार धोती खरीदते थे। सूत भी प्राय: उन के घर का कता हुआ होता था। एक जोड़ा वस्त्र उन का प्रेस हुआ नील-टिनोपाल लगा हुआ तथा एक जोड़ा जूता या जूती पृथक रखे रहते थे। जिन्हें पहन कर वे जलसा अथवा महत्वपूर्ण व्यक्तियों से मिल्ने जाया करते थे। बड़ी सादगी और कम खर्च से वे बहुत साफ सुथरा रहते थे जो साधारण जनता, सार्वजनिक कार्यकर्ता और नेताओं के लिए आदर्श कहे जा सकते थे। सादगी और साफ सुथरा रहना भी एक कला है जिसका प्रत्येक को अनुकरण करना चाहिये।

पहले कपड़े रखने के लिये लोहे के बाक्स होते थे जिनमें कपड़े रखे रहते थे। अब चमड़े, रेक्सीन तथा अन्य कई प्रकार की अटैचियाँ चल पड़ी हैं जिनमें सर्दी के कपड़े अथवा धरे रहने वाले कपड़े रखे जाते हैं। वर्षा ऋतु में इन में बदबू हो जाती है, विशेष कर चमड़े व रेक्सीन की अटैचियों में। मेरा सुझाव है यदि चन्दन की लकड़ी के चार तीन- तीन इंच के टुकड़े अटैची में डाल दें तो सदैव कपड़े कीटाणु और दुर्गंध से बचे रहेंगे। कपूर की गोलियां प्रतिवर्ष डालनी पड़ती हैं। कुछ भी नहीं तो नीम के पत्ते कपड़ों के बीच में रख दें, कभी भी कपड़ों को कीटाणु नहीं लगेंगे।

रसोई और शौचालय के लिए महात्मा गांधी ने सफाई का एक ही मानक रखा था। कुछ लोग भोजनशाला की सफाई को बहुत महत्व देते हैं मगर शौचालय को नहीं। लेकिन गांधीजी ने दोनों की सफाई का महत्व कम नहीं आंका। गांधी जी कब्ज के पुराने रोगी थे। इसलिए उन्हें कमोड पर बहुत देर बैठे रहना पड़ता था। समय का सदुपयोग करने के लिए वे लैट्रिन में लिखने पढ़ने का जरूरी काम निपटा लेते थे, ऐसी व्यवस्था कराली थी। लार्ड कर्जन ने हिन्दुओं की रसोई याने पाकशास्त्र की तारीफ़ की थी, उन्होने लिखा था, "हिन्दू की रसोई, मुसलमान का खाना और ईसाई की टेबल हो तो खाने का मजा है।" गरीब से गरीब हिन्दू की रसोई में पवित्रता और सफाई का पूरा ध्यान रखा जाता है। मुसलमान के भोजन में पौष्टिक तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। ईसाई याने अंग्रेज खाना छुरी कांटे से, मेज पर रख कर, कुर्सी पर बैठ कर खाते हैं जिसे वे अधिक सभ्य, शिष्ट और सुविधाजनक मानते हैं। खाने

को हाथ से छूना भी उचित नहीं मानते। सारांश यह है रसोई घर की स्वच्छता बहुत आवश्यक है और शौच घर की सफाई से लापरवाह रहना , स्वास्थ्य के एक आवश्यक नियम का उल्लंघन करना है।

कई वर्ष से एक नया संक्रामक भयंकर, मानव जाति का महान शत्रु रोग प्रकाश में आया है जिसका नाम 'एड्स' है। यह रोग प्राकृतिक जीवन और जीवन के नियमों की अवहेलना करने से पैदा होता है। यह रोग कैंसर से भी कहीं अधिक भयंकर और घातक है। इसका अभी तक इलाज भी पूरे तौर पर नहीं हो सकता है। यह दो समलिंगी पुरूषों के अप्राकृतिक यौन मैथुन क्रिया से पैदा हुआ है। आयुर्विज्ञान के विशेषज्ञ इस रोग से मानव जाति को बचाने के लिये बहुत चिन्तित एवं भयभीत है। यह होटलों, पर्यटक स्थलों, वेश्यालयों और इसके रोगी व्यक्ति द्वारा फैलता चला जा रहा है। व्यक्तिगत सफाई और स्वच्छ प्राकृतिक यौन संबंध रखने वाले व्यक्तियों को यह रोग नहीं लग सकता फिर भी पर्यावरणीय स्वच्छता का सदैव ध्यान रखना चाहिये। विशेषकर यात्रा चाहे यात्रा वायुयान व रेल गाड़ी की ही क्यों न हो।

समाज में वेश्यावृत्ति अभी भी है। वेश्यागमन के कारण पुरूष और स्त्री दोनों को संक्रामक यौन रोग सफाई के अभाव और छूत के कारण लग जाते हैं। सरकार को इस वर्ग की स्थिति सुधारने के लिये विशेष ध्यान देना चाहिये। क्योंकि यहीं से युवा पीढ़ी को परस्त्रीगमन और कदाचार एवं यौनाचार का संयोग बनता है और गंदे यौन रोगों का संक्रमण-समाज में बढ़ता जाता है।

स्वास्थ्य और सौन्दर्य

स्वास्थ्य और सौन्दर्य का परस्पर गहरा संबंध है। स्वास्थ्य के बिना सौंदर्य है ही नहीं। सौन्दर्य स्वास्थ्य की झलक है, चमक है। वास्तव में सौन्दर्य प्रकृति का रूप है। ईश्वर को भी हम सत्यं शिवं सुन्दरं के रूप में ठीक प्रकार से समझ सकते हैं। सुन्दरता ईश्वर का रूप है। जिस प्रकार ईश्वर सर्वव्यापक, सर्वत्र, सर्वान्तरयामी नित्य पवित्र है उसी प्रकार सौन्दर्य भी ईश्वर की सत्ता का, सुन्दर सत्ता की आभा है, दीप्ति है। जो सौन्दर्य है वह सब उसी परमात्मा का है। अपने समय के एशिया के प्रसिद्ध शायर ग़ालिब ने सौन्दर्य के विषय में कितना सटीक कहा है :-

तकल्लुफ से बरी है हुस्ने जाती। कुबाए गुल में गुलबूटा कहां है ?

हुस्न (सौन्दर्य) जाती (प्राकृत) बरी (मुक्त) तकल्लुफ (बनावट) गुल (गुलाब) कुबा (लिबास,भूषा) गुलबूटा (बनाव व कढ़ाव) अर्थात सौन्दर्य प्राकृत है उस में किसी प्रकार की बनावट अथवा कृत्रिमता नहीं है। गुलाब के फूल में बनावट नहीं है और उसने बेलबूटे के बनाव व कढ़ाव वाला कोई वस्त्र धारण नहीं किया है। गुलाब का सौन्दर्य प्राकृतिक है उस में बनावट का लेश मात्र भी अंश नहीं है। उस का सौन्दर्य उस के भीतर से फूट कर निकला है। उस के अन्दर का सौन्दर्य ही बाहर चमक रहा है। इसीलिए गुलाब का सौन्दर्य विकार रहित है। सौन्दर्य वही जो निर्विकार हो, जिसके दर्शन से पवित्रता और शान्ति का संचार हो।

सौन्दर्य कदापि वह नहीं जिसके अवलोकन से विकार वासनाओं का प्रसार हो। जो विषय वासना रहित हो, जो भोग विलास और विषय ज्वाला को उत्तेजित नहीं करता हो, वही सौन्दर्य है। सौन्दर्य में आकर्षण शक्ति उसी प्रकार कार्य करती है , जैसे चुंबक लोहे को अपनी ओर आकर्षित करता है। परमात्मा परम सुन्दर है तभी तो भक्तजन उनके दर्शन के लिए तड़पते हैं। परमात्मा के सौन्दर्य से सारा विश्व सौन्दर्यमय है।

सौन्दर्य के प्राकृतिक गुण है उसमें बनावट न हो, वह पवित्र हो, उसमें आकर्षण हो, वह निर्विकार हो और आनन्द दायक हो स्वास्थ्य में सौन्दर्य है अगर उसमें बनावट है, आकर्षण नहीं है, निर्मलता नहीं है और आनन्दप्रद नहीं है, वह स्वास्थ्य भी प्राकृत नहीं है। स्वस्थ व्यक्ति की आंखे आकर्षक और तेजमय होती हैं यदि उन में काजल या अन्य रसायन डाल कर आकर्षण पैदा किया है तो वह मेकअप मात्र है, धोते ही वास्तविकता झलक जायेगी। ओठों पर कितनी ही कीमती लिपिस्टिक आप लगालें परन्तु जो आभा सुन्दर ओंठों पर प्राकृतिक होती है वह कितनी मोहक और निर्मल होती है। स्वस्थ व्यक्ति के ओंठों को किसी मेकअप की आवश्यकता नहीं है। स्वस्थ व्यक्ति का चेहरा स्वत: ही चमक और दमक से अपनी ओर आकर्षित किए बिना नहीं रह सकता। चेहरे पर कीमती क्रीम व पाउडर का लेप अपने को धोखा देने के लिए है। वह सौन्दर्य का रूप कदापि नहीं हो सकता। एक वृक्ष के पत्तों पर प्रतिदिन आप स्प्रे करके उन्हें धो दें उन पर टिकी धूल गर्द साफ हो जाएगी परन्तु उन की हरियाली में वृद्धि नहीं हो सकती है। यदि आप उस वृक्ष की जड़ों में गुड़ाई करके भरपूर पानी की सिंचाई कर दें तो उस वृक्ष के पत्तों में स्वत: ही हरियाली आ जायेगी और स्थायी रहेगी। यही स्थिति हमारे स्वास्थ्य की है यदि हम स्वस्थ हैं तो सौन्दर्य उस का प्रतिबिंब है, आभा उसकी शोभा है।

आज कल कृत्रिम सौन्दर्य की ओर मानव जाति भागी जा रही है। हम स्वास्थ्य के नियमों की उपेक्षा व अवहेलना करते हैं। दवाईयां खाने के शौकीन बन गए हैं। बाजार से सौन्दर्य खरीद कर उस का प्रयोग करके हम सुन्दर बनने का ढोंग रचते हैं। चेहरों को चिकना और चमकदार बनाने के लिये पॉवडर और क्रीम के लेप पर लेप चढ़ाते हैं। लिपस्टिक, साबुन, स्प्रे इत्र, परफ्यूम न मालूम क्या क्या, प्रसाधन महिलाएं सुन्दर बनने और दिखने के लिये खरीदती रहती हैं। मगर जब वे ग्रामीण महिलाओं के प्राकृत सौन्दर्य से टकरातीं हैं तो न वे शरीर सौष्ठव में टिक पाती हैं न और लावण्य में। ग्रामीण, आदिवासी व वनवासी तथा घुमन्तु कबीले की महिलाओं का जीवन स्वाभाविक और स्वास्थ्य व सौन्दर्य प्राकृत होता है। उस में बनावट नहीं होती। वे श्रमशील होती हैं उन के शरीर न सूखे ढांचे होते हैं न चर्बी के लेप चढे थुलथुल शरीर। नगर के समीप की महिलाएं अथवा धनी मानी परिवारों की ग्रामीण महिलाएं भी अब अपना प्राकृत सौन्दर्य शरीर श्रम के अभाव में नष्ट कर रही हैं और डाक्टरों के क्लीनिकों के चक्कर काटने लगी हैं। मेकअप, औषधियों, अश्लीलता और विलासिता का सौन्दर्य से कोई सम्बन्ध नहीं है। सौन्दय आन्तरिक साधना और उपासना की वस्तु है, भोग और बनावट व सजावट की वस्तु कदापि नहीं है।

मानव आदि काल से ही सौन्दर्य का उपासक रहा है। कवियों ने सौन्दर्य के अनेक मानक

व मान्यताएं समाज को दी हैं। कवियों ने राम और कृष्ण को जो सांवले रंग के थे, सुन्दर पुरूषों में प्रथम श्रेणी का दर्जा दिया। उन दोनों का शरीर सौष्ठव देखते ही बनता था, उस का विशेष कारण था उनकी आन्तरिक सुन्दरता जो फूट कर बाहर झांक रही थी अर्थात आध्यात्मिक सत्ता एवं शक्ति उन का सर्वश्रेष्ठ सौन्दर्य था। पुरूषों की सुन्दरता का वर्णन इस प्रकार किया जाता है। ऊंचा कद, चौड़ा ललाट गोल गोल बड़ी-२ आंखें, लंबी नाक, लंबा भरपूर चेहरा, मोती से दांत, लंबी गर्दन, बैल के जैसे उठे हुए कंधे, मजबूत भुजाएं, सपाट चौड़ा वक्षस्थल, तीन बल पड़ा हुआ पेट, सुडौल और मांसल दृढ़ जांघे, हिरन जैसे पुट्ठे, चढ़ी हुई पिंडलिया, मध्य आकार के पैर, रंग गेहुंआ, सांवला भी मान्य है।युवावस्था में व्यक्ति का चाहे कद कम ही हो, प्रत्येक युवा जो स्वस्थ है, वह सुन्दर लगता है। यौवन स्वयं में बहुत आकर्षक एवं सौन्दर्यपूर्ण होता है।

महिला की सुन्दरता पर तो भृर्तहरि का श्रंगार शतक लिखा हुआ है। संस्कृत के महाकवि कालिदास ने स्त्री की सुन्दरता पर जो लिखा है उसे कोई सुशील पिता अपनी पुत्री को पढ़कर नहीं सुना सकता, कोई शर्मालु भाई अपनी बहिन को पढ़ कर नहीं सुना सकता, इसी प्रकार शीलवंत पुत्री व बहिन उसे अपने पिता व भाई को पढ़ कर नहीं सुना सकती। कॉलेजों के प्रोफेसरगण भी अपनी सहशिक्षा की कक्षा में ऐसे श्रंगारिक व सौन्दर्य कल्पनाशील अध्याय व अंशों को यह कह कर छोड़ देते हैं छात्र छात्राओं! इसे स्वयं पढ़ लेना। साहित्य चाहे किसी भी भाषा का क्यों न हो सब में श्रंगारिक और सौन्दर्य का वर्णन करने में कवियों ने कल्पना की ऊंची उड़ान भरी है जो आध्यात्मिक न हो कर राजसी अधिक है।

भारत में नारी के सौन्दर्य की चर्चा करते समय प्रायः उस के शरीर सौष्ठव का वर्णन इस प्रकार किया जाता है :- नारी के लंबे काले-२ केश जो उसे नग्न अवस्था में बैठी हुई को आगे से ढ़क लें और खड़े होने पर केश उसके नितंबों के नीचे तक के शरीर को ढक लें, मृग जैसी सुन्दर काली आंखें, सुआ जैसी नाक, चावल जैसे दान्त, पान जैसे पतले ओंठ (ओष्ठ) गोल भरपूर केसर जैसा चेहरा, गेहुंआ रंग, सुराही जैसी लंबी गर्दन, वक्षस्थल पर उभरे हुए सुडौल स्तन, पतली कमर, गोल गोल उभरे हुए नितम्ब, केले के वृक्ष जैसी जांघें, जो ढालदार व चिकना होता है, शरीर पर लोम न हों, छोटे-२ पैर आदि अनेक उपमाएं दी हैं जिनमें विस्तार से जाने की आवश्यकता नहीं है। यहां नारी के मांसल शरीर और शरीर सौष्ठव की दृष्टि से वर्णन किया गया है।

वास्तव में जिस प्रकार पुरूष स्त्री में सौन्दर्य खोजता है उसी प्रकार स्त्री भी पुरूष सौन्दर्य से अभिभूत होती है। इन दोनों के शरीर सौष्ठव में जो विपरीतता है वही एक दूसरे के लिए आकर्षण का विषय है। पुरूष का वक्षस्थल चौड़ा और सपाट होता है इसलिए उसे स्त्री के उभरे हुए स्तन आकर्षित करते हैं। इसी प्रकार पतली कमर और उभरे हुए गोल गोल नितंब भी उसे आकर्षित करते हैं। स्त्री के चेहरे पर बाल नहीं है उसे पुरूष का बालों से भरपूर चेहरा और चौड़ा सपाट वक्षस्थल, सशक्त भुजाएं और वृष स्कंध अर्थात बैल जैसे उठे हुए कंधे आकर्षण के स्थल हैं। इस विपरीतता का आनन्द चक्षु इन्द्रिय प्रधान हैं। विपरीत लिंगी होने

के कारण युवावस्था में एक दूसरे से प्रभावित होते हैं और प्रकृति ने एक को दूसरे का परस्पर पूरक बनाया है।

साहित्यकारों और कवियों ने जो सौन्दर्य की शरीर सौष्ठव द्वारा मानकों को मान्यता दी है न ये सब उपमाएं सभी पुरूषों में पाई जाती है न सभी स्त्रियों में। हां अपवाद तो हो सकते हैं चूंकि अपवाद भी प्रकृति का ही एक अटल नियम है। सौन्दर्य के विषय में इतना अवश्य सत्य है प्रत्येक नारी का कोई न कोई अंग विशेष आकर्षण का होता है। इसी प्रकार पुरूष में पौरूष का प्रतीक कोई न कोई अंग विशेष आकर्षण रखता है। मुख्य बात विपरीत लिंग और शरीर सौष्ठव में विपरीतता की अवश्य है जो प्राकृतिक तौर पर है। यही सौन्दर्य बोध का सार है। सभी नारियां चित्तौड़ की पद्मिनी जैसी सम्पूर्ण सुन्दरी नहीं हो सकती जिसे अलाउद्दीन शीशे में झलक भर देखने को दीवाना हो गया था। सभी नारियाँ गुर्जरी रानी मृगनयनी की तरह सुन्दर और वीरांगना नहीं हो सकिती। सभी नारियाँ नूरजहां की तरह खूबसूरत और तेज तर्रार प्रशासक नहीं हो सकती। ये अपवाद हीं हैं और मानने चाहियें। जिस सम्पूर्ण सौन्दर्य की, भारतीय नारी के विषय में कवियों ने कल्पना की उड़ान भरी है, वह प्रत्येक नारी को प्रकृति ने प्रदान नहीं किया है। प्रत्येक नारी को सौन्दर्य का एक या दो प्राकृत गुण परमेश्वर ने अवश्य प्रदान किये हैं, यही बात पुरूष की है। किसी नारी के तीखे नखशिख हैं तो कोई गोरी और लावण्यमयी। किसी का वक्षस्थल आकर्षक है तो किसी के नितंबों का उभार तो किसी को परमात्मा ने कमर ही नहीं दी। संस्कृत कवियां ने सुन्दर नारियों को 'तन्वंगी' कहकर संबोधित किया है।

यही कारण है सौन्दर्य प्रतियोगिता में जो लड़कियाँ, महिलाएं विश्व सुन्दरी, भारत सुन्दरी, प्रदेश सुन्दरी, नगर सुन्दरी चुनी जाती है, उन के चयन का एक मापदंड बना रखा है महिला प्रतियोगी की कमर, वक्षस्थल पर उभरे स्तनों की माप से नौ इंच कम हो और नितंबो का उभार स्तनों से तीन इंच अधिक हो यही माप उन्हें सुन्दरी प्रतियोगिता में विजयी घोषित करा देती है। समाचार पत्रों में उन सुन्दरियों के फोटों प्रकाशित होते हैं जिन्हें देकर कई तो उन में कार्टून जैसी लगती हैं। मगर व्यापारिक कम्पनियों और औद्योगिक घरानों द्वारा आयोजित ये सौन्दर्य चयन किया कराया जाता है। इस में सरकारा या समाज अथवा व्यक्ति की सौन्दर्य दृष्टि और सौन्दर्य बोध का कोई स्थान नहीं है। हालांकि देश के कुछ समाज सुधारक व समाज सेवी संगठनों ने इस सौन्दर्य चयन का विरोध भी किया था। प्रचारकों ने भजन गा गा कर लोगों को इस नंगेपन का बोध कराया था। एक दो पंक्ति अब भी मुझे याद आ रही है, "जब से गये गांधी, पटेल, ऊंटनी हो गयी बेनकेल, नंगी करके नापी जाय लुगाई, ऊंटनी बेराही, ऊंटनी बेराही।"

वास्तव में इन सौन्दर्य प्रतियोगिताओं का प्रभाव अच्छा नहीं पड़ा हैं। नारी जाति का मुख्य गुण शालीनता और शीलता है। इन प्रतियोगिताओं में वे प्रायः तैराकी, पोशाक नाममात्र अधोवस्त्र पहन कर पुरूषों के सन्मुख खड़ी की जाती है। फिर उनके शरीर के कामोत्तेजक अंगों का माप लिया जाता है जिसे पुरूष लोग ही करते हैं। यदि ये नग्न स्त्री प्रदर्शनी पूंजीपति वर्ग के शुगल के लिये एक सामाजिक आवश्यकता बन गई है, जो होनी

नहीं चाहिये तो पुरूषों के बजाय सौन्दर्य चयन व परीक्षण महिला डाक्टर करें और महिला ही जज हों। स्त्री या युवती के केवल इन तीन संवेदनशील अंगों के निरीक्षण के अतिरिक्त उन के संपूर्ण स्वास्थ्य का परीक्षण किया जाए तभी उन्हें स्वस्थ एवं सुन्दरी घोषित किया जाए ताकि नारी जाति कृत्रिम स्वास्थ्य के स्थान पर वास्तविक स्वास्थ्य की ओर लौटे।

व्यक्ति में तीन सहज स्वाभाविक प्राकृत इच्छाएं शरीर के साथ जुड़ी , पाई जाती है। प्रथम है आत्मसुरक्षा, द्वितीय वंश सुरक्षा तथा तृतीय संगति। सारे समाज का ढांचा इन तीन मानवीय प्राकृत इच्छाओं पर खड़ा है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन की सुरक्षा के प्रति सजग है जिस के लिये समाज से ले कर, राज्य और सरकारों का गठन हुआ है। प्रत्येक व्यक्ति अपने वंश की वृद्धि और उस की निरन्तर सुरक्षा चाहता है। प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक प्राणी है वह समाज के लिये तड़पता है। पागल और योगी ही समाज के बिना रह सकते हैं। मनुष्य ने अपनी वंश परम्परा के निरन्तरता के लिये विवाह प्रणाली, परिवार प्रथा का विकास किया। सामाजिकता और मानवता के विकास के लिए गांव से शुरू करके विश्व स्तर के संगठन खड़े किए हैं। यहां हम केवल स्त्री पुरूष के प्राकृतिक संबंधों की चर्चा तक सीमित रहना चाहते हैं। यह सार्वभौम सत्य है कि स्त्री पुरुष की पूरक है पुरुष स्त्री के बिना अधूरा है। लिंग विपरीतता और शरीर सौष्ठव विपरीतता तथा वंश परंपरा की निरन्तरता ही स्त्री पुरुष के यौन जीवन का रहस्य है।

मानव समाज ने स्त्री पुरुष के पवित्र यौन जीवन के लिए विवाह प्रथा को सामाजिक और राजकीय तथा कानूनी और संवैधानिक मान्यता प्रदान की है। पिता अपनी युवा कन्या को अन्य पिता के युवा पुत्र को बिरादरी की उपस्थिति में सौंपता है। इस के पश्चात ये दोनों युवा युवती सन्तान उत्पत्ति के अधिकृत अधिकारी बन जाते हैं। विवाह से पूर्व इन के यौन संबंध समाज और राज की दृष्टि में हेय और समाज की मर्यादा के विरूद्ध हैं। संक्षेप में विवाह प्रथा द्वारा परिवार बसा कर सन्तान उत्पत्ति और उनका लालन-पालन, शिक्षा-दीक्षा, गृहस्थ स्त्री पुरूषों का परम कर्त्तव्य है। इसके साथ ही ये दोनों युवा युवती पवित्र यौन जीवन व्यतीत करें। परस्त्री और परपुरूष का इन के यौन जीवन में कतई स्थान नहीं है। यह भारतीय समाज की सनातन परंपरा एवं मर्यादा है, जो मानव समाज में अद्वितीय है।

वेद शास्त्रों में गृहस्थ आश्रम को अन्य सभी आश्रमों का दाता और श्रेष्ठ माना गया है। हमारे देश के अनेकानेक ऋषि, महर्षि, सन्त, फकीर, महात्मा, गृहस्थी और सन्तान-वान रहे हैं। ज्ञात इतिहास में ब्रह्मचर्य व्रत के पालन करने वाले बहुत कम ऋषि, महर्षि, सन्त, मुनि हुए हैं, जो समाज के लिए आज भी आदर्श हैं जैसे आदि शंकराचार्य, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द आदि। बिना वैराग्य और आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त किए और पूर्व पवित्र संस्कारों से हीन व्यक्ति यदि बिना गृहस्थाश्रम व वानप्रस्थ आश्रम पार किए सन्यास और ब्रह्मचर्य व्रत लेता है तो उसे खांडे की धार पर चलना होगा, उसे अपना जीवन साधना तपस्या के बल पर उसी प्रकार पार करना होगा जैसे एक चतुर मल्लाह भंवर से अपनी नैया को सुरक्षित पार कर लेता है अथवा एक नटखट घोड़े का सवार उस पर नियंत्रण करके अपना सफर सुरक्षित तय कर लेता है।

गृहस्थाश्रम तभी श्रेष्ठ है यदि गृहस्थी स्त्री पुरूष काम विकार, लंपटता, विलासिता तथा मर्यादाहीनता को त्याग कर उत्तम सन्तान उत्पन्न करें और मर्यादित ब्रह्मचर्य का पालन भी साथ साथ करते रहें। दो सन्तानों के मध्य कम से कम पांच वर्ष का अन्तर रहे और राज और समाज की जनसंख्या की समस्या का ध्यान रखते हुए दो या तीन से अधिक सन्तान कभी भी उत्पन्न न करें। यदि गृहस्थी स्त्री पुरूष मर्यादा और केवल सन्तानोत्पत्ति तथा ब्रह्मचर्य पूर्ण जीवन व्यतीत करके आदर्श गृहस्थ जीवनयापन करेंगे तो वे उन लंपट, कामी और ब्रह्मचर्य के नाम पर ढोंग रचने वाले, परम पवित्र गेरूआ रंग के वस्त्र धारण करने वाले साधु और पोंगा पंथी महात्माओं से प्रत्येक दृष्टि से महान माने जायेंगे। इसलिये हमारे ऋषि मुनियों ने गृहस्थाश्रम का स्थान सभी आश्रमों में उत्तम माना और गृहस्थ जीवन का कुछेक को छोड़कर सभी ने पालन किया था।

सबसे बड़ा अनर्थ और घोर अपराध यह हुआ है कि आदि शक्ति, मातृ शक्ति नारी को, भोग विलास, काम पिपासा की तृप्ति और यौन अपराधों का माध्यम बना कर मनुष्य ने नारी जाति का न केवल अपमान किया अपितु उसे इन्सान ही नहीं माना है। आज भी अपने को सभ्य और सुसंस्कृत कहलाने वाला मनुष्य किसी न किसी रूप में यौन अपराधी है। वह स्त्री जाति का दुश्मन है। लेनिन ने एक बार अपनी मित्र मंडली में मनुष्य के सभ्य और सुसंस्कृत होने की पहचान पूछी। सबने अपने अपने दृष्टिकोण से उत्तर दिए जो लेनिन को संन्तुष्ट नहीं कर सके। अन्ततः लेनिन ने बताया, "यदि आधी रात के समय निर्जन राजमार्ग पर कोई १६ वर्षीय सुन्दर युवती अकेली, निर्भय, निशंक यात्रा कर रही हो तो समझ लेना चाहिये मनुष्य सभ्य बन गया है अन्यथा वह सभ्य नहीं माना जा सकता।" विस्तार में जाने की जरूरत नहीं हैं, शिक्षित और अशिक्षित, ग्रामीण और शहरी, युवा और प्रौढ़, अधिकारी और राजनीतिज्ञ, पुलिस और हस्पताल सभी के द्वारा उजाले, अंधेरे, एकांत, रेल, बस, खेत खलिहान, कल कारखानों, सार्वजनिक पार्क जहां भी बस चले, नारी का निमर्म हो कर बलात्कार होने के समाचार प्रतिदिन प्रकाशित होते रहते हैं जो पुरूष जाति पर महान कलंक का टीका है।

स्वास्थ्य और सौन्दर्य एक दूसरे के पर्याय व पूरक हैं। स्वस्थ बच्चा चाहे इन्सान का हो चाहे पशु और पक्षी का कितना सुन्दर और आकर्षक लगता है क्योंकि वह प्राकृतिक सौन्दर्य का प्रतीक होता है। गधे का बच्चा भी बड़ा खूबसूरत लगता है। सिंहनी का शावक बहुत प्यारा लगता है बस चले तो उसे गोदी में उठाने को मन चाहता है क्योंकि वह भी इन्सान के बच्चे की तरह सुन्दर, अबोध और अपनी ओर आकर्षित करने की क्षमता रखता है।

ज्यों ज्यों बच्चा बड़ा होता जाता है उस का प्राकृतिक सौन्दर्य और स्वास्थ्य उस के मां बाप और संरक्षकों के अज्ञान के कारण खराब होता चला जाता है। कहीं पौष्टिक और प्रचुर भोजन की अधिकता और कहीं न्यूनता, खेलकूद और व्यायाम से जी चुराना, गंदी संगति के कारण युवा युवतियाँ कार्टून जैसे बनते चले जाते हैं। व्यवसायी और पूंजीपति उदार लोग जो कभी अखाड़े व्यायाम शाला आदि की परमार्थ व्यवस्था किया करते थे उन्होंने अब प्रायः हैल्थ क्लबों की स्थापना करके युवा युवतियों को आकर्षित करके, उनसे स्वास्थ्य सुधार के नाम पर पैसा कमाना, धंधा बना लिया है। विडम्बना यह है शिक्षित नारियों ने इसे अपना

रोटी रोजी का धंधा बना लिया है। होटल प्रबंधकों ने भी हैल्थ क्लब जैसी आधुनिक सुविधाएं जैसे तरणताल, मालिश, भांति भांति के स्नान आदि की व्यवस्था की है। लेकिन सर्वसाधारण इस पूंजीवादी, मंहगी, कमरतोड़ व्यवस्था का लाभ नहीं उठा सकता। भारत गांवों का देश है इसलिए प्रत्येक गांव में स्टेडियम व हैल्थ क्लबों की स्थापना सरकार का खेलकूद विभाग व विकास तथा स्वास्थ्य विभाग संयुक्त रूप से करें ताकि ग्रामीण भारत के युवा युवतियां, किशोर एवं किशोरी स्वस्थ एवं सुन्दर बन सकें।

सौन्दर्य-केन्द्र छोटे छोटे नगरों में खुल गए हैं। प्राय: प्रशिक्षित युवतियों ने इस धंधे को अपना लिया है। स्कूल कॉलेजों की अविवाहित युवतियाँ सौन्दर्य की खोज में इन सौन्दर्य-केन्द्रों में पहुंचती हैं। मां बाप की गाढ़े पसीने की नेक कमाई, शिक्षा प्राप्ति के लिये अपव्यय करने वाली युवतियाँ अपने प्राकृतिक सौन्दर्य को नष्ट करके, पूंजी पति वर्ग या शहर के गुंडों को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए अप्राकृतिक सौन्दर्य को इन सौन्दर्य-केन्द्रों से प्राप्त करना चाहती हैं जो क्षणभंगुर है, बल्कि त्वचा के लिये भी हानिकर है।

जिस सौन्दर्य के तुम उपासक और प्रेमी हो वह सौन्दर्य तो किशोर अवस्था में प्रकृति ने तुम को झोली भर भर कर लुटाया था जिसे तुमने अप्राकृतिक जीवन जी कर कुसंग और कुटेवों के आदी बन कर लुटा दिया। अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है। प्रातःकाल का भूला बिसरा व्यक्ति यदि शाम को घर लौट आए तो वह भूला नहीं माना जाता। युवा अवस्था में आप विवाहित हों अथवा अविवाहित संयमी जीवन अर्थात मर्यादित ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए स्वस्थ सुन्दर और दीर्घजीवी बन सकते हैं। लेकिन इसके लिये नियमित,सम्पूर्ण शरीर के अंगों का व्यायाम, समय पर सादा भोजन, जो पौष्टिक, सात्विक तथा सुपाच्य हो, करना, कोई न कोई एक कार्य नित्य परमार्थ का करना, ईमानदारी और मेहनत से रोटी रोजी कमाना, शरीर श्रम से जी न चुराना, व्यक्तिगत और सार्वजनिक सफाई के नियमों का पालन करना, साफ सुथरे वातावरण तथा पर्यावरण में रहना, बनावटी श्रृंगार व सौन्दर्य प्रसाधनों से परहेज करना, पवित्र विचार रखना तथा आशावादी एवं आस्तिक दृष्टिकोण रखना आदि उपायों द्वारा आप का खोया हुआ स्वास्थ्य एवं सौन्दर्य पुन: प्राप्त हो सकता है।

सौन्दर्य का दुश्मन मोटापा भी है। मोटापे से तात्पर्य है शरीर पर आवश्यकता से अधिक चर्बी के लेप चढ़ जाना। चर्बी हमारे शरीर के लिए जहा जरूरी है वहां अधिक मात्रा में शरीर में बढ़ जाना बहुत हानिकर है। यदि हड्डियों पर चर्बी नहीं है तो शरीर हड्डियों का ढांचा मात्र ही है लेकिन अधिक चर्बी बढ़ने से शरीर का वज़न बढ़ जाना और शरीर थुल थुल हो जाना अनेक रोगों को आमंत्रित करना है। मोटापे के कई मुख्य कारण है। प्रथम भोजन में अधिक चिकनाई व पौष्टिक तत्वों का प्रयोग और उनको पचाने के लिए शरीर श्रम तथा संपूर्ण शरीर के व्यायाम का अभाव।

दूसरा कारण पाचन क्रिया का ठीक न होना और भोजन अधिक मात्रा में करते जाना, स्वाद के लिए भोजन करना, बिना भूख भोजन करना, भोजन के उपरान्त सोने का आदी होना, शरीर श्रम तथा व्यायाम से बचना और आराम तलब जीवन व्यतीत करना।

खेत में हल चलाने वाला किसान, पशुओं का पाली अथवा ग्वाला, प्रात: से शाम तक

शरीर श्रम करने वाले मजदूर के शरीर पर एक औंस भी अधिक चर्बी, कभी भी नहीं मिलेगी। लेकिन आराम से दुकान पर बैठ कर सौदा बेचने वाले दुकानदार, दफ्तरों के प्रायः बाबू और घर का काम न करने वाली धनाढ्य महिलाएं अपने शरीर पर अनचाही चर्बी लादे मिलेंगी। इन का चलना फिरना, उठना बैठना, शौचादि निवृत होना तथा संभोग तक करना मुश्किल हो जाता है। यूं तो चर्बी बढ़ने का आक्रमण पूरे शरीर पर होता है मगर स्त्री के चेहरे, पेट, नितंब तथा जांघों पर अधिक होता है और पुरूष के पेट पर चर्बी का जमाव सब से पहले शुरू होता है।

कई स्त्री पुरूष किसी बीमारी से निरोग होने के पश्चात भी मोटे होते देखे गए हैं। इसलिए शरीर को सुडौल रखने के लिये संपूर्ण शरीर के व्यायाम जैसे योगासन, तेज चलना एक घंटे में पांच किलोमीटर, साइकिल चलाना, तैरना, घोड़े की सवारी, दिल खोलकर हंसना, आवश्यकता से अधिक भोजन न करना आदि प्राकृतिक नियमों का कठोरता से पालन करना चाहिये।

जहां मोटापा सौन्दर्य का शत्रु है वहा सूखा हड्डियों का ढांचा, पतली गर्दन, बैठे हुए कपोल धंसी हुई आंखे, पसली चलती नजर आना, बांस की लकड़ी की तरह पैर, एक प्रकार का कार्टून जैसा शरीर भी सौन्दर्य की परिधि में नहीं आता।

शरीर का सुडौल होना, सुव्यवस्थित होना, शरीर सौष्ठव अथवा देहयष्टि, सौन्दर्य और स्वास्थ्य के प्रतीक हैं।

मोटापे का एक विशेष कारण थाइरॉयड ग्लैंड की कमजोरी माना जाता है। यह ग्लैंड गले की श्वास की नाली के दोनों तरफ होता है। इस का काम शरीर के चय- अपचय (Metabolism) को नियमित करना है। इस ग्लैंड से एक स्राव निकलता है जो रक्त में ज़ाकर संपूर्ण शरीर में प्रवाहित होता है। इस ग्लैंड के कमजोरी के कारण या अगर इसे शरीर से निकाल दिया जाय, तो जवान व्यक्ति भी बूढ़ा होने लगता है। इस का काम शरीर को मोटा होने से बचाना, पतला, फुर्तीला रखना तथा सुडौल बनाना है। इसके स्राव से शरीर का सौन्दर्य बना रहता है। इसीलिए वैज्ञानिक इसे सौन्दर्य का स्वामी कहते हैं।

थाइरॉयड ग्लैंड को चुस्त और दुरूस्त रखने के लिए योगासनों में सर्वांग आसन मुख्य है। इस आसन का पूरा लाभ इसके उपरान्त मत्स्यासन करने से प्राप्त होगा। यह मत्स्यासन सर्वांग आसन का पूरक है। जब सर्वांग आसन का अभ्यास किया जाता है तब गर्दन की स्थिति आगे की ओर होती है जिससे थायरॉयड ग्लैंड पर दबाव पड़ता है और मत्स्य आसन में गर्दन पीछे की ओर होती है तो थायरॉयड ग्लैंड का पूरा व्यायाम हो जाता है जिससे व्यक्ति को स्वस्थ सुन्दर और दीर्घजीवी बनने में विशेष सहायता मिलती है। लेकिन ये आसन बिना योग शिक्षक के सीखना हानिकारक हो सकते हैं। त्तन आसनों को अशुद्ध तरीके से करने से चक्कर आने लग जायेंगे और आप घबरा कर आसन करना ही छोड़ देंगे।

फ्रांस में एक डि लेनक्लोस निनौन नामक महिला थी। जिसका जन्म १५ मई १६१६ और मृत्यु १७ अक्तूबर १७०६ ई. में हुई। वह लगभग ९१ वर्ष जीवित रही। उस के विषय में कहा जाता है कि उसकी शकल कभी बूढ़ी नहीं हुई। ७० वर्ष की उम्र का चित्र देखकर

लगता था कि वह ३०-३५ वर्ष की महिला है। जब वह ८५ वर्ष की थी तो फ्रांस के सम्राट लुई १४वें ने उसके बारे में कहा था कि वह उसके शासनकाल की चमत्कार है। उस के शरीर के युवा होने और सुन्दर होने का रहस्य उसके गले के व्यायाम थे। उसके व्यायाम के तरीके के संबंध में एक पैम्फलेट पाया गया जिस में उसके व्यायामों का उल्लेख है। स्टैनफोर्ड बेनेट ने अपनी पुस्तक 'ओल्ड एज-इट्स कॉजेज एण्ड प्रिवेन्शन' अर्थात बुढ़ापा और इसके कारण और निवारण में गले के व्यायामों का वर्णन किया है। सारांश यह है कि गले के व्यायाम यदि वैज्ञानिक विधि से किए जाएं तो चेहरे पर बुढ़ापे के चिन्ह कभी नजर ही नहीं आयेंगे। गले के व्यायामों का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव थायरॉयड ग्लैंड और चेहरे की सभी मांस पेशियों पर पड़ता है जिसके कारण चेहरे का सौन्दर्य बना रहता है और बुढ़ापे में भी व्यक्ति युवा सम लगता है।

आजकल प्लास्टिक सर्जरी से स्त्री पुरूष चेहरे की झुर्रियों को समाप्त कराते हैं। यदि वे शरीर को भीतर से स्वस्थ बनाएं तो इस आपरेशन की आवश्यकता ही नहीं होगी। किशोर अवस्था से ही शरीर के प्रत्येक अंग का व्यायाम और सात्विक तथा सुपाच्य एवं पौष्टिक भोजन, संयमपूर्वक काम जीवन बिताकर व्यक्ति मरते दम तक स्वस्थ एवं सुन्दर रह सकता है। पाउडर क्रीम, होठों पर लाली पोतने से सौन्दर्य कभी नहीं मिलेगा। वास्तविक सौन्दर्य मांस पेशियों को स्वस्थ, पुष्ट तथा सबल बनाने से ही मिलेगा।

श्री शिवचरण यादव जिन की आयु सन् १९९० में बयालीस वर्ष थी। उन की तीन सन्ताने हैं। वे हरियाणा प्रान्त के रिवाड़ी शहर के समीप जड़थल गांव के निवासी हैं। वे जूडो कराटे के विख्यात प्रशिक्षिक हैं। वे स्व.इन्दिरा गांधी के उन की हत्या से कई वर्ष पूर्व कमाण्डो भी रह चुके हैं। उन्होंने सी.आर.पी. की नौकरी से, अन्याय सहन न करने के कारण, सब इन्सपेक्टर के पद से त्यागपत्र दिया था। अब वे अपने कृषि फार्म पर कृषि कार्य करते हैं। अड़ौस-पड़ौस के युवा युवतियाँ जो कराटे का अभ्यास करना चाहते हैं उन्हें इस कला को सिखाने में हर्ष होता है। वे बयालीस वर्ष की आयु में चौबीस वर्ष के युवा दिखते हैं। जब वे अपनी वेशभूषा पहन कर कराटे के मैदान में उतरते हैं तो उनका युवा चेहरा, छरहरा भरपूर शरीर और शेर जैसी फुर्ती और कराटे के करतब देख कर मन प्रसन्न हो जाता है।

श्री शिवचरण यादव का भोजन अत्यंत सादा और शुद्ध शाकाहारी है। वह गाय का दूध, छाछ, दही, मक्खन का प्रयोग करते हैं। वह भी अधिक मात्रा में नहीं, उतना जितना वे बिना किसी कठिनाई के सहज पचा सकें। गेहूं, जौ, चना,तीनों अनाजों को समान मात्रा में मिलाकर स्वयं अपने घर हाथ की चक्की पर आटा पीसते खाते हैं। एक दिन मुलाकात होने पर उन्होंने बताया कि मैं पन्द्रह रोज के लिये बंबई जा रहा हूँ। आज मैंने अपनी गाय के लिये सैंतीस किलो दलिया अपनी चक्की से पीसा है और मुझे बिल्कुल थकावट नहीं है। वह दो घंटे व्यायाम व कराटे का अभ्यास नित्य करते हैं। प्रात: चार बजे से पूर्व बिस्तर छोड़ देते हैं।

उन के जीवन पर पटौदी के समीप नूरगढ़ सेवाश्रम के स्वामी श्री सोमानन्द जी का प्रत्यक्ष प्रभाव है। वे उनके छात्र जीवन से ही अनुयायी हैं। उनके सत्संग और जीवन से शिवचरण

जी ने सादा जीवन, उच्च विचार, सात्विक आहार विहार और सेवा और कृषि कार्य की प्रेरणा ली है। वे नौकर नहीं पालते, स्वयं अपना कार्य करते हैं।

स्वामी सोमानन्द जी मेरे अनुमान से ९५ वर्ष के सन्यासी हैं। उनका ओजस्वी व तेजस्वी चेहरा बड़ा भव्य एवं प्रभावशाली लगता है। उन्होने अपने जन्म स्थान नूरगढ़ (रिवाड़ी) गांव के समीपस्थ अपने खेत पर सेवाश्रम बना लिया है। इस आश्रम के माध्यम से दूर दूर से आए लोग आध्यात्मिक शिक्षा लेते हैं। स्वामी जी स्वयं आयुर्वेद के धुरंधर विद्वान एवं अनुभवी वैद्य हैं। असाध्य रोगों का इलाज निशुल्क करते रहे हैं। पशु पक्षियों की भी चिकित्सा उन के आश्रम में होती है। वे सर्व धर्म के प्रतीक हैं। चालीस वर्ष से अपने आश्रम से बाहर नहीं गए हैं। न कभी किसी से आश्रम के लिए धन की अपील की है न कभी भिक्षाटन किया है। उन के आश्रम में ताला नहीं लगता है, न कभी चोरी हुई है। हजारों विभिन्न प्रकार के वृक्ष स्वामी जी ने अपने हाथ से लगाए हैं और उन का पालन पोषण बच्चे की तरह स्वयं किया है। प्राचीन काल के आश्रमों की तरह यह एक अद्वितीय आश्रम, हरियाणा के रिवाड़ी शहर के समीप पटौदी से १०-१५ किलोमीटर दूर स्थित है। वास्तव में स्वामी सोमानन्दजी उच्च कोटि के सन्त, सन्यासी, साधक एवं कर्मयोगी है। उनका जीवन वास्तव में आदर्श है।

स्वामी जी ने सारे देश का देशाटन किया है। आध्यात्मिक उन्नति के लिये बड़ी गहन साधना की है। हिमालय की गुफाओं में भी एकांत वास किया है। सहजयोग और आत्मसाक्षात्कार द्वारा आत्मा और परमात्मा का मेल ही उन की योग साधना है। वे आडंबर, पाखंड, ढौंग तथा बनावटी जीवन को कतई पसन्द नहीं करते। मन राम में और हाथ काम में लगा रहे, यही उनका मूल मंत्र है।

स्वस्थ मन स्वस्थ तन

हमारे शरीर में जिस प्रकार मस्तिष्क, गर्दन, चेहरा, वक्षस्थल, आमाश्य, प्रजनन संस्थान, हाथ, पैर आदि शरीर के भाग हैं, उसी प्रकार पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियां चित्त, मन, बुद्धि, अहंकार आदि भी प्रमुख तत्व हैं। पांच ज्ञानेन्द्रियां अर्थात आंख, नाक, कान, जिह्वा और त्वचा है। आंखों से हम देखते हैं, कानों से हम सुनते हैं, नाक से हम सूंघते हैं, जिह्वा से चखते हैं और त्वचा से हम छूते हैं अर्थात स्पर्श करते हैं। इन ज्ञानेन्द्रियों द्वारा हमें ज्ञान प्राप्त होता है, ज्ञान का ज्ञान होता है। पांच कर्मेन्द्रियां अर्थात हाथ, पैर, गुप्त इन्द्रिया, (गुदा एवं उपस्थ) और मुंह है। इन इन्द्रियों के द्वारा व्यक्ति सारे कार्य करता है, इसलिए ये कर्म इन्द्रिया कहलातीं हैं। इन के अतिरिक्त चित्त, मन, बुद्धि, अहंकार आदि सूक्ष्म तत्व हैं।

यह कहावत है कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का आवास है। स्वस्थ मन और स्वस्थ तन का गहरा संबंध हैं। मन का रोगी बहुत दुःखी रहता है उसका रोग न अन्य किसी की समझ में आता है न दिखाई देता है। मानसिक रोगी अपने अंदर ही अंदर घुटता रहता है। उसकी बुद्धि उसे सही मार्गदर्शन के स्थान पर गलत सूचनाएं देती है। वह प्रत्येक पर शक करने लगता है। वह स्वयं और अपनी परछाईं से भी डरने लगता है। उसको लगता है, उस का अन्त

समय आ गया है उस का दिल काम बन्द करने वाला है लेकिन जब डाक्टर ई.सी.जी. करते हैं तो दिल ठीक कार्य कर रहा होता है। परंतु मानसिक रोगी की यह समझ में बैठाना कठिन हो जाता है कि उस का दिल मजबूत है। मन के रोगी को समझाना बहुत कठिन है और साधारण आदमी तो क्या बहुत से मनोरोग चिकित्सक भी उस रोगी के मन की व्यथा को नहीं समझ पाते।

मन के रोगी का स्नायुमंडल दुर्बल और शिथिल हो जाता है। हमारे शरीर में नस नाड़ियाँ तीन लाख है परंतु बहत्तर हजार नाड़ियां सक्रिय हैं जिनके स्नायुमंडल को स्वस्थ रखने के लिये स्वस्थ और मजबूत होनी जरूरी है। स्नायु विकार मनोरोग के जन्मदाता है। स्नायु विकार प्राय: स्वाभाविक और अस्वाभाविक कारणों से हो सकते है। किसी लंबी बीमारी, अधिक मानसिक श्रम, अधिक शारीरिक श्रम, गहरी चिन्ता, ह्रदय विदारक शोक अथवा दुख, जीवन के उत्थान पतन तथा सफलता की जगह असफलता आदि स्नायु विकार के स्वाभाविक कारण होते हैं। प्रकृति के प्रतिकूल आचरण, अमित व्यय, अप्राकृतिक मैथुन एवं जीवन में सभी तरह की अति तथा कुसंगति के कारण संस्कार हीनता एवं दुराचरण, निरूद्देश्य जीवन, निकम्मा व निठल्ला रहना आदि स्नायु विकार के अस्वाभाविक कारण माने जाते हैं।

इन मुख्य कारणों के अतिरिक्त अन्य सहायक कारण भी स्नायु विकार के लिये कारण बन जाते हैं। पौष्टिक आहार का अभाव, पाचन क्रिया का शिथल होना अथवा खराब होना, कोष्टबद्धता तथा पेट में वायु का सन्तुलन बिगड़ना, जठराग्नि का मन्द पड़ जाना, मल विसर्जन क्रिया का कमजोर हो जाना, रक्त विकार पैदा हो जाना तथा अप्राकृतिक ढंग से व्यायाम व योगादि प्रक्रियाओं का करना भी स्नायु विकार के कारण बन जाते हैं। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में हर किसी रोग में स्नायुमंडल की चिकित्सा की महत्ता पर ध्यान देने की हिदायत की गई हैं। ईसा मसीह से पांच सौ वर्ष पूर्व जब सुकरात सैनिक सेवा से निवृत होकर लौटे तो उन्होने अपने देश वासियों से कहा था कि चिकित्सा विज्ञान के एक पहलू से यदि देखा जाए तो असभ्य ग्रेवियन्स आगे बढ़े हुए हैं, "उनकी धारणा है कि मन की स्थिति सुधारे बिना शरीर स्वस्थ नहीं बन सकता।"

अच्छे स्वास्थ्य के निर्माण और नियमन में स्नायुमंडल का बहुत प्रभाव होता है। आधुनिक सभ्यता ने मनुष्य के मन और मस्तिष्क तथा स्नायुमंडल पर बहुत बुरा प्रभाव डाल रखा है। यहां तक कि नवजात शिशु भी स्नायु विकारों से पीड़ित पाये जाते हैं। स्नायुविक विकारों से बचने की सर्वोत्तम चिकित्सा व विधि, प्राकृतिक जीवन व्यतीत करना है। इस भयंकर रोग की प्राकृतिक चिकित्सा यह हैं कि नियमित जीवन, गहरी निद्रा तथा मस्तिष्क को शीतल रखा जाए। अर्थात व्यर्थ सांसारिक चिन्ताओं का चिन्तन त्याग किया जाये। व्यक्ति का मस्तिष्क तभी शान्त रह सकता है जब उसके जीवन का वास्तविक उद्देश्य हो और उसकी प्राप्ति के लिये पुरूषार्थ और परिश्रम किया जाये।

यदि व्यक्ति जीवन का उद्देश्य विलासिता पूर्ण जीवन, नाम पाना, धन बटोरना ही बना ले तो किसी दिन ये ही सब चीजें व्यक्ति की शत्रु बन जाती हैं। संसार के ज्ञात इतिहास में

संसार या मानव जाति की भलाई या उद्धार के लिए जिन जिन व्यक्तियों ने संघर्ष किया अनेक शारीरिक व मानसिक यातनाएं सहीं मगर वे पागल, विक्षिप्त तथा स्नायु विकारों से कभी पीड़ित नहीं हुए। यह प्रकृति का नियम है जो व्यक्ति उच्च उद्देश्य के लिये कष्ट उठाता है उसे प्रकृति भरपूर मानसिक व शारीरिक शान्ति, उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये प्रदान करने में संकोच नहीं करती। उस व्यक्ति का स्नायु मंडल कभी भी दुर्बल नहीं होता।

हम इस संसार में अपनी इच्छा से न जीवित हैं न जन्म लिया है। हम ईश्वर की इच्छा पर हैं। हमें इस संसार में भेजने का कोई न कोई उद्देश्य अवश्य है जिसे पूरा करना हमारा कर्तव्य है। यदि हम अपने उद्देश्य को समझ कर जीवन यापन करें तो जीवन में आनन्द और रस आता है नहीं तो जीवन नीरस और आनन्दहीन बन जाता है।

जो लोग इस तथ्य को नहीं समझ पाते और अंधाधुंध जीवनयापन करते हैं वे न अपना भला कर पाते हैं न दूसरों का। उद्देश्यहीन जीवन यापन करना जीवन को व्यर्थ ही नष्ट करना है।

जो मनुष्य अपने मन पर नियंत्रण कर लेता है वह संसार पर विजय प्राप्त कर सकता है। जो व्यक्ति अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण नहीं कर सकता वह सदैव रोगी और दुखी रहता है। मानव स्वभाव की सबसे बड़ी कमजोरी असंयम है। इन्द्रियां के वशीभूत हो कर वह काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार से उत्पन्न विकारों का दास बन जाता है। परिणाम स्वरूप वह शारीरिक और मानसिक रोगों के चक्रव्यूह में वीर अभिमन्यु की भांति घिर जाता है और उसका वहां से निकलना कठिन एवं कभी-कभी असंभव भी हो जाता है। भोग से रोग और रोग से शोक पैदा होता है।

एक अति महत्वपूर्ण व्यक्ति के बड़े भाई का देहान्त हृदय गति बन्द हो जाने के कारण हो गया। वे उस समय दूर थे जब वे अपने घर पहुंचे तो भाई का देहान्त हो चुका था। उनका दिल्ली के प्रसिद्ध हृदय विशेषज्ञ पर बहुत भरोसा था, उन्हें यह पश्चाताप होने लगा कि यदि वे दूर न होते तो अपने मित्र हृदय विशेषज्ञ के द्वारा अपने भाई को मृत्यु से बचा लेते। एक तो बड़े भाई की मृत्यु का सदमा, दूसरे मन में उन्हें मौत से बचा लेने का भ्रम व पश्चाताप, इन दोनों कारणों से वे मनोरोग के चक्रव्यूह में फंस गए। यह चक्र इतना लंबा चला कि ढाई वर्ष तक किसी दवाई ने काम नहीं किया। ज्यों ज्यों दवा की रोग बढ़ता गया। उनका सारा परिवार, रिश्तेदार बड़े परेशान थे। वे सोते, जागते हर समय मौत से डरते रहते थे। दो आदमी रात को उन की चारपाई के पास बैठे रहते तब वे सो पाते अन्यथा नहीं।

ऐलोपैथिक, आयुर्वेदिक, यूनानी, बायोकैमिक, प्राकृतिक तथा होम्योपैथिक सभी चिकित्सा पद्धतियां आजमाई गईं मगर उन का रोग काबू नहीं आता था। उन्हें स्नान करने से डर लगता था, शौचालय में भी जाते डरते थे भूख न लगने की शिकायत करते रहते थे जब कि सामान्य व्यक्ति से अधिक भोजन कर लेते थे। दिन और रात मिंलाकर साधारण स्वस्थ व्यक्ति से अधिक समय वे सो लेते थे मगर नींद न आने की शिकायत करते रहते थे। दिल्ली के राम मनोहर लोहिया हस्पताल में उन्हें इलाज के लिए भरती करवा दिया गया।

मेरे उनके घनिष्ठ संबंध थे। मैं उन्हें देखने अस्पताल गया तो वे मुझे देखते ही भावुक

हो उठे और मुझे वहीं ठहरा लिया। रात को उन्होने हमें जगाकर (उनका बड़ा पुत्र भी मेरे साथ था) हृदय विशेषज्ञ को बुलाने के लिये कहा, उन्हें लगा कि वे शरीर छोड़ रहे हैं। तुरन्त उनका रक्तचाप और ई.सी.जी. परीक्षण किया गया दोनों ही नार्मल थे। हृदय विशेषज्ञ ने कहा, "आप का हृदय तो १७ वर्ष के स्वस्थ युवकों जैसा है। आप को हृदय रोग नहीं है, आप व्यर्थ अपने परिवार को परेशान किए हुए हैं, आप निश्चिन्त रहें आप की मृत्यु बीस साल भी नहीं होगी।" मैने डाक्टर महोदय से पूछा, "आखिर क्या मामला है ? उन्होने कहा ये मन के रोगी हैं तन के रोगी नहीं। आप लोग इन्हें खुश रखने का प्रयत्न करें। इनका मन बहलाव करें, इन्हें ताश के खेल में व्यस्त करें, भ्रमण करायें,और खुशी के समाचार सुनाए। हम तो सोने की गोलियाँ खिलाकर या शक्ति के इन्जेक्शन देकर इनका इलाज कर रहे हैं। मन के रोगी का इलाज, सब इलाजों से कठिन है। समय बीतता गया, वे अपने भाई की मृत्यु को भूलने लगे और उन की एक दो पारिवारिक चिन्ताएं दूर हो गईं फलस्वरूप वे पुनः नार्मल जीवन व्यतीत करने लगे। अब वे पूर्ण हृष्ट पुष्ट स्वस्थ व्यक्ति हैं और प्राकृतिक जीवन और योग द्वारा अन्य लोगों को उत्तम स्वास्थ्य रखने का आग्रह करते हैं।

हमारे यहां सन् १९६०-६१ में पंजाब सरकार के अधिकारियों को प्रशिक्षण देने के लिए भाव व विचार प्रशिक्षण संस्थान था। उस में एक चौधरी रिसालसिंह कृषि विभाग के कृषि विकास अधिकारी प्रशिक्षण प्राप्त करने आए थे। उन्हें कभी कोबरा सांप ने काट लिया था जिसके विष का प्रभाव उनके शरीर और मस्तिष्क पर था। परहेज के तौर पर उन्हें गाय का घी लगभग एक पाव प्रतिदिन खाना पड़ता था अन्यथा उन के दिमाग पर गर्मी का प्रकोप बढ़ जाता था और वे सामान्य नहीं रहते थे। जब वे ट्रेनिंग लेने आए तो गाय का घी अपने साथ लाए। हमारे संस्थान के नियमानुसार सब को अपने भोजनालय का ही भोजन करना पड़ता था जो पर्याप्त पौष्टिक, संतुलित और रूचिकर होता था। पहले दिन नियम बता दिए गए। चौ. रिसाल सिंह ने दो रोज तक संस्थान का भोजन ही नहीं किया फलस्वरूप उस को मानसिक दौरा पड़ गया तब उसके साथियों ने मुंझे सूचित किया कि घी का प्रयोग चौ. रिसाल सिंह के लिये बहुत आवश्यक है लेकिन अब रिसालसिंह पागल हो चुके थे। सारे प्रशिक्षणार्थी उससे हमदर्दी भी करते थे और डरते भी थे। उनके चार साथी हमारे डाक्टर के साथ जाकर उसे बादशाहखान हस्पताल फरीदाबाद में दाखिल कर आए यहां मानसिक रोगियां के उपचार की कोई व्यवस्था नहीं है। सरकारी अधिकारी होने के नाते वह दाखिल कर लिया गया था। लेकिन उनके काबू से वह बाहर हो गया और उसी रात को बादशाह खान अस्पताल से भाग निकला।

सारी रात हमारा स्टाफ और सारे प्रशिक्षणार्थी उसे ढूंढते रहे लेकिन वह हस्पताल के पीछे घनी काबुली कीकरों के अंधेरे में रात भर छिपा रहा। प्रातः जब उस का दिमाग जरा ठंडा हुआ तो वहां से चल कर एक चाय की दुकान पर आ बैठा। सारे शहर में उसकी मनादी करा दी गई थी इसलिए हमें किसी ने फोन पर सूचित किया कि संदिग्ध व्यक्ति यहां बैठा है। हम वहां पहुंचे और उसे ले आए और सुरक्षा की दृष्टि से उसे बांध कर डाल दिया। उसके घर तार द्वारा सूचित किया गया। तार मिलते ही उसके घर वाले उसे लिवा ले गए। उन्होने

हमें बताया कि गाय के घी से उस का जहर दबा रहता है जब तक जहर का प्रभाव रहेगा 'घी' उस का भोजन भी है दवाई भी है। एक महीने बाद चौ. रिसाल सिंह का पत्र आया जिसमें उसने हमारे प्रति कृतज्ञता प्रगट की कि हमने उसे उसके घर सुरक्षित पहुंचवाया था। वह अब सामान्य हो गया था।

यदि शरीर में किसी जहरीले कीड़े या सर्प आदि का विष कहीं रह गया है तो वह भी मानसिक रोग का कारण हो सकता है। मलेरिया का जहर तथा सिफलिस जैसे गंदे रोग का शेष विष शरीर में पूर्ण इलाज न होने के अभाव में मानसिक रोगों का कारण बन सकता है। नशीले पदार्थ (स्मैक, अफीम, गांजा, सुल्फा, भांग, शराब) भी मानसिक रोगों को जन्म देने में बहुत सहायक बनते हैं। मैंने भांग पीने वाले कई पागल देखे जो इलाज कराने पर भी ठीक नहीं हो पाए थे और उन की मृत्यु हो गई थी। आजकल हमारा युवावर्ग स्मैक और क्रक जैसे तेज नशों का अभ्यस्त होता जा रहा है। महाविद्यालय और विश्वविद्यालयों के छात्र छात्राएँ नशीले पदार्थों व नशीली दवाईयों का खुले आम सेवन करते हैं। उनका मानसिक सन्तुलन गड़बड़ा रहा है। स्मैक जैसे तेज नशे से जीवन में निराशा और नास्तिकता का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। मंडल आयोग का विरोध करने वाले हमारे युवा युवतियाँ आत्महत्या करने को पागल जैसे हो गए थे। मुझे कुछ छात्र नेताओं ने बताया कि अधिकतर ये आत्महत्या करने वाले छात्र छात्राएं स्मैक सेवन करते हैं और जीवन से इतने निराश तथा हताश हैं कि इस बहाने मरने में ही वे अपना कल्याण समझते हैं। इनके अभिभावक भी इनसे बहुत परेशान और दुःखी हैं। मुझे तो मंडल विरोधी किसी भी युवक युवती से वास्ता नहीं पड़ा, लेकिन जिस तरह वे आत्मदाह के लिये पागलों की तरह बर्ताव करते थे और उनके मां बाप उन्हें शहीद बताकर गौरव अनुभव करते थे, उसमें स्वस्थ मानसिकता शून्य थी और रोगी मानसिकता अधिक। हमारा निजी मत है वे किसी भी मानसिकता से शहीद बने, यह समाज और सरकार के लिए गौरव की बात नहीं कही जा सकती। आखिरकार ये शहीद किशोर किशोरी, युवा युवतियाँ भारत माता की कोख के अनमोल हीरे थे।

किशोर अवस्था लड़का और लड़की के लिए बड़ी विचित्र होती है। इस अवस्था में किशोर और किशोरी की यदि मां बाप तथा अध्यापक समुचित देखभाल और संभाल न करें तो वे आग से खेलना सीख जाते हैं। यह अवस्था उन के शरीर में जहां कुछ परिवर्तन करती है वहां उनकी मानसिकता में भी बड़ी उथल पुथल होती है। इस अवस्था में उन के शरीर के अंगों का विकास होता है और उनमें कुछ नयापन भी उन्हें अनुभव होता है साथ ही उन में निर्भयता, उत्साह और उमंग हिलोरें लेने लगता है। विपरीत लिंग की ओर उन का आकर्षण चुंबक की तरह एक दूसरे को अपनी ओर खींचता है। वे बड़ी तीव्रता से किशोर अवस्था पार करके युवावस्था की ओर बढ़ रहे हैं। काम वासना और काम विकार किशोर अवस्था से उन्हें घेरने लगते हैं। अच्छे अभिभावक व दूरदर्शी अनुभवी शिक्षकों के अभाव में युवा युवतियाँ यौन अपराधी बन जाते हैं। इस संरक्षण के अभाव में राष्ट्र का युवा वर्ग बरबाद हो जाता है। तेरह से उन्नीस वर्ष की आयु में देश के भावी नागरिक कुसंग के कारण गंदी गंदी हरकतें,आदतें सीख कर अपने जीवन को तबाह कर लेते हैं। वे अप्राकृतिक मैथुन तथा

अनैतिक जीवन को पसन्द करने लगते हैं। उनके संरक्षक समझते हैं वे कॉलेज और विश्वविद्यालय शिक्षा प्राप्त करने गए हैं मगर वे कुछ और ही सीखते हैं यदि आप को यकीन न हो तो दिल्ली या बड़े शहरों के समीप के ऐतिहासिक स्थलों, खंडहरों, पर्यटक स्थलों, एकान्त जंगलों में अपने बेटे बेटियों के सम्मेलन शिक्षा सत्र के दिनों में पढ़ाई के समय देख सकते हैं।

हमारे युवक युवतियों के जीवन के निर्माण काल में सहशिक्षा ने जीवन नष्ट करने में आग में घी का काम किया है। सिनेमाघर अपराध सिखाने के केन्द्र बन गए हैं। मनोरंजन मनबहलाव न रहकर मन को रोगग्रस्त करने लगा है। युवक युवतियों की, जब उनकी इच्छाओं की पूर्ति नहीं होती तो वे निराश और हताश होकर मन के रोगी बन जाते हैं। जैसे तैसे शिक्षा पूरी करके गृहस्थ जीवन में निराश मानसिकता के साथ प्रवेश करते हैं और गृहस्थ आश्रम में वे अपने को बंधा-बंधा अनुभव करते हैं। दहेज और अनमेल विवाहों के कारण आत्मदाह और आत्म हत्याओं तथा जलने जलाने का सिलसिला चलने लगता है। ये अनचाहे अपराध, कुशिक्षा, कुसंस्कार और अनैतिक जीवन यापन के कारण, मानव समाज के लिए कलंक के टीके बन कर रह गए हैं।

एक और उदाहरण मुझे याद आ रहा है। दो भाईयों में बड़ा प्रेम था और दोनों की पत्नियाँ सगी बहनें थीं। ये मेरे मित्र के दामाद थे इसलिए दोनों भाईयों का आना जाना लगा रहता था। एक दिन छोटा भाई आया और मुझे अपने बड़े भाई के पागल होने की सूचना देकर चिन्ता के गहरे सागर में डूबने लगा। मैंने कहा, कल अपने बड़े भाई को मेरे पास ले आओ तब उस के उपचार की व्यवस्था करेंगे। बिल्कुल चिन्ता मत करो वह पहले से भी स्वस्थ और तगड़ा हो जाएगा। अगले दिन दोनों भाई आए। मैंने रोगी भाई से कुछ बातचीत की कोशिश की लेकिन वह मेरे सवालों के जबाव देता ही नहीं था। इतना होश उसे जरूर था कि वह मुझे पहचानता था। मेरी ओर एक क्षण भर देखता और आंखे जमीन में गड़ा लेता था। वह संकोच और शर्म के कारण नीचे सिर झुका लेता था। मैनें मनोविज्ञान की सहायता से उस युवक की मनोदशा और मनोव्यथा को कुछ समझने की कोशिश की और उसके छोटे भाई को अलग ले जाकर कुछ बातें की।

उस के भाई को मैंने कहा कि तुम्हारा भाई पागल नहीं है। यह हीन भावना का शिकार हो गया है हीनभावना इस के मस्तिष्क में गहराई से बैठ गई है। इसकी पत्नि ने इस अवस्था में इसे पहुंचा दिया है। आप अपनी भाभी से स्पष्ट बात करके मुझे बताएं। उसकी पत्नि ने अपने पति की कमजोरी को स्पष्ट बता दिया। वह शीघ्रपतन का रोगी था। उस की औरत ने उसे एक दिन बुरी तरह झिड़क दिया था उसने समझा, यह औरत तुझे नामर्द समझती है, बस यही हीनभावना थी और उसके कारण वह मानसिक तौर पर असामान्य हो गया था। उसका शरीर सूख गया था, बोलना बन्द हो गया था। गुपचुप अकेला बैठा रहता था। न खाता था, न पीता था, और थोड़े ही दिनों में छः महीने जैसा बीमार लगता था। फरीदाबाद के समीप एक परमार्थी आयुर्वेदाचार्य ने पागलों के इलाज के लिए आश्रम बना रखा है, उन के पास भिजवा दिया। कुछ दिन के उपचार से उस के जीवन में आशा और उत्साह का संचार होने

लगा उस का सूखा शरीर कान्तिमय और स्वस्थ होने लगा। उसकी धर्मपत्नि को समझाया गया कि भविष्य में कभी भी उस के साथ पहले जैसा कठोर बर्ताव न करें और उससे सदैव प्यार और आदरपूर्वक बरते। वह युवक, यदि उसके भाई ने समझदारी से-न संभाला होता तो पागलपन के नजदीक तो पहुंच ही गया था। काम-जीवन में अज्ञान और अधैर्य युवक युवतियों को मन का रोगी बना देते हैं।

बाजीकरण औषधियों के नाम पर युवक युवतियों को ठगने वाले शाही हकीम, राजवैद्य और आधुनिक डाक्टर भी समाज सुधारक कम हैं और पैसा बटोरने वाले अधिक। समाचार पत्रों में उनके आकर्षक विज्ञापन युवक युवतियों को गुमराह किये बिना नहीं रहते।जब तक हमारे युवा, युवतियाँ प्राकृतिक जीवन, सात्विक व पौष्टिक आहार, व्यायाम और संयम का आचरण अपने जीवन में नहीं करेंगे, उन्हें कोई भी बाजीकरण औषधि जीवन का आनन्द नहीं दे सकती। बाजीकरण औषधि का प्रभाव क्षणभंगुर व अस्थायी होगा जबकि प्राकृतिक जीवन, शुद्ध सात्विक संतुलित तथा पौष्टिक भोजन, नियमित संपूर्ण शरीर का वैज्ञानिक ढंग से व्यायाम और संयमी जीवनयापन का प्रभाव आजीवन रहेगा। इस लिए हमारा परामर्श है, हमारे किशोर किशोरी, युवा युवतियाँ अपने प्राचीन इतिहास और आर्ष ग्रंथों से प्रेरणा लें और आधुनिकता के बनावटी जीवन से परहेज करके शुद्ध भारतीय जीवन पद्धति, जो वैज्ञानिक है, उसे अपनाकर अपना जीवन सफल बनाएं।

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत, यह कहावत हमारे देश में बहुत प्रसिद्ध है। हार और जीत, सफलता और असफलता का आधार मन को माना है। वास्तव में जब मनुष्य का मन जीवन में पराजय मान लेता है तब उसका जीवन नीरस और एकाकी रह जाता है। यदि मनुष्य किसी व्यवसाय व व्यापार में असफल हो जाता है तो पुन: पुरूषार्थ और परिश्रम करके उसमें सफलता प्राप्त कर लेता है। एक छात्र अपनी परीक्षा में असफल हो जाता है तो पुन: परीक्षा देकर परीक्षा में सफलता प्राप्त कर लेता है। लेकिन मन का हारा व्यक्ति जीवन में निराश, हताश और लाचार हो कर मुर्दा जीवन जीता है। मनोबल मनुष्य की बहुत उच्च कोटि की विशेषता है। संसार में जितने भी व्यक्ति किसी क्षेत्र में महान हुए हैं उन का मनोबल उन की महानता का विशेष कारण रहा है। उच्च मनोबल का व्यक्ति संसार का सबसे बड़ा कुबेर, सबसे बड़ा बुद्धिमान, सबसे बड़ा बलवान, सबसे बड़ा साहसी और श्रेष्ठों में श्रेष्ठ होता है। मनोबल रहित व्यक्ति धनवान होते हुए भी निर्धन है, बुद्धिमान होते हुये भी मूर्ख है। बलवान होते हुये भी निर्बल है। साहसी होते हुये भी कायर है। ये सब गुण तभी चमकते हैं जब वह व्यक्ति मनोबल से भरपूर है, अन्यथा नहीं।

उच्च मनोबल के व्यक्ति की साधारण पहचान उस के दैनिक जीवन से पहचानी जा सकती है। ऐसा व्यक्ति धैर्यवान होता है, वह साधारण और असाधारण परिस्थितियों में कभी भी धीरज नहीं छोड़ता, वह समरस रहता है। उसके चेहरे पर सदैव प्रसन्नता की झलक और मुसकराहट फैली रहती है। कभी भी वह किसी कार्य को हड़बड़ी और घबराहट में सम्पन्न नहीं करता है। जिस प्रकार सोना अग्नि में तप कर कुन्दन बन जाता है उसी प्रकार धैर्यवान

व्यक्ति, आपत्तियों और विपत्तियों में तप कर, साधारण से असाधारण और महान व्यक्ति बन जाता है।

एक बार नेपोलियन बोनापार्ट के धैर्य और मनोबल की परीक्षा लेने के लिये एक षडयंत्र रचा गया नेपोलियन अपने मित्रों के साथ चाय पीने और बतियाने में व्यस्त था। अचानक बहुत भयंकर धमाका हुआ उस के सब साथी कुर्सियों से भयातुर हो कर इस प्रकार लुढ़क गये जैसे भूकंप के आने पर धरती माता डांवाडोल होकरऊपर नीचे हो जाती है, शहर के शहर धराशायी और भूगर्भ में समा जाते हैं। उन के कपड़ों पर चाय गिर गई और उन की प्याली जमीन पर गिर पड़ी, मगर नेपोलियन बड़े आराम से चाय पीता रहा जैसे कोई घटना वहां घटी ही न हो। नेपोलियन से द्वेष रखने वाले षडयंत्रकारियों को उसके मनोबल और धैर्य की इस परीक्षा से विश्वास हो गया कि उसे पराजित नहीं किया जा सकता।

स्वस्थ मन का व्यक्ति जहां धैर्यवान होता है वहां वह निर्भय और निडर भी होता है। वह मृत्यु से भी नहीं डरता। व्यक्ति को मृत्यु का सब से बड़ा डर होता है। शेक्सपियर ने ठीक ही तो कहा है कि कायर एक दिन में कई बार मरता रहता है मगर बहादुर व्यक्ति जीवन में केवल एक ही बार प्राण त्यागता है। आध्यात्मिक व्यक्ति मृत्यु से कभी नहीं डरते। मृत्यु से भयभीत व्यक्ति आध्यात्मिक नहीं है और न उस की परमपिता परमात्मा से रसाई है न उस की सर्वशक्तिमान परमेश्वर में सच्ची आस्था है। जिस प्रकार रेल गाड़ी में बिना टिकट यात्रा करने वाले यात्री को टिकट चैकर का भय मन पर बना रहता है उसी प्रकार व्यक्ति सदैव मृत्यु और अन्य प्रकार के भयों से भयभीत बना रहता है और कभी भी सुखी जीवन का आनन्द नहीं लूट पाता। निडरता एवं निर्भयता सुखी जीवन की कुंजी है।

संसार के इतिहास में महाभारत के युद्ध के दौरान कुरूक्षेत्र के ऐतिहासिक रणक्षेत्र में योगीराज श्री कृष्ण और अर्जुन का संवाद मन की स्थिति को सही समझने के लिए अकेला उदाहरण मेरे विचार से मनोरोगियों के उपचार के लिए पर्याप्त है। यह सारा संवाद गीता जैसे जीवनदायिनी पुस्तक में लिपिबद्ध है। गीता के अठारह अध्याय सात सौ श्लोक मन और आत्मा के बीच पड़े आवरण को हटाने के लिए भगवान कृष्ण ने मोह और अज्ञान से पीड़ित अर्जुन को स्वस्थ करने के लिए कहे थे। अर्जुन उच्च कोटि का धनुर्धर समर्पित शिष्य, निद्राजित, श्री कृष्ण का परम प्रिय शिष्य व सखा कुरूक्षेत्र की रण भूमि में अपने परिवार के नाश के मोह से घबरा उठता है और युद्ध न लड़नेका मन बना बैठा। अर्थात जो स्थिति आयुर्विज्ञान के अनुसार एक मनोरोगी की होती है वही स्थिति महाभारत के युद्ध के प्रथम दिन अर्जुन की हो गई थी।

श्री कृष्ण जी तो योगीश्वर भी थे और योगेश्वर भी। वे तो नर के रूप में नारायण थे। अर्जुन के मनोरोग का उपचार करना उन के लिए साधारण बात थी। उन्होंने अर्जुन को गीता का उपदेश देकर स्वस्थ किया और अर्जुन ने पूर्ण मनोबल के साथ अठारह दिन तक श्री कृष्ण के नेतृत्व में महाभारत का युद्ध किया। गीता जैसा ग्रंथ विश्व में दूसरा नहीं है। इस ग्रंथ में जो सूक्ष्म ज्ञान अर्जुन को भगवान कृष्ण ने दिया है वह मानव जाति के लिए अमर सन्देश है। महात्मा गांधी ने गीता को 'गीता माता' कहा है और अपने जीवन का सम्बल तथा आधार

माना है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई महात्मा गांधी जी ने सत्य और अहिंसा के हथियार से जीती थी यह भी 'गीता' के उपदेश का कमाल है, चमत्कार है।

गीता में कर्म का अटल सिद्धांत, कर्म करो और फल की इच्छा मत करो। निष्काम भाव से किया हुआ कर्म ही श्रेष्ठ है। कर्म करने के पूर्व और बाद मनुष्य को जो फल की इच्छा रहती है यहीं से उस के मन में अज्ञान का आवरण प्रारंभ होता है। कर्म करने का अधिकार प्राणी का है फल परमेश्वर के आधीन है। गीता में अनासक्त योग का उपदेश है। संसार की किसी भी चीज, प्राणी में आसक्ति होना ही दुःख का मूल कारण है। इसी आसक्ति से हमें मोह ममता, अपना पराया, तेरा मेरा का अज्ञान आ घेरता है। अपने सगे संबंधियों के बिछोह पर हम कितना विलाप करते हैं दूसरों को उन के यहां किसी मृत्यु पर हम उपदेश बघारते हैं। कर्तव्य पालन को ही श्री कृष्ण ने सच्चा धर्म कहा है। युद्ध क्षेत्र में केवल युद्ध लड़ना ही अर्जुन का धर्म था क्योंकि क्षत्री का धर्म व कर्तव्य युद्ध भूमि में लड़ना है युद्ध भूमि से विमुख होकर भागना कायरता है।

गीता में 'समर्पणभाव' को सब से उत्तम भक्ति अथवा पूजा माना है। जब तक भक्त में भगवान के प्रति, शिष्य में गुरू के प्रति सच्चा समर्पण नहीं है न भक्त की मुक्ति हो सकती है न शिष्य को सच्चा ज्ञान और गति हो सकती है। गीता के अठारह अध्याय, गृहस्थी, योगी, राजा प्रजा, ज्ञान अज्ञान, कर्मयोग, अनासक्त योग मन बुद्धि, अहंकार, आत्मा, परमात्मा, इहलोक, परलोक, आवागमन, मुक्ति और मोक्ष, नर और नारायण, भक्त और भगवान, गुरू और शिष्य योगीश्वर और योगेश्वर, सत्य और अहिंसा, पाप और पुण्य आदि सभी गहन गूढ़ विषयों पर वैज्ञानिक व्याख्या सेओत प्रोत है, जो एक शाश्वत सत्य है।

मन को स्वस्थ रखने के लिए मनोरंजन भी आवश्यक है। आजकल मनोरंजन के नाम पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों की परंपरा सी पड़ गई है। सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भी कुंवारी अथवा सुन्दर कन्याओं के नृत्य और शरीर प्रदर्शन तथा कामोत्तेजक भाव भंगिमाएं प्रमुख हैं। भारतीय संस्कृति और पाश्चात्य संस्कृति में जमीन आसमान का अन्तर है। भारत देश में नारी की शालीनता, लज्जा, मर्यादा का विशेष आदर है जब कि पश्चिम की सभ्यता में नम्रता, मर्यादाहीनता और स्वच्छंद यौन जीवन को बुरा नहीं माना जाता। पंजाब के प्रमुख सिख नेता मास्टर तारा सिंह जी स्वाधीनता के पश्चात प्रचलित कलचरल प्रोग्राम (सांस्कृतिक कार्यक्रम) को कंजरल प्रोग्राम कहा करते थे। कंजर जाति के लोग गाना नाचना बेशरम होकर कर सकते हैं। हमें याद है रूस के नेता बुलगानिन भारत पधारे थे। वे पंजाव भाखड़ा बांध को देखने गए। वहां उनके सम्मान में सांस्कृतिक सन्धया कार्यक्रम (कलचरल इवनिंग प्रोग्राम) प्रस्तुत किया गया। जिसका आंखों देखा वर्णन, हमारे एक मित्र, जो वहां पर तैनात थे उन्होंने निम्न प्रकार सुनाया।

सूर्य अस्ताचल को जा रहा था। भाखड़ा बांध के खुले प्रांगण में सांस्कृतिक कार्यक्रम रखा गया था। पंजाब की सोलह से बीस वर्ष की सुन्दर मांसल युवतियां बिकनी पहन कर अर्थात तैराकी पोशाक में स्टेज पर नृत्य और नृत्य संगीत के लिए प्रस्तुत की गईं। डूबते सूरज की लालिमा की प्रतिछाया ने इन युवतियों के सौन्दर्य और शरीर सौष्ठव को कहीं अधिक

मुखर कर दिया था। कार्यक्रम शुरू हुआ रूसी नेता बुलगानिन ने अपना रूमाल निकाल कर अपनी आंखों पर रख लिया। पं. जवाहरलाल नेहरू ने समझा डूबते हुए सूरज की लालिमा से बुलगानिन महोदय परेशान होकर अपनी आंखों को ढक रहे हैं। लेकिन बात यह नहीं थी। नेहरू जी ने बुलगानिन से आखिर पूछ ही लिया। श्री बुलगानिन ने नेहरू जी को कहा, "हमारे देश में भी सांस्कृतिक कार्यक्रमों की परंपरा चली आ रही है लेकिन हम बेटियों को इतनी नग्न अवस्था में नहीं देख सकते, जैसा कि मैं आज इस संध्या के समय देख रहा हूँ। भारत देश की परंपरा तो विश्व के लिये आदर्श थी लेकिन आज भारत अपनी सांस्कृतिक परंपराओं की मर्यादा को भूल कर पश्चिम की नकल कर रहा है जो सराहनीय नहीं है।" उस के पश्चात इस तरह की सांस्कृतिक सन्ध्याओं पर मर्यादित रहने का आदेश जारी किया गया।

वास्तव में बात देखने में छोटी सी है मगर इस के परिणाम राष्ट्रचरित्र पर गहरा प्रभाव डालते हैं। मैं इस संबंध में इतना सुधार करना चाहता हूँ। चाहे दूरदर्शन कार्यक्रम हों, चाहे सिनेमा घरों में चलनेवाली फिल्में, उन का स्तर और गुणवत्ता यह होनी चाहिये कि मां, बाप, बेटी, बेटा, पुत्रवधु सभी परिवार के सदस्य किसी भी कार्यक्रम को एक साथ बैठ कर निस्संकोच देख सकें और सुन सकें, वही सांस्कृतिक कार्यक्रम ठीक है, वही मनोरंजन कार्यक्रम सही कार्यक्रम हैं, अन्यथा नहीं।

विवाह शादी के शुभ अवसर पर गांवों में ग्रामीण, महिलाएं सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया करतीं थी, उस कार्यक्रम को केवल महिलाएं ही देख सकतीं थीं। पुरूष वर्ग को इजाजत नहीं थी ताकि महिलाएं सहज स्वाभाविक रूप से कला का प्रदर्शन कर सकें। उत्तर भारत में इस कार्यक्रम का प्रचलित नाम 'खोड़िया' था। इसी प्रकार उन के लोकगीत और लोकनृत्य मर्यादापूर्ण होते थे।

पुरूष वर्ग भी अपने मनोरंजन कार्यक्रम बड़ी शालीन भाषा और भाव भंगिमाओं के साथ किया करते थे। लेकिन अब धीरे- धीरे इनके कार्यक्रमों में भी नैतिक शिथिलता आती जा रही हैं।

आज इस विज्ञान की दुनिया में मनोरंजन साधन सिनेमाघर, दूरदर्शन फिल्में, रेडियो, वीडियो फिल्में तथा संगीत कैसेट आदि मुख्य हैं। मनोरंजन के नाम पर घटिया अश्लील, कामोत्तेजक, अपराधोन्मुख, मर्यादाहीन कार्यक्रमों की भरमार है। जिनका हमारी युवा पीढ़ी के मन मस्तिष्क पर गहरा कुप्रभाव पड़ रहा है। अब तो घर-घर में टेलीविजन सैट लगे हुए हैं जो घर बैठे बच्चों, किशोर किशोरियों, युवा युवतियों के मन को अज्ञान अंधकार और अपराधों की ओर बरबस खींचे लिए जा रहे हैं। आज हमारे युवा युवतियों के जीवन का दिव्य आदर्श नहीं है। गत वर्ष दूरदर्शन पर रामायण और महाभारत का प्रोग्राम दिखाया गया। जिस समय ये कार्यक्रम चलते थे, राजमार्ग सुनसान हो जाते थे। सरकार चाहे तो क्या नहीं कर सकती। राष्ट्र की एकता, अखंडता, राष्ट्रीयता तथा राष्ट्र चरित्र निर्माण के कार्यक्रम प्रस्तुत करना दूरदर्शन और आकाशवाणी का मुख्य ध्येय होना चाहिये, जिसकी देश को आज पहले की अपेक्षा कहीं अधिक आवश्यकता है। न कि अश्लील, कामुक, अपराध फिल्में आदि।

दूरदर्शन सिनेमाघर नहीं हैं जहां दर्शकों की पसन्द प्रमुख है वरना सिनेमा घर बंद हो जाएगा। दूरदर्शन तो जन शिक्षण और स्वस्थ मनोरंजन का राष्ट्रीय मंच है जिस का, काम राष्ट्रराज्य का कल्याण और उत्थान है, न कि पतन।

मनोरोग पीड़ित व्यक्तियों को मनोरोग विशेषज्ञ मनोरंजन का परामर्श देते हैं ताकि उसका मन अनर्गल और अनावश्यक विचारों से बचा रहे जो उसे हर समय दबाये रहते हैं। डाक्टरों को ताश के खेल का परामर्श कई रोगियों को मैंने देते देखा है। इससे रोगी का समय ठीक बीत जाता है और मन भी उस का ताश के खेल में लगा रहता है। अच्छे -२ कैसेट सुना कर रोगी को स्वस्थ बनाने की चेष्टा की जाती है। नई दिल्ली के समीप कालका जी के पास युद्ध पीड़ित रोगियों के लिए चैशायर होम है। वहां ऐसे रोगी हैं जिन्हें आप देख भी नहीं सकते। चैशायर होम में उन की सेवासुश्रषा की उत्तम व्यवस्था थी। प्रत्येक रोगी को उस के धर्म की पुस्तक पढ़ कर सुनाई जाती थी। उसके मन बहलाव की सुन्दर व्यवस्था थी। ये रोगी ऐसे लोग थे जो सम्पूर्ण शारीरिक अपाहिज थे। किसी के पैर नहीं थे, किसी के हाथ नहीं थे किसी का आधा चेहरा विकृत था, किसी के आधे शरीर के प्रमुख अंग नदारद थे। इन देश भक्त सैनिकों की दुर्दशा का हाल यह था न उनके घरवाले उन्हें रखने को तैयार थे, न सैनिक हस्पताल। श्री चैशायर जो सेना निवृत अधिकारी थे उन्होंने अपना जीवन इन असहाय, बेसहारा परम देशभक्तों की सेवा और उपचार के लिए समर्पित कर दिया था और विश्व भर में उसने दानी महानुभावों की सहायता से चैशायर होमों का जाल सा बिछा दिया था।

संयोग ऐसा हुआ मैं अपने एक साथी के साथ वहां से गुजर रहा था तो चैशायर होम देखने की इच्छा बलवती हुई। मैंने समाचार पत्रों में इसके बारे में पढ़ा था। तत्कालीन राष्ट्रपति डा.राजेन्द्रप्रसाद ने इस का उद्घाटन किया था। हम दोनों वहां की इन्चार्ज जो बर्मी महिला डाक्टर थीं। उसकी आज्ञा से चैशायर होम को देख पाए। श्री चैशायर के इस मानवीय सेवा आश्रम को देखकर महात्मा गांधी द्वारा श्री परचुरे शास्त्री की सेवा सुश्रुषा की याद आगई। श्री परचुरे शास्त्री गलित कुष्ट रोग से पीड़ित थे। गांधीजी ने उन्हें अपने आश्रम में बुलवा लिया दोपहर के भोजन के उपरान्त स्वयं शास्त्री जी के गलित कुष्ट के घावों की सफाई स्वयं करते और दवाई लगाते थे। एक दिन परचुरे शास्त्री ने कहा, "बापू आप का समय बड़े कार्यों के लिए है आप भोजन उपरांत मेरे घावों को धोते हैं आप कृपया न आया करें, मुझे ईश्वर और अन्य डाक्टरों के भरोसे पर छोड़ दें।" गांधीजी ने तुरंत कहा, "शास्त्रीजी, तुम मुझे अपनी सेवा करने से रोकते हो, मुझे तुम्हारी सेवा करने में जो आनन्द मिलता है वह किसी अन्य कार्य करने में नहीं मिल पाता। आप मुझे इस महान सेवा कार्य से नहीं रोक सकते।"

मेरा निश्चित मत है, सेवा से व्यक्ति का अहंकार दूर होता है और मानसिक तथा आत्मिक शान्ति व शक्ति प्राप्त होती है। वे लोग परम सौभाग्यशाली हैं जो उन की सेवा में समर्पित हैं जिन की सेवा करने वाला इस संसार में दूसरो कोई नहीं है। ईसाई धर्म संसार में दीन दुखियों की सेवा के कारण फैला है। मिशनरी हॉस्पटलों में मिशनरी भाव से सेवारत डाक्टर एवं नर्सें विश्वविख्यात हैं।

मन को निरोग और स्वस्थ रखने के लिए मनोरंजन अवश्य करना चाहिए। हंसना,

गाना, गाना सुनना, अच्छे नाटक, ड्रामें तथा फिल्में देखना मनोरंजन के साधन हैं। प्राकृतिक दृश्यों को देखना और जंगल की सैर, मन को बहुत स्वस्थ बनाते हैं। ऐतिहासिक स्थलों और तीर्थस्थानों की यात्रा भी मन बहलाव और परिस्थितियों के परिवर्तन का अच्छा उपाय है। वर्ष के बारह महीने बराबर एक ही स्थान और कार्य में लिप्त रहना व्यक्ति के मन को थका देता है। इसलिए परिवर्तन के लिए पर्यटन व देशाटन बहुत जरूरी है, जहां इसका शैक्षणिक महत्व है, वहां मन को ताजा और स्वस्थ रखने के लिये भी आवश्यक है।

मैं अपना एक निजी अनुभव लिखने का लोभ संवरण नहीं कर सकता। मेरे छोटे भाई की मृत्यु लंबी बीमारी के कारण हो गई थी, वह लंबी बीमारी और लंबे इलाज से भी नहीं थका था, उसमें जीवित रहने की बड़ी इच्छा थी जिसका मुख्य कारण इकलौता पुत्र था, जिसके लिए उसने अपने मन में बड़े स्वप्न संजोकर रखे थे। एक दिन जब डाक्टरों ने उसे लाइलाज घोषित करके निराशा के गर्त में धकेल दिया तब उसने अपने अकेले लाड़ले पुत्र के भविष्य की मुझ से चिन्ता प्रगट की और कुछ जिम्मेदारी मुझ पर डाली। अन्त में उसने होम्योपैथिक चिकित्सा को भी आजमाया मगर मृत्यु की कोई औषधि नहीं है। वह लगभग दो मास पश्चात चल बसा। उसके वे अंतिम शब्द मेरे मन पर गहरा असर छोड़ गए।

मैं अपने परिवार में निर्मोही व्यक्ति माना जाता हूँ लेकिन छोटे भाई की मृत्यु ने मुझे झकझोर दियां था। जब भी जरा सा अकेला होता उसके अंतिम शब्द याद आ जाते तो बड़ी पीड़ा होती। लगभग एक माह पश्चात कुछ सहयोगियों के साथ अपने दिवंगत मित्र के पुत्र की बारात में गया लौटते समय साथियों ने सरिसका पर्यटन केन्द्र और घाटी देखने का प्रस्ताव रखा और हमने सरिसका घाटी में कार द्वारा सैर की। जंगल की हरियाली, स्वच्छ वायु और वातावरण, वन्य जीवों की स्वच्छन्दता और उनका भ्रमण जी भरकर देखा। मुझे लग रहा था जैसे मन को शान्ति और सन्तोष दिया जा रहा है और मेरा दुःखी मन स्वस्थ हो गया। वास्तव में यह प्राकृत जीवन का संदेश है। संभवतः ऋषि,मुनि, सन्तों के आश्रम जंगलों में इसीलिए होते थे कि वहां उनका मन सदैव निर्मल, स्वस्थ तथा निर्विकार रहता था।

मन राम में और हाथ काम में

चार वेद, छः शास्त्र, ग्यारह उपनिषद, गीता अन्य सभी आध्यात्मिक तथा धार्मिक ग्रंथ व पवित्र पुस्तकों में मन को चंचल और हर समय किसी न किसी धुन व सिमरन में लगा हुआ माना है। मन की गति वायु से भी तीव्र है। विज्ञान ने आज तक कोई इतना तीव्रगामी यान नहीं बनाया है जिसमें सवार होकर मन की गति को मापा जा सके । अभी सोचा और मन अमेरिका पहुंच गया। सैकिंड भी नहीं लगा और मन अमेरिका से वापिस आ गया। श्री परमहंस अद्वैत मत के संस्थापक श्री परमहंस बाबा अद्वैतानन्द जी महाराज प्रायः गुरूमुखों को उपदेश में कहा करते थे, "मन राम में और हाथ काम रखो, जीवन सफल हो जायेगा।" मन जब राम के सिमरन में लग जायेगा तो वह काम, क्रोध, लोभ,मोह,अहंकार के मायाजाल से मुक्त हो जायेगा और इन्सान जब अपनी रोजी रोटी कमाने के लिए काम में व्यस्त रहेगा

तो वह आत्मनिर्भर हो कर किसी पर भार नहीं बनेगा। इस एक पंक्ति के उपदेश में सारी रूहानी शक्ति भरी पड़ी है। श्री परमहंस अद्वैतमत का प्रधान केन्द श्री आनन्दपुर मध्य प्रदेश के गुना जिले में स्थित है।

यह रूहानी केन्द्र जो आध्यात्मिक व रूहानी शिक्षा के लिए अपने आप में आदर्श है वहां आत्मनिर्भरता का भी अद्वितीय व आदर्श नमूना है। इस मत के प्रति समर्पित हजारों महात्मागण एवं लाखों अनुयायी हैं। जब जब श्री आनन्दपुर तथा इसके अन्य केन्द्रों में जैसे ग्वालियर, श्री सन्तनगर, श्रीप्रयागधाम आदि में सत्संग समारोह होते हैं महात्मागण संगत की सेवा विनम्र और निष्काम भाव से करते हैं। प्रथम पादशाही परमहंस बाबा अद्वैतानन्द जी महाराज ने कहा था, कलियुग का प्रभाव होगा कि साधु को न सम्मान मिलेगा न भीख। इसलिए हमारे महात्मागण भिक्षावृति नहीं करेंगे।

भारत में साधु सेवा की परंपरा थी कि गृहस्थी लोग उन की सेवा करके अपने धन्य भाग्य समझते थे मगर कलियुग का प्रभाव होगा कि साधु को गृहस्थी लोग भिक्षा दे कर भी खुश नहीं होंगे। भारत देश में पचास लाख साधु हैं। कितने हैं उन में जो परमार्थ के लिये समर्पित हैं ? इसलिये श्री परमहंस अद्वैत मत का साधु, गृहस्थियों की सेवा को अपना परम कर्तव्य समझेगा। श्री आनन्दपुर, श्री सन्तनगर, श्री प्रयागधाम आदि सभी केन्द्रों में आत्मनिर्भरता का स्वप्न साकार किया गया है। नमक, पैट्रोल, डीजल, औषधि एवं मशीनरी को छोड़कर सभी खाद्य पदार्थ, वस्त्र तथा अन्य जीवनोपयोगी वस्तुएं, वहां पैदा की जाती हैं। ये आश्रम सरकार के मोहताज नहीं हैं। आवश्यकता से अधिक अन्न आदि सरकार को दे दिया जाता है। हजारों हजार महात्मा कृषि व कुटीर उद्योंगों में प्रशिक्षित व अनुभवी हैं। सभी आश्रमों की आवश्यकताएं वे स्वयं पूरी कर लेते हैं। होली, दिवाली, दशहरा, जन्माष्टमी, गुरूपूर्णिमा, बैसाखी आदि पर्वों के शुभावसर पर लाखों स्त्री, पुरूष, हजारों भक्त, भक्तानी तथा महात्मा व बाईयां सत्संग समारोहों में रूहानी भूख को तृप्त करने के लिए पांचवी पादशाही परमहंस दातादयाल श्री श्री १०८ श्री स्वामी दर्शनपूर्णा आनन्द जी महाराजजी के श्री वचन सुनने और दर्शन करने आते हैं। सारी संगत भंडारे में भोजन करती है। श्री आनन्द पुर में दो हस्पताल है जिन में एक साधारण दूसरा असाधारण, जो सुखपुर में है।

श्री आनन्द पुर तीर्थस्थल जहां आबाद है, ये ऊबड़, खाबड़, बीहड़, वीरान, घना जंगल, पथरीली भूमि तथा वन के हिंसक प्राणियों का आवास था। ग्वालियर महाराज से इस सघन जंगल को निश्चित अवधि में आबाद व हरा भरा करने की शर्त पर पट्टे पर लिया गया था जो अवधि से पूर्व आबाद व कृषि योग्य बना दिया गया। महात्माओं, साधु संगत सभी ने कठोर परिश्रम करके इस स्थान को इन्सानों के रहने लायक बनाया है। वे सभी पुण्य आत्माएं धन्य हैं जिन्होने इसे धरती पर स्वर्ग बनाया है। वास्तव में वे इस आदर्श तीर्थधाम की बुनियाद के पत्थर बन कर रह गए जिन्होने दिन रात कठोर शारीरिक परिश्रम करके पथरीली भूमि को कृषि योग्य बनाया जहां आज अन्न की खेती और फलों के बागीचे लहलहा रहे हैं पाताल तोड़ कर मीठा स्वास्थ्यप्रद पानी वहां उपलब्ध कराना एक चमत्कार है। मध्यप्रदेश सरकार अपनी जनता को पीने का पानी और कृषि के लिए पानी पाताल तोड़ कर अभी तक

उपलब्ध नहीं करा सकी जब कि श्री आनन्दपुर में पानी का 'आनन्द सरोवर' महात्माओं के श्रमदान की कहानी की बरबस याद दिला देता है।

श्री आनन्दपुर तीर्थधाम के विषय में पूर्ण विस्तार से लिखना मेरी शक्ति से बाहर है, न हम जैसे अकिंचन को उसके विषय में प्रचार करने की अनुमति है। मैंने जितना भी इस विषय में लिख दिया है वह मेरी अनाधिकार चेष्टा ही है आशा है इसे अन्यथा नहीं लिया जाएगा। मैंने, 'मन राम में और हाथ काम में', जैसे सारवचन के दाता परम पूजनीय परम हंस बाबा अद्वैतानन्द जी महाराज के प्रसंग के कारण जिक्र कर लिया है, जिसे मैं अपना परम सौभाग्य मानता हूँ।

मन को राम के साथ जोड़ना बिना सतगुरू के संभव नहीं है। संसार के सभी संतों ने मन को काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार के रूप में व्यक्त किया है। आत्मा को मन और शरीर की कैद से मुक्त कर इस के मूल स्त्रोत परमात्मा के साथ मिलाने का काम सभी युगों में सभी संतो ने, चाहे वे किसी भी देश के रहे हों, एक शब्द मार्ग या नाम मार्ग का अनुसरण किया है। इस संसार की सभी वस्तुएं आत्मा और इसके मूल स्रोत परमात्मा अर्थात शब्द धुन के अतिरिक्त नश्वर हैं। वे वस्तुएं परिवर्तनशील हैं। यह संसार काल के आधीन है, मन, काल का प्रतिनिधि हैं। आत्मा, परमात्मा का स्वरूप है।

मन, आत्मा को आवागमन के चक्र में बांधे हुए है। जब तक आत्मा मन के वशीभूत रहेगी वह जीवन मरण के बंधन से मुक्त नहीं हो सकती। काल आत्मा का विनाश नहीं कर सकता लेकिन मन के आधीन होकर इच्छाओं और कर्मों की जंजीर से उसे बांध रखा है। अच्छे कर्म सोने की जंजीर है, बुरे कर्म लोहे की जंजीर हैं दोनों के भोग के लिए जीवन मरण के अर्थात चौरासी के चक्र के चक्कर में आत्मा को आना पड़ता है। सतगुरू का काम, आत्मा को शब्द सुख के योग द्वारा परमात्मा से जोड़ना है और आवागमन के चक्र से मुक्त कराना है। यह तभी संभव है जब मन राम के साथ जुड़ जाए।

आत्मा परमात्मा का अंश है परंतु वह इस संसार में मन की दासी बनी बैठी है। मन इन्द्रियों का दास है। फलतः सारा संसार काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार रूपी पांचों महारोगों में से किसी न किसी महारोग का शिकार है। मन उस ऊंट की भांति है जिस के नकेल नहीं है, वह आवारा घूमता रहता है और कभी समाप्त न होने वाली भटकन में व्यस्त रहता है, जो दुःखों और मुसीबतों का मूल कारण है। मन जैसा आज्ञाकारी सेवक भी कोई नहीं हो सकता और इस जैसा भयानक एवं हानिकारक स्वामी भी अन्य कोई अन्य नहीं हो सकता। यदि मन ठीक अनुशासन में रहे तो बड़े चमत्कारिक कार्य कर सकता है -और अनुशासनहीन होकर विनाश का कारण बने बिना नहीं रहता। यदि मन आत्मा के आधीन रहे और इन्द्रियां मन के, तो मनुष्य माया मंडलों के चक्रों से बच कर परमात्मा की शरण में चला जाता और परमार्थ के कामों में लगा रहता तथा आवागमन के चक्कर से बच जाता है। काल ने सभी प्राणियों और जीवों को अपने चक्र में कर्मजाल द्वारा फंसा रखा है क्योंकि उसने जीव को जीव की खुराक बना रखा है।

सृष्टि की रचना बहुत अद्‌भुत है। सभी जीव अपने तत्वों के परिणाम स्वरूप पांच वर्गों में बंटे हुये हैं।

पहला वर्ग पेड़-पौधों का है, जिसमें पानी का तत्व विशेष होता है। बाकी चार तत्व अर्थात पृथ्वी, अग्नि, वायु तथा आकाश नहीं के बराबर है।

दूसरा वर्ग कीड़े-मकौड़ों का है जिन में अग्नि और हवा तत्व ही मुख्य हैं। अन्य तीन तत्व पृथ्वी, जल और आकाश नाम मात्र को है।

तीसरा वर्ग अंडज जीवों अर्थात पक्षियों का है जिन में जल, अग्नि और हवा तत्व प्रधान है शेष दो तत्व पृथ्वी और आकाश नाम मात्र को।

चौथा वर्ग पशुओं का है जिनमें चार तत्व पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु की प्रधानता है और केवल आकाश तत्व की कमी है। इसी कारण से पशु में बुद्धि की कमी है।

पांचवा वर्ग मानव जाति का है जिसमें पांचों तत्व पूरे तौर से हैं अर्थात पृथ्वी,जल, अग्नि, वायु और आकाश, प्रकृति के पांचों तत्व हैं। ये तत्व रसायन विज्ञान के तत्वों से भिन्न हैं, क्योंकि रासायनिक तत्व केवल पदार्थ की अवस्था को समझाते हैं न कि इन के अंशों को।

वास्तव में काल ने इन पांचों वर्गों को अर्थात पांचों श्रेणियों के जीवों को बड़ी चतुराई के साथ कर्म के जाल में फंसा रखा है, क्योंकि प्रत्येक प्राणी वर्ग में उसने कुछ ऐसी व्यवस्था की है कि जीव ही जीव की खुराक है। समुद्री प्राणियों का उदाहरण है- ह्वेल मछली बड़ी मछलियां को खाती है। बड़ी मछली छोटी मछलियों को आहार बनाती है। छोटी मछलियां उन से भी छोटी मछलियों को खा जाती हैं जो पानी के कीड़ों को खा कर ज़िन्दा रहती हैं। सार यह है पानी में जीव जीव को खा कर जीवित रह सकता है क्योंकि इसके अतिरिक्त खाने का अन्य दूसरा साधन वहां नहीं है। इसी प्रकार पृथ्वी के प्राणियों का उदाहरण है - उन में बाघ, शेर, और भेड़िये, बकरियों, भेड़ों, हिरनों आदि को खा कर जीवित रहते हैं जबकि बकरियां, और भेड़ें पौधें और वनस्पतियां खाती हैं। बाज चिड़ियों, कबूतरों को खाता है और चिड़िया कीड़े मकोड़ों को खाती है। मनुष्य सभी प्रकार के पशु-पक्षी और पौधों को खा कर जीवित रहते हैं। इस तरह सारी दुनिया के प्राणी एक दूसरे प्राणी को खाकर जीवित हैं। प्रकृति का नियम है कि वे प्राणी जो कि दूसरे प्राणियों को खाते हैं उन्हें वे ही प्राणी खायेंगे जिन को उन्होंने खाया था। इस तरह कर्मजाल से मुक्त होने की कोई संभावना नहीं है।

इसी प्रकार उच्चतर मंडलों में रहने वाले सूक्ष्म शरीर वाले जीवों का भी यही हाल है। वे भी उसी प्रकार दुःख सुख और वासनाओं के शिकार हैं जिस प्रकार इस जड़ संसार के प्राणी जिन प्राणियों के कर्म सबसे अधिक बुरे होते हैं उन्हें नरकों में दुःख भोगना पड़ता है और जिन जीवों के कर्म इनसे जरा कुछ अच्छे होते हैं, उन्हें भूत-प्रेतों की योनियों में भटकना पड़ता है। जिनके कर्म उन से भी अच्छे होते हैं, उन्हें देवलोक या पितृलोक में रहने दिया जाता है। इससे भी उच्च कर्म वाले जीव स्वर्ग में निवास करते हैं। वे जीव जो इससे भी अधिक पवित्र कर्म वाले हैं, वे उच्चतर स्वर्ग (बैकुंठ) में निवास करते हैं। अवतारों, उच्च स्तर के पीर-पैगम्बरों और योगियों की आत्माएं ब्रह्ममंडल,(त्रिकुटी) में विहार करती है। वहां पर

वे आत्माएं इन मंडलों का आनन्द बहुत लंबी अवधि तक भोगती है, लेकिन अंत में उन्हें भी अपने शुभ कर्मों की समाप्ति पर फिर इस भौतिक संसार में जन्म लेना पड़ता है।

ब्रह्ममंडल की चोटी से लेकर पेड़ पौधों तक काल का राज्य है, जिनमें जीव-आत्माएं अपने कर्मों के अनुसार चक्कर काटती रहती हैं। इस चक्र का संचालक ब्रह्म (काल) है जो सभी जीवों को अपने राज्य के अन्दर कैदी बनाकर रखता है और यह भी ख्याल रखता है कि कोई भी जीव उसके राज्य की सीमा से बाहर न निकल जाए, क्योंकि अगर वे कैदी जीव बाहर निकल जायेंगे तो उस का राज्य वीरान हो जायेगा।

जीव को जीव का भोजन बना कर काल ने प्राणियां को जन्म मरण के चक्र में फंसा दिया है। इसलिए सन्तजन अपने शिष्यों को सदैव शुद्ध शाकाहारी भोजन का उपदेश और आदेश देते हैं। मांसाहार मनुष्य को पशुवृत्ति की ओर ले जाता है और आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग में बाधा पैदा करता है।

सदना कसाई जिस की वाणी गुरू ग्रंथसाहब में है उसकी कथा प्रसिद्ध है। सदना एक बादशाह का कसाई था। एक दिन मनचले बादशाह ने आधी रात के समय भुना मांस खाने के लिए मंगवा भेजा। मांस तैयार नहीं था, इसलिए सदना कसाई को ताजा मांस तैयार करने की इजाजत दी गई। गर्मी का मौसम होने के कारण सदना ने सोचा यदि बकरा मारता हूँ तो बाकी मांस दिन चढ़े तक खराब हो जायेगा। इसलिये उसने बकरे के वृषण काट कर ताजा मांस बनाने के बारे में विचार किया कि बकरे को कल मारूंगा। वह छुरी हाथ में लेकर बकरे की ओर बढ़ा तो आश्चर्य चकित रह गया, जब बकरे ने उससे कहा, 'कई बार तुमने मुझे मारा है तथा कई बार मैंने तुम्हें मारा है, परंतु इस बार तुम नया काम करके नया हिसाब पैदा कर रहे हो।

बकरे की वाणी सुन कर सदना कसाई का हृदय कांप गया और उसे आत्म ज्ञान हुआ कि उसे कसाई का काम छोड़ देना चाहिये, इसी में उसका भला है। वह एकदम किसी सन्त की शरण में चला गया और सन्त की दया मेहर से वह उच्च कोटि का सन्त बन गया। तभी से सदना, कसाई सन्त के नाम से विख्यात हो गया। अभी तक अनपढ़ समाज में भी कहावत प्रचलित है, 'दया बिन सन्त कसाई' जिसमें दया नहीं वह सन्त होते हुये कसाई के समान है। सन्त में दया व करूणा का गुण आवश्यक है।

मनुष्य योनि ही केवल परमात्मा से मिलने का साधन है। मनुष्य भी परमात्मा से तभी मिल सकता है जब वह अपने नौ द्वारों (दो आंखे, दो कान, दो नाक के सुराख, एक मुंह तथा नीचे दो इन्द्रियों के छिद्र) को बन्द करके दसवें द्वार अर्थात तीसरे तिल में ध्यान एकाग्र करके दिन रात धुनकारें देती हुई नाम या शब्द को पकड़ कर प्रभु ध्यान में लीन हो जाता है। वास्तव में ये नौ द्वार आत्मा को संसार के साथ जोड़े हुए हैं। जब तक मन नौं द्वारों में बन्दी बना रहता है तब तक तमो, रजों तथा सतो गुणों से बने इस माया के देश में कैदी बना रहता है। ये त्रिगुण (सतो गुण, रजो गुण, तमो गुण) व्यक्ति को लुटेरों की तरह निर्दयता से लूटते भी हैं, और आत्मिक उन्नति का मार्ग भुला देते हैं। इनमें तमोगुण सब से निकृष्ट, नीच और विनाशकारी है। यह जीव से नीच से नीच कर्म करवाता है। रजोगुण कई तरह के लोभ लालच

में जाल में फंसा कर व्याकुल बनाए रहते हैं। सतोगुण दया, सत्य, भक्तिभाव आदि उत्तम गुणों की ओर प्रवृत्त करता है। मनुष्य के शरीर को नर नारायणी देह कह कर संतों ने पुकारा है। मानव शरीर आत्मिक उन्नति की सीढ़ी का अन्तिम छोर है। जिसके आगे परमेश्वर प्राप्ति की छत है। उपरोक्त तीनों गुणों को पार किए बिना प्रभु की प्राप्ति संभव नही है। इन तीनों गुणों से ऊपर सहज अवस्था है जो कि पारब्रह्म से शुरू होकर सचखंड तक चलती है।

मन पांच तत्वों के सतोगुणी अंश से उत्पन्न हुआ है उसके ऊपर आत्मा का प्रकाश है। मन तत्वों से उत्तम है परंतु आत्मा से निम्न है। वास्तव में मन तत्वों और आत्मा के मध्य की चीज है। सारा संसार मन का दास है। इने गिने सन्त पुरूष ही सतपुरूष को जानते हैं। जो भी कार्य मनुष्य करता है, वह मन के आधीन हो कर ही करता है। ऋषि-मुनि, योगी, योगेश्वर, सन्त, महात्मा, पीर पैगम्बर सभी मन के वश में है। जब ये लोग सत गुरू के संपर्क द्वारा भीतर जाते हैं और स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण शरीर से पच्चीस प्रकृतियां से मन और माया से निवृत होकर पारब्रह्म में पहुंच जाते हैं तब वे समझते है कि उन की आत्मा शुद्ध आत्मा है। वहां आत्मा का प्रकाश बारह सूर्यो के प्रकाश के समान है। यहां इस संसार में मनुष्य एक सूर्य से भी आंख नहीं मिला सकता। वहां पर वह न मोटा है और न पतला, न काला, न गोरा, न उस का कोई शरीर ही होता है। सभी प्रचलित मतमतान्तर, धर्म, और सम्प्रदाय मन की सीमा के अन्तर्गत हैं। जिस प्रकार आत्मा अपने वास्तविक घर सचखंड को भूल गईं हैं उसी प्रकार मन भी अपने असली घर त्रिकुटी (ब्रह्म) को भूल गया है। बड़े-बड़े योगी और योगेश्वर इस मन के झकोले में मार्गभ्रष्ट हुए हैं और वे मन के गुलाम हो गए। फलस्वरूप उन के जीवन भर की तपस्या मन के एक झटके ने भंग कर दी। प्राचीन ऋषि मुनियों के कथानक इसके प्रमाण हैं, जिन्हें सभी सुन चुके हैं।

सन्त मत के अनुसार मन संसार का सृष्टिकर्ता नहीं है। शब्द सृष्टि का रचयिता है। निस्संदेह सारा विश्व जहां तक मन तथा बुद्धि की पहुंच है, मन के आधीन है, परंतु स्वयं जड़ है। मन आत्मा और शब्द से शक्ति प्राप्त करता है। मन तीन प्रकार का है :

पहला - स्थूल या पिंडी मन जो स्थूल शरीर और इन्द्रियों पर शासन करता है।

दूसरा - ब्रह्माण्डी मन जो सूक्ष्म जगत जैसे स्वर्ग, नर्क इत्यादि पर शासन करता है।

तीसरा - कारण मन जो कारण जगत पर शासन करता है और उसकी सीमा ब्रह्म की चोटी तक है।

जब तक आत्मा इन तीनों मनों की सीमा के अन्दर हैं, यह न स्वच्छ है और न स्वतंत्र है। आत्मा जब तक ब्रह्म को पार कर पारब्रह्म में नहीं पहुंच जाती यह अपनेआप को नहीं पहचान सकती और जब तक यह अपने आप को नहीं जान लेती, तब तक सृष्टि के स्वामी अर्थात रचयिता परमात्मा को नहीं जान सकती।

गुरू नानकदेव जी ने बारबार उपदेश दिया है कि अपने मन को बाहर जाने से रोको और इसे अन्तर में खड़ा कर के रोम रोम में रमे हुये 'राम' के साथ जोड़ो। यदि हम इस उपदेश पर चलेंगे तो हमें यमदूतों के हाथों खराब नहीं होना पड़ेगा और न नरकों में जलना पड़ेगा। नाम के सिवाय सब नाशवान है और नाम के अलावा कोई शक्ति हमारी सहायता नहीं कर सकती

इसलिए हम बाहर भटकना छोड़कर सदैव अंतर में नाम से जुड़े रहे क्योंकि इसके बिना मुक्ति नहीं है।

सिकंदर महान् जब भारत आया तो एक साधु से मिलने गया। वह साधु व्यास नदी के किनारे रहता था। सिकंदर ने उस की असाधारण शक्तियों के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था। सिकंदर महान् ने उस तपस्वी साधु को एक बड़ के पत्तों से बनाई गई छत्री की छाया में ताड़ के पत्ते पर बैठे हुये देखा। यही उस साधु की संपत्ति थी। जब सिकंदर को यह पता चला कि उस तपस्वी साधु ने मूसलाधार वर्षा, कड़कती व शरीर को जलाने वाली धूप, हड्डियों में घुसने वाली सर्दी की तेज बर्फानी हवाओं में भी अपनी सारी जिन्दगी यहां गुजारी है, तो साधु के लिये एक घर बनवाना चाहा। साधु ने इंकार कर दिया और कहा, "मकान क्यों बनाया जाए? क्या हमें हमेशा के लिए यहां रहना है?" तब सिकंदर ने पूछा, "क्या मैं आप की कोई सेवा कर सकता हूँ?" इस पर साधु ने उत्तर दिया, "हां! मैं चाहता हूँ कि आप का कोई भी आदमी मेरे पास न आये।" "जाको किछु ना चाहिये, सो ही शहंशाह।" हमारी इच्छाएं ही हमें दरिद्र बनाती हैं। जिसकी कोई इच्छा नहीं है वास्तव में दुनिया का सब से बड़ा अमीर है।

सिकंदर मरने पूर्व अपनी मां के दर्शन करना चाहता था। उसने घोषणा की कि जो डाक्टर मुझे इतनी देर जीवित रख देगा कि मैं अपनी मां के दर्शन कर सकूं, मैं उसे अपना आधा राज्य पुरस्कार स्वरूप दे दूंगा। यह प्रलोभन साधारण नहीं था। मगर डाक्टर तथा वैद्यों ने स्पष्ट कहा कि यदि आप सारा राज्य भी हमें सौंप दें तब मृत्यु को नहीं रोका जा सकता। यह हमारे वश की बात नहीं है। सिकंदर की आंखों में आंसुओं की झड़ी लग गई और ठंडी आह भर कहा, "अफसोस, अगर मुझे मालूम होता कि एक-२ सांस इतना कीमती है, तो कभी भी अपने सांसों को फिजूल के कामों में बर्बाद नहीं करता। तब उसने हुक्म दिया कि अर्थी ले जाते समय उसके दोनों हाथ कफन के बाहर रखे जायें और हथेलियाँ ऊपर की ओर हों, ताकि दुनिया को मालूम हो जाये कि सिकंदर महान् जो विश्वविजय के स्वप्न देखा करता था, इस संसार से खाली हाथ जा रहा है। यह ठीक है, संसार को जीतने का स्वप्न संजोने वाला सिकंदर न विश्वविजयी हुआ न मौत को जीत सका। मौत को तो सन्त ही जीत सकते हैं। जिनका संबंध पारब्रह्म परमेश्वर से हो जाता है वे सीधे सचखंड पहुंच जाते हैं।

मौलाना रूम, जो महान् सूफी सन्त माने जाते हैं फरमाते हैं, "यह संसार एक बहुत बड़ा जेलखाना है और हम सब इसमें बंदी हैं। चलो इस जेल की छत फाड़कर इसमें से निकल जायें।" इस संसार में प्रत्येक व्यक्ति दुःख से भरा है, किसी का विवाह नहीं होता, इससे वह दुखी है। किसी को उसकी पत्नि ने दुखी कर रखा है, दुःखी दोनों है। किसी के सन्तान उत्पन्न नहीं होती वह दुःखी है। किसी ने ऋण दे रखा है वह उसे वापिस प्राप्त करने के लिये दुःखी है और कोई ऋण न लौटा सकने से दुःखी है। किसी के पुत्र को परमात्मा ने वापिस बुला लिया है। वह रोता रोता नहीं थकता। कोई पुत्रों के कुकर्मों से कराह रहा है। सारी दुनिया दुःखों, कष्टों और गरीबी की मार से पीड़ित है। राजा प्रजा, धनी, निर्धन, बच्चा

बूढा कोई भी सुखी नहीं है। सभी तड़प तडप कर दुःख भोग रहे हैं। यह संसार दुःखों का सागर है। शान्ति, धन दौलत से खरीदी जाने वाली वस्तु नहीं है।

वर्तमान युग के संसार के सब से अधिक धनी व्यक्ति 'राकफैलर' ने एक बार एक हृष्ट पुष्ट मजदूर को भारी बोझ उठा कर जाते देख कर कहा था, 'काश मैं अपना सारा धन देकर भी इसका स्वास्थ्य खरीद सकता।' लेकिन स्वास्थ्य धन देकर कोई खरीद नहीं सकता, स्वास्थ्य तो कुदरती देन है अथवा तपस्या करके बनाया जा सकताहै। जो लोग बाहर से बहुत प्रसन्न और सुखी नजर आते हैं वे वास्तव में सुखी नहीं होते, उनके सिरों पर भी चिन्ता का बोझ लदा होता है। सुख ढलती छाया है जा ढलती जाती है और दुःखों में फंस जाती है। गुरू नानक देव जी ने कहा है कि भोग से रोग और रोग से शोक उत्पन्न होता है, जिस सुख का अन्त दुख है वह सुख नहीं।

संत महात्मा संसार के लोगों को स्थायी सुख अर्थात आत्मा और परमात्मा के सम्मिलन के लिए उपदेश देते हैं वे किसी को भी, कभी भी नुकसान नहीं पहुंचाते। भूली भटकी हुई आत्माओं को सदैव सन्मार्ग पर चलना सिखा कर सतगुरू से मिलाते हैं। लेकिन संसार के लोगों ने सन्तों और उन के सच्चे भक्तों के साथ कभी अच्छा बर्ताव नहीं किया। श्री गुरू नानक देव जी को जेल में चक्की चलानी पड़ी थी। गांव के लोगों ने उन्हें ठहरने तक की जगह नहीं दी, उन को कुमार्गी (कुराहिया) दीवाना और पागल तक कहा। कबीर साहिब के साथ क्या क्या नहीं किया गया। मंसूर की आंखे निकाल कर पत्थर मार मार कर, मार डाला गया। शम्स तबरेज की जीते जी खाल उतरवा दी गई। श्री गुरू अर्जुन देव जी महाराज को जलते हुए तवे पर बैठाया गया। गुरू तेग बहादुर साहिब जी को कैसे कैसे अमानुषिक कष्ट दिए गए और किस प्रकार बेरहमी से उनका वध किया गया। गुरू गोविन्द सिंहजी के मासूम बच्चे फतेहसिंह व जोरावर को सरहिन्द की दीवार में जीवित चुनवा दिया गया। स्वयं गुरू गोविन्द सिंह जी को कितनी परेशानियाँ उठानी पड़ीं। ईसा मसीह को सूली पर चढ़ा दिया गया। परन्तु इन महापुरूषों ने कभी भी बदला लेना नहीं चाहा। ईसा मसीह ने अन्तिम समय कहा, "मालिक, आप इन्हें क्षमा कर दें, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं।"

महात्मा बुद्ध को यह जानते हुए भी कि वे अहिंसावादी हैं उन्हें सुअर की चर्बी खिलाई गई जिससे उनके पेट में असह्य वेदना हुई और उन्होने प्राण त्याग दिए। स्वामी दयानन्द को बाईस बार विष दिया गया और अंत में उन के दूध में शीशा पीस कर पिलाया गया। चालीस दिन तक शरीर वेदना को सहते रहे मगर आह तक नहीं की। अपने हत्यारे जगन्नाथ पाचक को पास बुलाकर नैपाल जाने का रास्ता बताया, रेलगाड़ी का समय बताया, मार्ग व्यय दिया और भारत छोड़ने की आज्ञा दी और केवल इतना ही कहा, तुमने अच्छा नहीं किया, जाओ। अपनी जान बचाओ। स्वामी दयानन्द ने प्राण त्यागते समय कहा, "हे ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो, तूने अच्छी लीला की।" स्वामी श्रद्धानन्द जी को रिवाल्वर का निशाना बना कर शहीद किया गया। महात्मा गांधी को भी गोली का निशाना बना कर शहीद किया गया।

भारत की प्रथम महिला प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी को उसके पहरेदारों ने गोली

से उड़ा दिया और वह शहीद हो गई। उसके पुत्र राजीव गांधी को भी बम से उड़ाकर शहीद कर दिया। क्या कोई अंत है इस पागलपन का ?क्या कोई अन्त है इस अहसान फ़रामोशी और हैवानियत का ?

अगर इंसान ने संत महात्माओं की वाणी और उपदेश को माना होता तो वह ऐसे जघन्य अपराध नहीं करता। आत्मा की अमरता और शरीर की नश्वरता को वह भूल गया। वह बदले की भावना अर्थात हिंसा का मार्ग अपना कर, अपने मन को शान्ति देना चाहता है, जो कभी भी संभव नहीं है। जीवन में अहिंसा का आचरण किए बिना, कभी भी व्यक्ति आध्यात्मिक मार्ग पर नहीं चल सकता। इंसान बार-२ जन्म मरण की भूलभुलैयां में अपने उद्देश्य को भूल गया है।

हुजूर बाबा सावन सिंह जी एक कहानी द्वारा जीव की अवस्था का वर्णन इस प्रकार किया करते थे। एक अंधा, बहरा और गंजा व्यक्ति एक सराय में जा घुसे। सराय से बाहर जाने का केवल एक ही मार्ग था। उस व्यक्ति ने हाथ जोड़ जोड़ कर लोगों से बारवार प्रार्थना की कि कोई उसे सराय से बाहर निकाल दे, परंतु किसी ने उस की सहायता न की। यह सोच कर कि सराय के बड़े द्वार से वह स्वयं ही बाहर निकल जायेगा, उसने स्वयं ही मार्ग ढूंढना शुरू कर दिया। परंतु वह टटोलता-टटोलता किसी प्रकार द्वार पहुंचा तो उसे खुजली लगी, तो उसने फिर अपना सिर खुजलाने के लिए अपना हाथ दीवार से हटा लिया। इतनी देर में चलते-२ द्वार पारकर गया। हर बार जब वह द्वार पर पहुंचता, दुर्भाग्यवश उसको खुजली लगती और वह द्वार को पीछे छोड़ जाता। इस प्रकार वह सदा-सर्वदा के लिये उस सराय की भूलभुलैयां में ही फंसा रह गया। हम तुच्छ बुद्धिवाले नाशवान जीव भी इसी तरह कर रहे हैं। हर बार हमें मनुष्य देह की प्राप्ति होती है। हम प्रभु प्राप्ति और भक्ति के स्थान पर विषय विकारों, इन्द्रियों के भोगों में जीवन बिता कर फिर आवागमन की भूल भुलैयां में फंस जाते हैं। गुरू अमरदास जी उपदेश देते हैं कि अपनी सुरत को शरीर के नौ द्वारों से हटा कर दसवीं गली, तीसरे तिल में एकाग्र करो। दसवीं गली में पहुंच कर शब्द धुन को पकड़ कर जीव ऊपर चढ़ सकता है। इस प्रकार वह सतलोक पहुंच कर अनन्त आनन्द प्राप्त कर सकता है और जीवन मरण की भूल भुलैयां से पार हो जायेगा।

परम सन्त हुजूर बाबा सावन सिंह जी एक अन्य उदाहरण द्वारा भी समझाया करते थे, "मान लीजिए कि कोई आदमी गहरे कुएं में गिरा है और वहां तकलीफ में अकेला पड़ा हुआ है। दूसरा आदमी उस कुएं के पास से हो कर गुजरता है और उस के पास एक लंबी रस्सी है। वह इस आदमी को कुएं में गिरा देख कर अपनी रस्सी नीचे गिराता है और उस को कहता है कि अगर तुम इस रस्सी को पकड़ लो तो मैं तुम को ऊपर खींच लूंगा। अगर कुएं के अन्दर वाला आदमी ऊपर वाले आदमी से बहस करने लग जाये और कहे, "पहले मुझे यह बताओ कि मैं कुएं में कैसे गिरा और आपने मुझे अगर बाहर निकाल भी लिया तो क्या भरोसा है कि मैं वापिस नहीं गिर जाऊंगा" तो रस्सी वाला आदमी अधिक से अधिक यही कह सकता है - "मैं आप को कुएं से बाहर निकाल देता हूँ और बाहर आकर स्वयं ही आप

सब बात को समझ जायेंगे।'' पर अगर कुएं वाला मनुष्य इस अवसर का लाभ नहीं उठाता तो इसका यही अर्थ है कि उस का कुएं की कैद से रिहा होने का समय अभी नहीं आया है।

सभी सन्त महात्मा यही उपदेश देते हैं कि शब्द सुरत के योग के बिना आत्मा का उद्धार नहीं हो सकता, न परमात्मा से उसका मिलाप संभव है। इसलिए कोई ऐसी भेदी ढूंढा जाये जो स्वयं अंतर में जाता हो और हमें भी ले जा सकता हो। अत: आध्यात्मिक मार्ग पर चलने से पूर्व हम को किसी पूरे गुरू की खोज करनी पड़ती है। प्रसिद्ध सूफी संत मौलाना रूम कहते हैं, ''यदि तुम हज करना चाहते हो, तो किसी ऐसे व्यक्ति को साथ ले लो जिसने हज कर रखा हो। फिर वह हाजी हिन्दू हो, तुर्क हो अथवा अरब उसके वर्ण, जाति व देश को न देखो केवल यही देखो कि वह हाजी मार्ग की सारी कठिनाईयों, सभी अड़चनों, सारे उतार चढ़ावों का ज्ञाता हो।'' फिर कहते हैं, 'तुम मार्ग दर्शक अर्थात गुरू की खोज अवश्य करो। बिना उसके यह मार्ग बड़ा खतरनाक है।'' आगे चल कर आप कहते हैं, ''बिना गुरू की सहायता के मन को किसने जीता है। श्री गुरू अर्जुनदेव जी बड़े साफ शब्दों में कहते हैं कि इस बारे में कोई संदेह नहीं रहना चाहिये कि बिना गुरू के भव सागर से पार उतरना असंभव है।

कबीर साहिब का कथन है कि परमार्थ में उन्नति गुरू पर निर्भर करती है और सच्चा गुरू बड़े भाग्य से ही मिलता है। जब तक शब्द मार्ग का अनुभवी गुरू न मिले, शिष्य का कल्याण नहीं हो सकता। कबीर साहिब कहते हैं:-

गुरू गुरू में भेद है, गुरू गुरू में भाव।
सोई गुरू नित्त बन्दिय, जो शब्द बतावे दाव।

गुरू आत्मा को निर्मल करने वाला धोबी है और अन्त में वह आत्मा को निर्मल स्वच्छ और पवित्र बना कर ऊपर ले जाता है। कबीर साहिब कहते हैं :-

गुरू धोबी सिख कापड़ा, साबुन सिरजनहार
सुरत शिला पर धोइये, निकसे रंग अपार।

मौलाना रूम का कथन है कि संत ऐसे पारस है जो लोहे को पारस ही बना लेते हैं अर्थात दुष्ट अथवा पाप जीवों को भी संत बना लेते हैं यही कबीर साहिब ने भी कहा है :-

पारस में और संत में, बड़ो अन्तरो ज्ञान
वह लोहा कंचन करे, वह कर ले आप समान।

कबीर साहिब गुरू के प्रति शिष्य को समर्पित होने का आदेश देते हैं। यदि गुरु की आज्ञा का पालन वह करेगा तो तीन लोक में भी किसी की चिन्ता अथवा डर नहीं रहेगा। कबीर साहिब ने कहा है :-

गुरू को सिर पर राखिये, चलिए आज्ञा माहिं।
कह कबीर ता दास को, तीन लोक डर नाहिं।

गुरू के बिना न ज्ञान मिलेगा न गति ही होगी। इसलिए राम में रमने के लिये गुरू की खोज जरूरी है। मेरा निश्चित मत है जो जिज्ञासु संपूर्ण गुरू की खोज कर लेगा और उन की सेवा और आज्ञा में समर्पित हो जाएगा वह अवश्य परमपिता परमात्मा को प्राप्त किए बिना नहीं रह सकता। संसार में गुरूओं की भरमार है। भारत में तो हर व्यक्ति गुरू है लेकिन सच्चा

गुरू जो आत्मा को अंधेरे से प्रकाश की ओर ले जा सके, वह खोजने पर भी नहीं मिलता। महात्मा बुद्ध ने बट वृक्ष के नीचे बैठ कर घोर तपस्या की लेकिन ज्ञान प्राप्त हुआ उन ग्रामीण महिलाओं के गीत से, जो वे एक गांव से दूसरे गांव को विवाह में शरीक होने जाते समय गा रहीं थीं, जिस के भाव थे, 'जीवन रूपी वीणा के तारों को इतने मत कसो, जो टूट जाएं।' इतने ढीले मत छोड़ो कि वे कनसुरे हो जाएं।'अर्थात जीवन को कठिन तपस्या द्वारा नीरस मत बनाओ और विलासिता द्वारा जीवन भ्रष्ट मत करो। जीवन के लिए मध्यम मार्ग ही सर्वोपरि है। यहीं से बुद्ध ने अपना मध्यम मार्ग चुन कर बुद्ध मत का प्रचार प्रारंभ कर दिया।

स्वामी दयानन्द ने सच्चे गुरू की खोज में हिमालय छान मारा, पूरे भारत का भ्रमण किया, परंतु सच्चा गुरू,मथुरा में परिव्राजकाचार्य परम हंस ब्रजानन्द जी मिले। गुरू ब्रजानन्द जी महाराज से, स्वामी दयानन्द ने, वेद शास्त्रों का अध्ययन किया और दीक्षा ली। धर्म के नाम पर जो अज्ञान, अंधकार और आडंबर छाया हुआ था, उस का स्वामी दयानन्द ने पर्दाफाश किया। भारतवासियों को स्वधर्म, स्वराज्य, स्वभाषा, स्वदेशी का बोध कराया और वेदों का प्रचार किया। वेदों को सब सत्य विद्याओं की पुस्तक कहा, वेदों का पढ़ना,पढ़ाना और उसके अनुसार जीवन व्यतीत करना, आर्यों का परम धर्म बताया।

गुरू नानक साहब ने सतगुरू की पहचान (मलाह की वार पृष्ठ १२९० में) इस प्रकार बताई है - सुजान सतगुरू वह है जो हमें इसी घर (शरीर) के अंदर हमारा सच्चा घर दिखा दे, हमारे उत्तर में जो पांच धुनें हो रहीं हैं, उन को सुना दें। सब द्वीप, लोक, पाताल और खंड-ब्रह्मांड आश्चर्यजनक हैं, क्योकि इनके अंदर शब्द की रसीली धुनें धुनकार दे रहीं हैं, जो सच्चे परमात्मा से आ रही हैं। गुरू साहिब उपदेश देते हैं कि तुम सुखमन (सुषुम्ना) के अंदर उस शब्द को सुनकर सुन्न मंडल में लिव लगाओ, वह अकथ कथा है, उस के साथ मन को जोड़ो, तब सब आशा-मनसा खत्म हो जाएगी। जब हृदय कमल उलटेगा, तो वह अमृत से भर जायेगा। उस अमृत-रस को पीकर तुम्हारा मन फिर कहीं नहीं दौड़ेगा। वह जो अजपा जाप है, जो बिना जपे, अपने आप हो रहा है, कभी नहीं बिसरेगा। वह 'आदि जुगादि' में सम रहा है। सब सखियाँ (परमार्थ की खोजी आत्माएं) जो पांच शब्दों को प्राप्त करती हैं गुरूमुख है तथा अपने निज घर को पा लेती हैं। गुरू साहिब फरमाते हैं कि जो कोई 'शब्द' को खोज कर इस घर को प्राप्त कर लें, मैं उस का दास हूँ। सभी संतों की वाणी यही कहती हैं कि जो सुप्त को शब्द के साथ जोड़ सके और शिष्यों को किसी प्रकार के बाहर मुखी साधनों में नहीं उलझाता, वही सच्चा गुरू है।

परम सन्त सहजोबाई, गुरू की श्रेष्ठता व महिमा का वर्णन इस प्रकार करती हैं - यदि हरि की कृपा हो तो अच्छी बात है, यदि न होतो कोई हर्ज नहीं। परंतु गुरू की कृपा के बिना हमारी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। गुरू के बिना अध्यात्म के मार्ग पर कोई नहीं चल सकता और न सच्चा ज्ञान ही प्राप्त कर सकता है। गुरू के बिना जीव अंधकार में भटकता फिरता है। मैं राम को तज दूंगी पर गुरू को नहीं भूल सकती क्योंकि परमात्मा के निज-स्वरूप को मैं उनके प्रकट स्वरूप गुरू के तुल्य नहीं समझती, इसके कई कारण हैं। परमेश्वर ने संसार बनाया और हमें इसमें जन्म दिया, पर गुरू ने हमें जन्म-मरण के चक्र से निकाल दिया। परमेश्वर ने

पांच चोर (काम, क्रोध, लोभ,मोह और अहंकार) हमारे साथ लगा दिए, पर गुरू ने मुझे अनाथ समझ कर उनसे बचा लिया। परमेश्वर ने मुझे कुटुंब के मोह जाल में फंसाया, पर गुरू ने मेरी ममता की बेड़ियों को काट दिया। परमेश्वर ने मुझे रोग-भोग में फंसा दिया, पर गुरू ने मुझे योगी बना कर इनसे मुक्त कर दिया। ईश्वर ने मुझे कर्म और भ्रम में उलझाया, पर गुरू ने मेरा निज-रूप मुझे दिखा दिया। परमेश्वर ने अपने आपको मुझ से छिपाया, पर गुरू ने ज्ञान का दीपक देकर उसे प्रकट कर दिया। परमेश्वर ने संसार में मुक्ति और बंधन रखे पर गुरू ने मुक्ति के सारे भ्रमों को मिटा दिया। मैं अपने गुरू चरणदास पर तन और मन वारती हूँ। मैं तो परमात्मा को तज दूंगी पर गुरू को नहीं बिसारूंगी। कबीर साहिब ने भी एक पंक्ति में सब कुछ कह दिया, "हरि रूठे ठौर है, गुरू रूठे, नहिं ठौर।"

महाभारत के शांति पर्व में भीष्म पितामह, युधिष्ठिर को संत पुरूषों के लक्षणों का वर्णन इस प्रकार करते हैं :-" मैं अब तुझे ऐसे पुरूषों के चिन्ह बतलाता हूँ जिनकी संगति से जन्म-मरण का भय दूर हो जाता है तथा मुक्ति मिलती है। वे मांस नहीं खाते, किसी के साथ प्यार और किसी के साथ घृणा नहीं करते। उनको नेकी का जीवन प्रिय है। उनकी इन्द्रियाँ वश में है और वे हर्ष और शोक को समान जानते हैं। वे सच्चे और दानशील होते हैं। वे किसी से दान नहीं लेते। पर स्वयं दयावान होते हैं। वे अतिथियों की सेवा करते हैं, सबको सुख पहुंचाते हैं, सबकी सहायता करते हैं। वे वीर होते हैं, धर्म पर चलने वाले होते हैं। सब प्राणियों के मित्र और समय की आवश्यकता पर अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देने वाले होते हैं। वे सत्य के मार्ग पर दृढ़ रहते हैं, उनका आचरण धर्मानुकूल होता है। वे किसी संत या ऋषि की आलोचना नहीं करते, न ही वे किसी को भयभीत करते हैं। वे दृढ़तापूर्वक नेकी का जीवन व्यतीत करते हैं, सब के प्रति अहिंसा का भाव रखते हैं तथा काम, क्रोध, संसार मे मोह और अहंकार से मुक्त होते हैं। वे अपने कर्तव्य का पालन करते हैं और धर्म पर धर्म के लिये चलते हैं। किसी नाम या धन की प्राप्ति के लिये नहीं। उनका धर्म के साथ स्वाभाविक संबंध हो जाता है। जिस प्रकार वे प्रतिदिन स्नान, भोजन तथा अन्य शारीरिक क्रियाएं करते हैं उसी प्रकार धर्म भी उनके नित्य जीवन का अंग हो जाता है। वे भय, शोक और क्रोध से मुक्त होते हैं, वे सच्चे और ईमानदार होते हैं। लाभ में वे फूलते नहीं तथा हानि में शोक नहीं करते। वे सतोगुणी तथा समता भाव वाले होते हैं। लाभ-हानि, हर्ष-शोक, प्रेम-घृणा, जीवन-मृत्यु आदि उनके मन की एक-रस अवस्था को नहीं डुला पाते। उनको उच्च गति प्राप्त होती है और वे सत्य के मार्ग में दृढ़ता पूर्वक लगे रहते हैं।"

भगवान कृष्ण कहते हैं, " हे उद्धव ! जिस प्रकार कोई आग के पास पहुंचता है तो ठंड, भय और अंधकार दूर हो जाते हैं, इसी प्रकार संतों के पास आने से पापों की सर्दी, जन्म-मरण का भय तथा अज्ञान का अंधकार दूर हो जाता है। जिस प्रकार पानी में डूबते हुए मनुष्य को नाव सहारा देकर बचाती है, इसी प्रकार शांति में स्थित संत संसार-सागर में गोते खाते जीवों के आधार हैं। जिस प्रकार भोजन जीवों के लिये सहारा है, संत दुखियों का सहारा है। जिस प्रकार परलोक में धर्म रूपी संपत्ति काम देती है, इसी प्रकार संत-जन संसार-सागर में भयभीत जीवों के लिये आधार है।"

महान सूफी संत मौलाना रूम कहते हैं, "परमात्मा के भक्तों की कुछ समय की संगति सौ साल की निष्कपट भक्ति से बेहतर है।"

महाभारत में कहा गया है, "मनुष्य का एक महान आत्मा के साथ रहना ही आत्मिक उन्नति प्रदान करता है, क्योंकि यह प्रकृति का नियम है कि नेक लोगों के पास रहकर हम नेकी और पापियों के पास रहकर हम पाप का अंश अवश्य लेते रहते हैं, चाहे हम करें कुछ भी नहीं।"

सतगुरू से प्रेम तथा उनकी भक्ति ही परमात्मा की भक्ति है। लेकिन यह प्रेम इतना आसान नहीं है जितना दुनिया समझती है। कबीर साहिब फरमाते हैं :-

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारै भुईं धरैं, तब पैठे घर माहिं॥
सीस उतारै भुईं धरैं, ता पर राखे पांव।
दास कबीरा यों कहै, ऐसा होय त आव॥
यह तो घर है प्रेम का, मारग अगम अगाध।
सीस काट पगतल धरैं, तब निकट प्रेम का स्वाद॥

सच्चे प्रेम के लिये अपने स्वार्थ और अहंकार का त्याग करना पड़ता है। अपनेआप को प्रेम के लिये मिटा देना ही सच्चे जीवन की प्राप्ति है और तभी जीवन का सच्चा आनन्द प्राप्त होता है।

सांई बुल्लैशाह, हीर की जुबानी अद्वैत तथा प्रेम का वर्णन करते हैं:

रांझा -२ करदी नी मैं आपे रांझा होई।
सद्दो नी मैंनू धीओ रांझा, हीर न आंखे कोई॥

अर्थात रांझा रांझा की रट लगाते लगाते मैं स्वयं रांझा बन गई हूँ। बहिनों, मुझे रांझा कह कर पुकारो। मुझे हीर कोई न कहे। सच्ची एकाग्रता केवल प्रेम से प्राप्त होती है। और जो रसाई वर्षों के सतत् अभ्यास से प्राप्त नहीं होती वह प्रेम में पल भर में केवल दृष्टि के आर पार हो जाने से मिल जाती है। इसलिये यदि आप सच्चे प्रेमी हो तो अपने उत्तर में हीर जैसा प्रेम की ज्वाला पैदा करो, तभी कल्याण होगा। तुलसी साहिब फरमाते हैं :-

तुलसी ऐसी प्रीति कर, जैसे चंद चकोर।
चोंच झुकी गरदन गली, चितवे वाही ओर॥

शब्द दाता गुरू को ढूंढ कर उन की सच्ची भक्ति करे, उनसे प्रेम करे और ऐसी प्रीति करे जैसी चकोर की चन्द्रमा से होती है। चकोर की गर्दन झुक जाती है पर वह अपनी दृष्टि एक टक चन्द्रमा की ओर लगाये रखता है। आत्मा गुरूभक्ति में लीन होकर, परमात्मा में लीन हो जाती है।

संत हुजूर बाबा सावनसिंह ने कहा था, "माता जिस तरह अपने बच्चे की देख रेख और रखवाली करती है उसी तरह एक अभ्यासी को अपने मन की चौकीदारी करनी चाहिये। फिर भी मन को काबू में करने के लिये कोई अवधि निश्चित नहीं है। जैसे कि एक महात्मा ने कहा

है कि मन से लड़ाई करना अपने सिर को हथेली पर रखकर गुरू के दर्शन को जाने के समान है, लेकिन फिर भी कोई भरोसा नहीं है कि प्रियतम अपनी झलक दिखायेगा ही।

अगर यह काम इतना आसान होता तो श्री गुरू नानक देव बारह वर्षों तक रोड़ों का बिछौना नहीं करते। क्राइस्ट अपने जीवन के उन्नीस साल ज्योरोसलम की पहाड़ियों में नहीं बिताते और राधा स्वामी मत के संस्थापक, स्वामी जी महाराज खुद सत्तरह वर्षों तक अपने घर के पीछे एक अंधेरे और एकांत कमरे में बैठकर अभ्यास नहीं करते। मुझे अधिक लिखने की जरूरत नहीं है। आप जानते हैं कि मन के साथ लड़ाई कितनी कड़ी होती है और महात्मा समझाते हैं कि यह जीते जी मरना है। मैं अब बस यही कह देना चाहता हूँ कि जो इन्सान अन्दर शब्द से जुड़ा हुआ है, उसके लिये निराशा की कोई बात नहीं है और आगे या पीछे उस को दर्शन मिलेगा ही।"

संत हुजूर बाबा सावनसिंह जी भी अन्य संतों की तरह मालिक की मौज में, सत्संगी और साधक को मस्त रहने का उपदेश दिया करते थे जिस के लिये वे एक प्रचलित कहानी बताते थे, "श्री गुरूनानक देव जी के एक आदमी आया और बातचीत के सिलसिले में संतो द्वारा मालिक की मौज में रहने के बारे में बात चली। गुरू नानक देवजी ने मालिक की मौज को सर्वोच्च बताया और उसकोसमझाया कि मौज में रहने में जीव का भला है। उस आदमी ने मनुष्य की अकल और कोशिश की श्रेष्ठता पर जोर दिया। अंत में होते होते उस आदमी ने गुरू नानक देवजी से पूछा कि क्या वे कोई ऐसा आदमी बता सकते हैं जो मालिक की मौज में रहता हो। गुरू साहिब़ ने भाई लालो (जो पेशे से बढ़ई था) का नाम पता बताया। वह आदमी कुछ समय बाद भाई लालो के पास पहुंचा तथा उसे अपनी दुकान पर काम करते पाया। भाई लालों ने उसे प्रणाम किया और कहा आप दस पन्द्रह मिनट ठहरो, मैं आपके पास आता हूँ। वह आदमी भाई लालो को जो एक अर्थी तैयार कर रहा था, देखता रहा। अर्थी तैयार करने के बाद उसे दुकान में रखकर भाई लालो बाजार गया और अंतिम संस्कार के लिये कुछ जरूरी चीजें ख़रीद कर वापस आया और इन चीजों को अर्थी के पास रख दिया।

भाई लालो अपने मेहमान से बात करने ही जा रहा था कि एक आदमी उस के घर से दौड़ता हुआ आया और बोला "आप का लड़का छत से गिर कर मर गया है।" भाई लालो जरा भी नहीं घबराया और शान्ति से बोला, "मालिक की मौज" वह आदमी लालो को लगातार देख रहा था। भाई लालो ने अर्थी के साथ अन्य चीजों को उठाया और उन्हें घर ले गया और मृतक शरीर की दाह क्रिया के लिये रस्म के अनुसार इन्तिजाम किया।

दाह संस्कार के बाद और आये हुये लोगों से बिदा मांगते हुये भाई लालो उस आदमी के साथ दुकान पर वापस आया। भाई लालो ने तब उस आदमी से इस देरी के लिए माफी मांगी। वह आदमी भाई लालो को हर समय ग़ौर से देख रहा था और अब वह जान गया कि भाई लालो जो अर्थी बना रहा था, वह उस लड़के के लिये ही थी और शायंद भाई लालो को बच्चे की गिर कर मौत होने का पता था। इसलिये वह भाई लालो का दोष देने लगा कि जब आप को इन सब बातों का पता था तब आपने अपने लड़के को गिरने से क्यों नहीं बचाया। भाई लालों ने जोर देकर समझाया कि बच्चे को इसी तरह मरना था और उसकी

भलाई के ख्याल से उस को मरने दिया गया। बच्चे से उस का संबंध इसी तरह टूटना था और यह सब भले के लिये ही हुआ है, तथा मैं मालिक की मौज में खुश हूँ।

भाई लालो का दृष्टिकोण निषेधात्मक (दुनिया की भलाई के विपरीत) नहीं है। यह निश्चय ही एक दयाली प्रवृत्ति है जिसे जब तक प्राप्त नहीं किया जा सकता जब तक मनुष्य मन बुद्धि के दायरे में बैठा है। लेकिन जब तक अन्दर की दृष्टि नहीं खुली है, तब तक हर एक व्यक्ति मन-बुद्धि के दायरे में है और केवल बुद्धि के ही सहारे काम करता है। अगर इसी को आन्तरिक दृष्टि से देखा जाये तो इस में उसका कोई बस नहीं था और ऐसा ही होने वाला था। आप पूछते हैं कि अगर उस को 'नाम' मिला होता तो वह बच जाता ? अगर मौत जीवन की एक घटना है तो शब्द का भेद मिलना उससे बहुत अधिक महत्वपूर्ण घटना है। नाम मिलना पहले से ही तय रहता है। जिन्हें इस जीवन में नाम मिलना होता है, उनको ही मिलता है और किसी दूसरे को नहीं, भले ही ये लोग सन्तों के बिल्कुल नजदीक क्यों न रहते हों। मौत और 'नाम' मिलने में किसी भी प्रकार का संबंध नहीं है। दोनों चीजें एक दूसरे से स्वतंत्र है।"

श्री गुरू नानक देवजी कहते हैं -"ईश्वर ने ललाट पर लिख दिया है कि इस व्यक्ति को गुरू में विश्वास होगा, नाम मिलेगा, परमात्मा का दर्शन होगा और आनन्द प्राप्त होगा।" सहज सरल बुद्धि वाले लोग सुरत शब्द-योग को शीघ्र समझ जाते हैं और सफलता प्राप्त कर लेते हैं। लेकिन चंचल मन व बुद्धि जीवी लोग भटकते रहते हैं, उन्हें अपने मन को शान्त करने के लिये थकाना होगा लेकिन यह काम उन के लिये बहुत कठिन है। सुरत शब्द योग बहस की चीज नहीं है अभ्यास और विश्वास की बात है। दर्शन शास्त्रों की बातें करना एक चीज है और दार्शनिक होना दूसरी बात है। कहावत है, "अगर एक कुत्ता रूई के खेत से गुजरे तो वह कपड़े की पोशाक पहन कर नहीं निकलता।"

संत चमत्कार दिखाने या आत्मिक शक्ति का प्रदर्शन करना परमात्मा तथा प्रकृति के नियमों में दखल देना समझते हैं, वे परमात्मा की सत्ता चाहते हैं, अपनी नहीं। गुरू हरगोविन्द सिंह जी के सात वर्षीय पुत्र बाबा अटल का इतिहास है कि जब वह अपने दोस्त मोहन के घर उससे अपने पहले दिन के खेल की बारी लेने गये तो उन्होने मोहन को जमीन पर लेटे हुये पाया और उसके परिवारी रोते पाये लोगों ने बताया कि मोहन मर गया है। बाबा अटल ने कहा, "नहीं वह मरा नहीं है। वह खेल में बारी न देने के लिए मरने का बहाना बना रहा है।" अटल ने उस का हाथ पकड़ा और उठाकर खेल में ले आये। जब गुरू हर गोविन्द साहिब को यह मालूम हुआ तो पुत्र को सामने बुला कर फरमाया बेटा ! अब यह चमत्कार करने के बदले या तो तुम्हें यह संसार छोड़ना होगा या मुझे जाना होगा। बाबा अटल ने अपनी नादानी का मोल चुकाना स्वीकार किया और उसी समय जमीन पर लेट गए और अपना चोला छोड़ दिया। अमृतसर के दरबार साहिब के पास बाबा अटल की संगमरमर की समाधि है। हुजूर बाबा सावन सिंह जी ने ऋद्धि सिद्धियों के प्रदर्शन को सत्संगी व संतों के लिए वर्जित माना है। वे, इनके मार्ग में वेश्याओं के समान हैं जो उन की सम्पूर्ण कमाई को लूट लेती है। उनसे हमेशा सावधान रहने का आदेश दिया है।

विश्वविख्यात महान उपन्यासकार एवं विचारक लियो टालस्टाय ने 'तीन एकांतवादी' लोककथा लिखी थी। इस कहानी का ऐतिहासिक आधार है। इस कहानी का संक्षिप्त रूपान्तर इस प्रकार किया गया है :-

एक द्वीप में तीन भोले भाले एकांतवासी वृद्ध रहते थे। वह हर समय एक प्रार्थना करते रहते थे। वह थी - 'हम तीन हैं, तू तीन है - हम पर दयाकर' यह प्रार्थना उन्हें किसी पोप, पादरी तथा धर्माधिकारी ने नहीं सिखाई थी, यह प्रार्थना उन की निर्मल आत्मा की पुकार थी और उनका जीवन भी साफ सुथरा था। वे तीनों प्रेमपूर्वक रहा करते थे।

स्थानीय बिशप को यह जानकारी मिली कि तीन वृद्ध व्यक्ति एक टापू में अकेले पड़े रहते हैं और 'हम तीन हैं, तू तीन है, हम पर दया कर' प्रार्थना करते रहते हैं। वह बिशप नाव पर सवार होकर उस द्वीप में पहुंचा और उसने उन तीनों भोले भाले साधकों को अपने धर्म की प्रार्थना सिखाई वे बड़ी लग्न और तत्परता से सीखते रहे लेकिन जब वह बिशप उन को दीक्षा देकर लौट पड़ा तो वे सिखाई हुई प्रार्थना को भूल गये और बड़े व्याकुल हुये। उन्होंने नाव का पीछा किया और बिशप को नम्रता पूर्वक कहा जो आपने हमें प्रार्थना सिखाई थी वह हम भूल गए हैं हमें पुनः वही प्रार्थना सिखाइये।

बिशप ने जब उन की आवाज सुनी तो देखा कि वह तीनों भोले भाले भक्त एक दूसरे का हाथ पकड़े हुये समुद्र की लहरों पर दौड़ कर एक दिव्य प्रकाश के साथ नाव की बराबर पहुंचने का प्रयत्न कर रहे हैं। ये साधु बिशप के पास पहुंचते ही चिल्ला उठे, 'आपने जो प्रार्थना सिखाई थी उसे हम भूल गए हैं और आप से यह अनुरोध करने के लिये दौड़ आये हैं कि आप उसे दुबारा सिखा दें।'

बिशप तो उन तीनों साधुओं को दिव्य प्रकाश के साथ समुद्र की लहरों पर दौड़ते देख कर विस्मित रह गया था। बिशप ने सिर हिलाया और कहा, 'आप अपनी पुरानी प्रार्थना पर ही निर्भर रहें।'

टालस्टाय के मित्र निकोलस रोरिक ने 'तीन एकांत वासी' लोककथा को संक्षिप्त लिखा था। एक संपादकीय नोट के अनुसार धर्माधिकारी (बिशप) आर्केजल से स्लोवेत्सकी मठ की यात्रा करते समय ड्विना नदी के मुहाने पर इन तीन साधुओं से मिले थे।

यह जरूरी नहीं कि परम पिता परमेश्वर वेद मंत्रों, संस्कृत भाषा, कुरान शरीफ की आयतें, बाइबिल की प्रार्थनाएं, गुरू वाणी आदि प्रचलित व लोकप्रिय धर्मों और मत मतान्तरो की धर्म ग्रंथों में लिखित प्रार्थना ही सुनता है और समझता है। परमात्मा तो हृदय की बात सुनता है। साधक की शुद्ध भावना को स्वीकार करता है। टालस्टाय के तीन साधु जो प्रार्थना करते थे वह किसी वेद मंत्र या गुरूमंत्र से कम नहीं थी। जो परमात्मा को स्वीकार हो चुकी थी तभी तो वे समुद्रकी लहरों पर भी भूमि की तरह दौड़ रहे थे। दिव्य प्रकाश उनके साथ था।

एकलव्य को गुरू द्रोणाचार्य ने शिष्य बनाना ही स्वीकार नहीं किया था। लेकिन सच्चे शिष्य ने गुरू की प्रतिमा बना कर ही धनुर्विद्या का अभ्यास किया और इस विद्या में पारंगत

हो गया, जिसे देख स्वयं गुरू द्रोणाचार्य चकित रह गए थे। साधक का विश्वास, श्रद्धा और शुद्ध भावना किसी गुरूमंत्र से कम शक्तिशाली नहीं है।

सिकंदर जब भारत विजय के लिये निकला तो उसे बताया गया कि भारत की तीन चीजें अद्वितीय हैं। भारत जैसे गुरू, अर्थात आध्यात्मिक विद्या के ज्ञाता, संत, संसार में अन्य नहीं है। भारत की भागीरथी नदी के जैसा पवित्र और कभी खराब न होने वाला जल अर्थात गंगा जल तथा एक ऐसी पुस्तक 'गीता' जिस में इस लोक और पर लोक से पार उतरने की विद्या का वर्णन है, भारत की विशेषता है। सिकंदर जब उत्तरी भारत तक्षशिला नामक स्थान पर पहुंचा तो उसने तक्षशिला के महान सन्यासी ज्ञानगुरू, (दंडी) जिसका नाम दंडामिस था, से मिलने की इच्छा जाहिर की और हेलेनिक मतावलंबी डायोजेनिस के शिष्य ओनसिक्रिटोस को दण्डामिस को बुलाने के लिये भेजा। ओनोसिक्रिटोस महान् सन्यासी दण्डामिस को ढूंढता हुआ वहां पहुंचा। उसने महान सन्यासी से कहा, "हे ब्राह्मणों के गुरू, आप को नमस्कार है! सर्वशक्तिमान देवता जिइस के पुत्र और मानवमात्र के अधिपति सिकंदर ने आप को अपने पास आने का आदेश दिया है। यदि आप इस आदेश का पालन करेंगे तो आप को भारी मात्रा में अमूल्य उपहार मिलेंगे और यदि आप आदेश को अस्वीकार करेंगे तो वे आप का सिर उड़ा देंगे।" बड़ी शान्ति से योगी ने उत्तर दिया, "सिकंदर यदि जिइस का पुत्र है तो मैं भी उसी का पुत्र हूँ। सिकंदर के पास जो कुछ भी है, उस में से मुझे कुछ नहीं चाहिये, क्योंकि मेरे पास जो कुछ है, मैं उसी से संतुष्ट हूँ। मैं देख रहा हूँ कि वह अपनी सेना को लेकर समुद्र और पृथ्वी पर निरर्थक भटक रहा है, और उसके इस परिभ्रमण का कहीं अन्त नहीं हो रहा है। जाओ और सिकंदर से कह दो कि महाराजाधिराज परमेश्वर कभी असत् कार्य नहीं करता। वह प्रकाश का, शान्ति का, जीवन का, जल का, मानव शरीर का स्रष्टा है। मृत्यु जब मनुष्यों को बंधन से मुक्त कर देती है, तब परमेश्वर उन सब को ही अपने पास बुला लेता है और तब मनुष्य दुःख व्याधि के आधीन नहीं होता। परमेश्वर हत्या से घृणा करता है और युद्ध के लिये प्रोत्साहन नहीं देता। मैं एक मात्र उसी ईश्वर का अभिनंदन करता हूँ। सिकंदर ईश्वर नहीं है, क्योंकि उसे मृत्यु का ग्रास बनना ही पड़ेगा। उसके समान व्यक्ति विश्व का अधिपति कैसे हो सकता है, जब कि वह अभी तक विश्व चैतन्य के आंतरिक साम्राज्य के सिंहासन पर अधिष्ठित नहीं हुआ है? बल्कि अभी तक उसने न तो सशरीर यम लोक में ही प्रवेश किया है और न उसे इस पृथ्वी के विशाल प्रदेशों में से होकर जाने वाले सूर्य के परिक्रमा पथ की ही कोई जानकारी है। ऐसे अनेक राष्ट्र हैं, जिनकी अधिकांश प्रजा ने उसका नाम भी नहीं सुना होगा।

इस फटकार के बाद योगिराज ने व्यंग्य के स्वर में कहा:-' यदि सिकंदर के वर्तमान साम्राज्य का विस्तार उस की इच्छाओं की संतुष्टि के लिये पर्याप्त नहीं पड़ रहा हो, तो उससे गंगा पार जाने को कहो। वहां उसे एक ऐसा प्रदेश मिलेगा, जो उसकी सारी सेना का पोषण कर सकेगा।

"यह जान लो कि सिकंदर ने मुझे जो उपहार देने का वचन दिया है, वे सब मेरे लिये व्यर्थ हैं। मेरी दृष्टि में जो वस्तुएं उपयोगी और बहुमूल्य हैं, वे हैं ये वृक्ष, जो मुझे आश्रय देते

है, ये लहलहाते पौधे, जो मुझे नित्य भोजन प्रदान करते हैं और जल जो मेरी तृष्णा शान्त करता है। इनके अतिरिक्त अन्य सारी वस्तुएं जिन्हें अर्जित करने के लिये भारी श्रम और चिन्ता करनी पड़ती हैं, अज्ञानकर्ता के लिये दुःख, अशान्ति तथा नाश का कारण बनती है, एवं अज्ञानी मनुष्यों के लिये शोक और दुःख कारक होती है।

"मुझे और किसी वस्तु की क्या आवश्यकता है। मैं जंगल में पत्तों पर सोता हूँ और पास में रखवाली करने योग्य कोई वस्तु न होने के कारण निश्चिन्त हो कर परम शान्ति के साथ गहरी नींद लेता हूँ। यदि मेरे पास कोई ऐसी वस्तु रहती, जिसकी रक्षा की चिन्ता करनी पड़ती, तो मुझे नींद न आ पाती। जिस तरह मां अपने बच्चे को दूध पिलाती है, उसी तरह धरती माता मुझे सब कुछ प्रदान करती है। कोई चिन्ता या बोझ न होने के कारण मैं अपनी इच्छा के अनुसार जहां चाहता हूँ, वहां चला जाता हूँ।

"सिकंदर भले मेरा सिर काट ले, परंतु वह मेरी आत्मा का तो विनाश नहीं कर सकता। तब मेरा मूक सिर और फटे वस्त्र के समान मेरा यह शरीर इस पृथ्वी पर पड़ा रहेगा। जहां के उपादानों से इसकी सृष्टि हुई थी। तत्पश्चात मैं आत्मरूप बनकर अपने प्रभु के पास पहुंच जाऊंगा। उस प्रभु ने हम सब को रक्त मांस के शरीर में बंद करके इस पृथ्वी पर यह देखने के लिये भेजा है कि हम नीचे आकर उसकी आज्ञाओं का अनुसरण करते हुये जीवनयापन करते हैं या नहीं। और, जब हम यहां से प्रस्थान कर उसके सम्मुख उपस्थित होंगे तब वह हम से हमारे जीवन के सब कार्यों का विवरण पूछेगा। सारे ही गर्वोद्धत एवं अत्याचार पूर्ण कुकर्मों का वही एक मात्र सर्वोपरि विचारक है। प्रपीड़ितों का आर्तनाद ही प्रपीड़क का दंड विधान बन जाता है।

"भले ही सिकंदर धमकियां देकर उन लोगों को आतंकित करे जो धन के इच्छुक हैं और जो मृत्यु से भय खाते हैं। ब्राह्मणों के विरूद्ध उसके शस्त्रास्त्र, शक्तिहीन हैं। हमें न स्वर्ण का मोह है, न मृत्यु का भय। जाओ, और सिकंदर को यह बता दो कि 'दंडामिस' को आप की किसी भी वस्तु की आवश्यकता नहीं है और इसलिये वह आपके पास आयेगा भी नहीं। और यदि आप 'दंडामिस' से कुछ लेना चाहते हों तो स्वयं उनके पास जाइये।"

सिकंदर ने ओनसिक्रटोस के मुख से योगी का संदेश ध्यान पूर्वक सुना और दंडामिस का दर्शन करने की उसकी इच्छा पहले की अपेक्षा और भी तीव्र हो गयी, क्योंकि वे यद्यपि वृद्ध और दिगम्बर थे, तथापि वे एकमात्र ऐसे प्रतियोगी थे जिन्हें अनेक देशों के विजेता सिकंदर ने अपने से कहीं प्रबल पाया।"

प्राचीन भारत, छः खंड संपूर्ण (चक्रवर्ती, चटर्जी एंड कंपनी, कलकत्ता १८७९, १९२७) में प्रकाशित इतिहास में डा.जे.डब्लयू.मैकक्रिंडल ने एरियन, डायोडोरस प्लुटार्क और स्ट्राबो के वर्णनों का अनुवाद किया है जिस में उपरोक्त संवाद का वर्णन है। अनेक सुख्यात तपस्वी ब्राह्मणों को बुलाकर, सिकंदर ने दार्शनिक प्रश्नों के उत्तर पूछे थे, प्लुटार्क ने वाक-युद्ध का विवरण लिखा है। हमने केवल एक ही का यहां वर्णन संकेत मात्र किया है।

एक योगी जिसका नाम कल्याण (स्वामी स्फाइन्स) था, जिसे यूनानी 'कालानोस' कह कर पुकारते थे, सिकंदर उसे अपने साथ भारत से ले गया। वहां सुसा नामक स्थान पर सम्पूर्ण

यूनानी सेना के समक्ष निश्चित दिन उसने जलती चिता में अपने जराजीर्ण शरीर का परित्याग कर दिया। इस दृश्य को देख कर सिकंदर की सेना स्तंभित रह गई। योगिराज कल्याण के चेहरे पर मृत्यु का लेश मात्र भी भय नहीं था। चिता में प्रवेश से पूर्व उसने कई संगी साथियों का आलिंगन किया, परंतु सिकंदर से केवल इतना ही कहा, "मैं शीघ्र ही तुम से बेबीलोन में मिलूंगा।" इस संत ने अपने ढंग से भविष्य वाणी की थी कि वे जीवन और मरण में सदा सिकंदर के साथ ही उपस्थित रहेंगे। एक वर्ष बाद सिकंदर की मृत्यु बेबीलोन में हुई। सच्चा गुरू सदैव अपने शिष्य के संग रहता है और उसकी देखभाल करता है।

'मन राम में और हाथ काम में' नामक अध्याय सबसे बड़ा और लंबा हो गया है। इस अध्याय के पूर्व सभी शीर्षक स्थूल शरीर को निरोग और स्वस्थ रखने और बनाने पर लिखे गए थे। इस अध्याय में शब्द और सुरत का योग अर्थात आत्मा और परमात्मा का मेल और उसका सहज और सुगम रास्ता दिखाया गया है। आत्मा इस स्थूल शरीर का सम्राट है आत्मा के प्रकाश और अस्तित्व के बिना न शरीर है, न जीवन है। इसलिये आध्यात्मिक उन्नति के बिना शरीर न निरोग रह सकता है न दीर्घायु हो सकता है। भारतीय ऋषि मुनियों ने आध्यात्मिक स्वस्थता को सर्वोपरि माना है।

परमात्मा को प्राप्त करने के लिये किसी मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर अथवा गुरूद्वारे की जरूरत नहीं है। परमात्मा न हिमालय की गुफा और कन्दराओं तथा सन्यास धारण करके, न घर त्याग से मिलने वाला है। संत चाहे किसी भी देश, काल, अथवा धर्म तथा जाति में पैदा हुए हों, सभी ने परमात्मा को, मनुष्य के शरीर में, भृकुटी के पीछे, साक्षात्कार करने को कहा है। शरीर के नौ दरवाजों को बन्द करके (दो आंखे, दो कान, दो नाक, एक मुंह, एक गुदा, एक मूत्रेन्दि, के कुल नौ सुराख) दसवां द्वारा अर्थात भृकुटी के पीछे का द्वार खोल कर आत्मा अर्थात सुरत और परमात्मा अर्थात शब्द का मेल कराने का सभी संतों का उपदेश तथा आदेश है।

जैसे दूध में घी और काठ में अग्नि है लेकिन जब तक दूध को विधिपूर्वक जमाकर बिलोया न जाये घी या मक्खन नहीं बनेगा और काठ को रगड़ा न जाये, जलाया न जाये, अग्नि का काम नहीं दे सकेगा। परमात्मा हमारे शरीर में होते हुये भी बिना सतगुरू की कृपा के प्राप्त नहीं होगा। दसवें द्वार की कुंजी सतगुरू के पास है। आत्मा स्वयं चौरासी के चक्र में फंस कर अपने स्वरूप को भूल गई है। जिस पवित्र आत्मा में बारह सूर्यों का प्रकाश है वह अंधेरे में धक्के खा रही है। सभी संतो का कथन है कि परमात्मा इंसान में ऐसे रमा है जैसे फूल में खुश्बू है। फूल दिखाई देता है परंतु खुश्बू नहीं। जिनकी नासिका इन्द्रिय है वह खुश्बू को पहचान सकते हैं, ऐसे ही जिन को गुरू ज्ञान है वे सच्चे मालिक को अन्तर में पहचान सकते हैं। बिना गुरू ज्ञान के भजन ध्यान भी कोल्हू के बैल की तरह है। दिन भर चला मगर रहा वही का वही, घर में।

अंधा आदमी सुजाखे को नहीं पकड़ सकता लेकिन सुजाखा सब को पकड़ सकता है। बिना सतगुरू ज्ञान के आत्मा अर्थात जीव अंधा है। उसे तभी दिखाई पड़ेगा जब सतगुरू उसे दिव्य रोशनी प्रदान करेंगे। एक बात और साफ साफ समझ लेनी चाहिये कि सतगुरू

(जीवित) ही शब्द सुरत का मेल करायेगा। लुकमान हकीम जब जीवित थे तब इलाज करते थे, दिवंगत होने के पश्चात वे इलाज नहीं कर सकते। इसी प्रकार दिवंगत गुरू हमारा कल्याण नहीं कर सकते। वर्तमान राजा, वर्तमान गुरू, वर्तमान डाक्टर हकीम ही हमारा कल्याण अथवा भला कर सकते हैं।

कबीर साहब कहते हैं :-

जिउ तिल में तेल है, चकमक में आग।
तेरा प्रीतम तुझ में, जाग सके तो जाग॥

अर्थात जिस प्रकार तिल में तेल होता है, पत्थर के अन्दर अग्नि होती है, उसी प्रकार परमात्मा भी हमारे शरीर के अंदर मौजूद है। पलटू साहिब भी यही कहते हैं, 'साहिब साहिब क्या करे, साहिब तेरे पास।' गुरू नानक देव जी कहते हैं, 'मनजीते जगु जीतु।' कि भाई अगर तू मन को जीत लेगा, तो संसार के बनाने वाले को भी जीत लेगा। परमात्मा और आत्मा के बीच अहंकार की पक्की दीवार का पर्दा, जो मन ने डाला हुआ है। मन आत्मा को अंधेरे में कैद कराके रंगरेलियों में मौज ले रहा है। मन को बलपूर्वक संसार से निकालना ऐसा है जैसा सांप को पिटारे में बन्द करना। जब वह सांप पिटारी से बाहर निकलेगा जहरीला डंक मारेगा। हटयोग सांप को पिटारी में बन्द करने जैसा ही, मन को साधने का उपाय है। लेकिन शब्द सुरत योग मन को जीतने और आत्मा को परमात्मा स्वरूप बनाने का पक्का और सही उपाय है।

संतों ने बार बार कहा है, शरीर नश्वर है और आत्मा अमर है। शरीर का गुमान और गर्व किसलिए करते हो। कबीर साहिब फरमाते हैं :-

माटी कहे कुम्हार से, क्या रूंदे तू मोहि।
इक दिन ऐसा आयेगा, मैं रूदूंगी तोहिं॥
लकड़ी कहे लुहार को, क्या जारे तू मोहिं।
इक दिन ऐसा आयेगा, मैं जारूंगी तोहि॥

गुरू नानकदेवजी कहते हैं :-

अन्तरि ज्योति निरंतरि वाणी, साचे साहिब सिऊ लिव लाई॥

अर्थात प्रत्येक व्यक्ति की आंखों के पीछे ज्योति जग रही है। उस ज्योति के अंदर मीठी और सुरीली धुन बज रही है। जो भाग्यशाली जीवात्मा है, वे उस ज्योति के दर्शन करते हैं और उस वाणी की आवाज को पकड़ते हैं। उन का संसार से मोह निकल जाता है और परमात्मा से प्यार पैदा हो जाता है। कबीर साहब कहते हैं : 'दीवा जले अगम का बिन बाती बिन तेल' अर्थात अगम की ज्योति बिन बत्ती और तेल के निरंतर जल रही है। पलटू साहिब ने कहा है :-

उलटा कुआ गगन में तिस में जरै चिराग।
तिस में जरै चिराग बिना रोगन बिन बाती।
छह रितु बारह मास रहत जरतै दिन राती॥

आप सिर के ऊपर के भाग को उल्टा कुआं कहकर समझाते हैं। कुएं का तल नीचे की

ओर होता है हमारे सिर का तल ऊपर की ओर होता है। जब नौ द्वारों के ख्याल निकलेंगे उल्टे कुएं में ऊपर आ जायेंगे। वहां आप को ज्योति जलती नजर आएगी। वह ज्योति छःऋतु, बारह महीने, चौबीस घंटे बिना तेल और बत्ती के जलती रहती है। वास्तव में सच्चा मंदिर अथवा ठाकुर द्वारा यही है जहां कुदरती ज्योति जल रही है जिस में न घी डालने की जरूरत है न बत्ती डालने की।

सार यह है कि सर्वप्रथज्ञ आध्यात्मिक गुरू की खोज की जाए। गुरू के लक्षण सभी सन्तों ने बताए हैं। गुरू जीवित होना चाहिए दिवंगत गुरू से भवसागर पार उतरना सम्भव नहीं है। जिस प्रकार जीवित हकीम लुकमान इलाज कर सकते थे, उसी प्रकार दिवंगत लुकमान इलाज नहीं कर सकते। गुरू के प्रति समर्पण भाव, श्रद्धा, आस्था, तथा विश्वास होना निहायत जरूरी है। गुरू के बिना साधक को सफलता मिलनी सम्भव नहीं है।

मन्दिर मस्जिद, गुरूद्वारे तथा गिरजाघरों में धक्का खाने की जरूरत नहीं है। भगवान तो हमारे अन्दर है। शब्द और सुरत के योग की साधना ही सच्ची भक्ति है। मन्दिर में ज्योति जलाने और कीर्तन करने से भगवान मिलने वाला नहीं है।

शब्द की धुनकार और प्रकाश हमारे शरीर में त्रिकुटि अर्थात आंखों के पीछ मौजूद है जिसे इन आंखों से न देखा जा सकता है न इन दो कानों से तब तक सुना जा सकता है जब तक नौ द्वारों से मन को हटा न लिया जाये, जिसका जिक्र इस अध्याय में बार बार किया गया है। विश्व के सभी सन्तों ने आवागमन और कालचक्र से आत्मा को मुक्त करने के लिए यही सहज और सरल मार्ग खोजा है। इसी रास्ते से साधख अपनी अन्तिम मंजिल सचखंड पर पहुंच सकता है।

इति शुभम्

"भारत : मेरा घर" पर दैनिक पंजाब केसरी की सम्मति

"भारत : मेरा घर" के लेखक श्री गणपति सिंह प्रसिद्ध शिक्षाविद, समाज शास्त्री कुशल वक्ता और विचारक हैं और उनका अपने जीवनकाल में भारत के अनेक प्रतिष्ठित नेताओं तथा व्यक्ति यों से सम्पर्क रहा है। यह पुस्तक लेखक के भारत के उच्चकोटि के राजनेताओं, क्रान्तिकारियों, शिक्षाविदों, समाज सेवियों तथा देशभक्तों के साथ बिताए गए क्षणों के संस्मरण की गाथा है। व्यक्तियों के अध्ययन का लेखक का अद्‌भुत गुण है, इसीलिएमहान् व्यक्तियों से अनेक बहुमूल्य मोती प्राप्त किए हैं। लेखक को देशभक्तों को समीप से पढ़ने और समझने का खासा मौका मिला है। पुस्तक में श्री सुभाषचन्द्र बोस, बाबू जयप्रकाश नारायण, श्रीमती अरूणा आसफअली, पं. शिवलाल, देशभक्त डा. सुखदेव, विनोबा भावे, डा. जाकिर हुसैन, डा. राधा कृष्णन, श्री वी.वी. गिरि, जवाहरलाल नेहरू आदि अनेक महान् व्यक्तियों के जीवन पर सुन्दर शैली में प्रकाश डाला गया है, लेकिन साथ ही यह पुस्तक लेखक की आत्मकथा भी नहीं है। जहां जहां प्रासंगिक हुआ है वहीं लेखक ने अपने जीवन के कुछ अंश जोड़े हैं। भारत तथा भारत के महान् व्यक्तियों के बारे में जानने के लिए यह एक अच्छी पुस्तक है।

दिनांक १९.९.९० पंजाब केसरी दैनिक
दिनांक २१.११.९० जालंधर दिल्ली

